Published by
K. Mittra,
at The Indian Press, Ltd.,
Allahabad

Printed by
A. Bose,
at The Indian Press, Ltd.,
Benares-Branch.

भूमिका

अँगरेजी की एक उक्ति का अभिप्राय है—"उन्नति करो, अथवा नष्ट हो जाओ।" अर्थात् संसार उन्हीं को अपने अंतर्गत रखता है जो सदा दृढ़तापूर्वक आगे की ओर बढ़ते रहते हैं, और जिनमे आगे बढ़ने की शक्ति नही होती उन्हे वह काल के अर्पण कर देता है। इस बात को दूसरे शब्दो मे यो भी कह सकते हैं कि संसार मे जीवित रहने के उद्योग का नाम ही उन्नति है। यह सिद्धांत मनुष्य, जाति, देश और राष्ट्र सभी के लिये समान रूप से प्रयुक्त हो सकता है।

जिस समय अमेरिका के सप्तवर्षीय युद्ध का अंत हुआ उस समय वहाँ के सभी निवासियों की स्थिति एक विलक्षण भँवर मे पड़ गई थी। अमेरिकनों का उस स्थिति से बच निकलना तो उतना कठिन नहीं था, क्योंकि वे थोड़े बहुत शिक्षित, सभ्य और संपन्न थे, पर हबशियों का भविष्य घोर अंधकार मे था। बहुत संभव था कि वे लोग स्वतंत्र होने पर भी पहले की भाँति दास-वृत्ति मे ही अपना जीवन व्यतीत करने पर विवश होते। पर सौभाग्यवश उस देश मे और विशेषतः उनकी जाति में कतिपय ऐसे महात्माओं की सृष्टि हो गई जिन्होंने उपर्युक्त सिद्धांत को समझकर हबशी जाति को नष्ट

अथवा कम से कम मृतप्राय होने से बचा लिया। बुकर टी० वाशिंगटन भी इन्हीं महात्माओं में से एक थे।

अपने जीवन का लगभग एक तृतीयांश घोर दरिद्रता और विपत्ति में बिताकर अंत में अपनी जाति के लिये इतना विशाल कार्य्य करके उन्होंने जितनी योग्यता और प्रतिष्ठा संपादित की थी, उससे मालूम होता है कि वे अत्यंत दृढ़निश्चयी, परिश्रमी और संयमी थे और उनमें आत्मनिर्भरता तथा विवेचना-शक्ति चरम सीमा तक पहुँची हुई थी। इसके अतिरिक्त उनके साधुचरित और पवित्र-हृदय होने का भी हमारे सामने बहुत अच्छा प्रमाण है। वे अपनी जाति को शिक्षित, सभ्य, संपन्न और उन्नत तो अवश्य बनाना चाहते थे, पर अन्य अनेक सभ्य और संपन्न जातियों की भांति कृत्रिम और दूषित उपायों से नहीं। उनका दृढ़ विश्वास था और बहुत ठीक था कि आधुनिक शिक्षा-प्रणाली से होनेवाले लाभों की अपेक्षा उससे होनेवाली हानियों की संख्या भी कम नहीं है। शारीरिक परिश्रम करनेवाले लोग जितने अधिक परिश्रमी, सरल, परोपकारी, धार्मिक और जगत् का वास्तविक कल्याण करनेवाले होते हैं, उतने केवल मानसिक परिश्रम करनेवाले नहीं। यदि सच पूछिए तो संसार की सारी झंझटें और कठिनाइयाँ केवल मानसिक परिश्रम करनेवाले लोगों की ही बढ़ाई हुई हैं। यही कारण है कि वर्त्तमान जगत् आगे की अपेक्षा संपन्न और बुद्धिमान् तो अवश्य अधिक है, पर सुखी बहुत ही कम है।

वाशिंगटन की शिक्षा-प्रणाली सभी देशों के लिये और विशेषतः भारतवर्ष के लिये बहुत ही उपयोगी और आवश्यक है। उसमें ज्ञान और विद्या-दान के विचार के साथ साथ परोपकार और परमार्थ का भाव भी कूट कूटकर भरा है। यही कारण है कि उनके विद्यालय से निकले हुए लोग विद्या, वुद्धि, देश तथा समाज की सेवा, पवित्र आचरण आदि सभी बातों मे संसार के सामने सर्वोत्तम आदर्श उपस्थित करते हैं। अन्य देशों के शिक्षितों की भाँति उनमे किसी प्रकार के बुरे भावो या विचारों का लेश मात्र भी नहीं होता। प्रायः सभी विचारवान् इससे सहमत होंगे कि जनरल आर्मस्ट्रांग और प्रो० वाशिंगटन की शिक्षा-प्रणाली भारत सरीखे कृषि-प्रधान देश के लिये सर्वथैव उपयुक्त और आवश्यक है। भारत के प्रत्येक प्रांत में कम से कम एक एक वाशिंगटन और एक एक टस्केजी-विद्यालय की जरूरत है।

एक बात और है। वाशिंगटन की सामाजिक नीति भारतवासियों और विशेषतः मुसलमानों के लिये बहुत अनुकरणीय है। जिस प्रकार वाशिंगटन के कथनानुसार हबशियों और अमेरिकनों के परस्पर सुहृद्भाव रखने में ही दोनों का कल्याण है, उसी प्रकार यहाँ के हिंदुओ और मुसलमानों के विषय मे भी यही बात कही जा सकती है। पर इस कार्य के लिये सबसे अधिक शुद्ध हृदय और अपने लक्ष्य पर

दृढ़तापूर्वक ध्यान रखकर कार्य्य करने की आवश्यकता है, खाली जबानी बातें करने की नहीं।

वाशिंगटन के चरित्र से एक और सबसे अच्छी शिक्षा, जिसे हम ग्रहण कर सकते हैं, यह मिलती है कि जो मनुष्य सच्चे हृदय से और परोपकार-दृष्टि से किसी महत्त्वपूर्ण कार्य्य के साधन मे निरतर परिश्रम करता रहता है उसकी सफलता मे तनिक भी संदेह नहीं रह जाता। कभी न कभी उसका अभीष्ट अवश्य सिद्ध होता है। हमारे देशभाइयों के लिये यह बात विशेष ध्यान देने योग्य है।

अंत मे यह निवेदन कर देना आवश्यक मालूम होता है कि यह पुस्तक स्वयं महात्मा बुकर टी० वाशिंगटन के लिखे हुए "Up from slavery" नामक आत्मचरित की सहायता से लिखी गई है और यदि इसके लिखने मे मेरी ओर से किसी प्रकार की त्रुटि या भूल हो गई हो तो विज्ञ पाठक उसके लिये मुझे क्षमा करें।

विनीत

रामचंद्र वर्म्मा

विषय-सूची



उपोद्घात

दासत्व-प्रथा का संक्षिप्त इतिहास

"दासत्व यदि पाप नही है तो और कोई बात पाप नही हो सकती।"—अब्राहम लिंकन।

सत्रहवीं शताब्दी के आरंभ मे यूरोप के भिन्न भिन्न भागों से लोग आकर अमेरिका मे वसने लगे। उस समय अमेरिका बिलकुल जंगली प्रदेश था, इसलिये जंगल साफ करने तथा दूसरे कामों के लिये उन्हे मजदूरों की बड़ी आवश्यकता प्रतीत होने लगी। अमेरिका मे जमीन की कमी न थी, इसलिये यूरोपियन लोग वहाँ के जमींदार बन गए। पर उन्हे मजदूर बिलकुल न मिलते थे। उन लोगो की यह आवश्यकता पूरी करके धन कमाने के लिये पुर्तगाली लोगो ने अफ्रिका के हबशियों को जहाजो पर लादकर अमेरिका में, उन्हे गुलामों की भाँति, वेचना आरंभ किया। आगे चलकर धीरे धीरे यह व्यापार अँगरेजो के हाथ आ गया। हजारों निरपराध मनुष्य भेड़-बकरियो की तरह प्रति वर्ष बिकने लगे। नवीन देश, अमेरिका, में भावी विपत्ति का बीज उसी समय बोया गया।

इसी बीच मे सन् १७६५ से अँगरेजों और अमेरिकन उपनिवेशवालों में, कुछ करो के संबंध मे, झगड़ा आरंभ हुआ और दोनो पक्षों में भयंकर युद्ध होने के लक्षण दिखाई देने लगे। एडमंड वर्क और लार्ड चैटम (विलियम पिट) ने यह युद्ध रोकने के लिये अनेक चेष्टाएँ की, पर उन सबका कुछ भी फल न हुआ और अंत में युद्ध हुआ ही। आठ दस वरस के अंदर ही अंदर, सन् १७७५ मे युद्ध आरंभ हो गया। दूसरे वर्ष फिलाडेलफिया की काग्रेस ने स्वतंत्रता का घोषणा-पत्र (The declaration of Independence) प्रकाशित किया। इसके उपरांत दोनो पक्षों में सात आठ वर्षों तक घोर युद्ध होने के बाद सन् १७८३ मे वरसेल्स की संधि (Treaty of Versailles) के अनुसार अमेरिका के तेरह राज्यों मे स्वतंत्रता स्थापित हुई।

इस प्रकार अनेक आपत्तियाँ सहकर, धन व्यय कर और रक्त बहाकर अमेरिकन लोगों ने निश्चित कर दिया कि "मनुष्य-मात्र ईश्वर की दृष्टि मे समान रूप से स्वतंत्र है" और संसार का बड़ा भारी आंदोलन ठंढा कर दिया। पर इस संबंध मे उन लोगों का एक दोप रह गया। मनुष्य की स्वतंत्रतावाला सिद्धांत वे लोग केवल गोरे चमड़ेवालो के लिये मानते थे! हवशियों की गणना वे मनुष्यों में नहीं करते थे और न उन्हे स्वतंत्रता ही देते थे। अधिकांश अमेरिकन यही समझते थे कि हवशी हमारी संपत्ति (property) हैं और संपत्ति की भाँति ही वे

उनका उपयोग भी करते थे। कहते हैं कि अमेरिका के पहले प्रेसिडेट जार्ज वाशिंगटन के पास भी कुछ गुलाम थे।

अब अँगरेजो को दासत्व-प्रथा का अन्याय स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगा और वे इस पाप से मुक्त होने का उद्योग करने लगे। दासों का व्यापार रानी एलिजबेथ के शासन-काल से आरंभ हुआ था और तृतीय जार्ज के शासन-काल के आरंभ से वह वहुत अधिक वढ़ गया था। कहा जाता है कि इस वीच मे प्रति वर्ष पचास हजार हवशी अँगरेजी जहाजों पर दास बनाकर सवार कराए जाते थे। धीरे धीरे लोगो के कानों तक ये बाते पहुँचने लगी कि अफ्रिका मे हवशी पकड़े जाते हैं, उन्हे बकरियों और भेड़ों की तरह जहाजो मे भरकर उनके साथ घोर अन्याय किया जाता है और अटलांटिक महासागर से ले जाकर उन्हे वेस्ट-इंडीज और अमेरिका में वेचा जाता है।

इस दासत्व-प्रथा को रोकने के लिये विलियम विलवरफोर्स नामक एक अँगरेज सज्जन ने बहुत परिश्रम किया था। सन् १७८८ मे उन्होंने यह विषय पार्लमेंट के सामने भी उपस्थित किया था पर दासों का व्यापार करनेवालो के विरोध के कारण उनका वह प्रस्ताव स्वीकृत न हो सका। तो भी विलबरफोर्स निराश न हुए और बराबर उसी उद्योग में लगे रहे। कुछ समय के उपरांत सन् १८०६ मे मि० फाक्स नामक एक सज्जन के प्रस्ताव करने पर दासों का व्यापार तो बंद हो गया,

पर अँगरेजी राज्य में आठ लाख गुलाम बाकी रह गए। अंत में, सन् १८३३ मे, पार्लमेंट मे एक नियम बना और उसके अनुसार दासों को स्वतंत्रता मिली और मि० विलवरफोर्स का प्रयत्न सफल हो गया। इस काम के लिये उन्होंने लगातार पैंतालीस वर्षों तक बहुत उद्योग किया था और अंत में गुलामों की स्वतंत्रता का नियम स्वीकृत हो जाने पर, अथवा यों कहिए कि अपने जीवन का महत्त्वपूर्ण उद्देश्य पूरा करके, तीन दिन बाद, ७५ वर्ष की अवस्था मे, मि० विलबरफोर्स परलोक सिधारे! अँगरेजी राज्य मे दासत्व-प्रथा बंद करने का अधिकांश यश इन्हीं को है।

अब हम अमेरिका के गुलामो के इतिहास की ओर ध्यान देते हैं। पहले पहल टामस पेन नामक एक उदार महात्मा ने ८ मार्च सन् १७७५ को दासत्व-प्रथा के विरुद्ध अपना निबंध प्रकाशित किया। इसके महीने, सवा महीने बाद, अर्थात् १२ अप्रैल सन् १७७५ को दासत्व-प्रथा रोकने का उद्योग करनेवाली पहली सभा अमेरिका मे स्थापित हुई। टामस पेन तथा अन्य अनेक सज्जनों के उद्योग से २ नवंबर सन् १७७८ ई० को पेनसिलवेनिया नामक राज्य मे दासत्व-प्रथा बंद करने का नियम पास हुआ। उस समय उस राज्य में कोई छः हजार गुलाम थे। इसके उपरांत सन् १८८३ मे अमेरिका को स्वतत्रता मिलने पर, जार्ज वाशिंगटन, टामस जेफरसन और अलेकजेंडर हैमिलटन आदि सज्जनों ने अमे-

रिका की जो स्वतंत्र शासनपद्धति निश्चित की थी, उसकी प्रधान बातें ये थीं कि सब मनुष्य समान और स्वतंत्र हैं, सबके अधिकार समान हैं और कोई मनुष्य दूसरे के अधिकार नहीं छीन सकता। पर तो भी अमेरिका में जब तक दासत्व-प्रथा रही तब तक ये सिद्धांत पूर्णतया कार्यरूप मे परिणत नहीं हुए थे। उत्तर ओर के राज्यों ने* दासत्व-प्रथा को अन्याय समझकर अपने गुलामो को छोड़ दिया, पर दक्षिण प्रांत के राज्यों ने अपने गुलामो को नही छोड़ा। इसके सिवा दक्षिण के राज्य यह भी कहते थे कि यदि हमारे गुलाम हमारे पास न रहने दिए जायँगे तो हम लोग यूनियन (संयुक्त) राज्य मे भी सम्मिलित न होगे। वह समय बहुत नाजुक था और देश मे एकता की बहुत अधिक आवश्यकता थी। इसलिये दक्षिण के राज्यों से गुलाम छोड़ देने के लिये अधिक आग्रह न किया जा सकता था। उत्तर प्रांत के राज्यों ने समझ लिया कि कुछ वर्षों बाद दासत्व-प्रथा का अन्याय देखकर दक्षिण के राज्य स्वयं ही उसे बंद कर देंगे और इसी लिये उन्होंने उस समय इस विषय पर अधिक जोर भी न

---

*अमेरिका के नकशे पर इलिनाइस राज्य के नीचे एक आड़ी रेखा, खीचकर उसके दो भाग कर लेने पर उस रेखा के ऊपर वा उत्तर भाग में दासत्व-प्रथा नहीं थी, पर नीचे या दक्षिण भाग मे थी। उत्तर प्रांत के लोग दासत्व-प्रथा बंद करना चाहते थे पर दक्षिण प्रांत के लोगों का मत इसके विरुद्ध था।

दिया। उत्तर प्रांत के राज्यों मे जाड़ा अधिक पड़ता था, इस कारण खेती-वारी आदि के कामो के लिये उन्हें हवशियों की अपेक्षा अधिक योग्य मजदूरो की आवश्यकता थी, और इसी लिये उन्हे हवशियों की अधिक परवाह न थी। लेकिन दक्षिण प्रांत के राज्यों की दशा इसके विलकुल विपरीत थी। वहाॅ गरमी अधिक पड़ती थी और विना गुलामो की सहायता के खेती आदि का काम भली भाॅति नही हो सकता था। गरमी के दिनो मे गुलाम लोग खेतों मे एक ओवरसियर की अधीनता में सिरतोड़ परिश्रम करते थे और गोरे जमींदार घरों मे पड़े चैन करते थे। इसी लिये वे लोग दासत्व-प्रथा वंद करना नहीं चाहते थे। सन् १८०५ मे डोमिगो प्रांत के गुलामो को वहुत अधिक कष्ट हुआ था। उस समय टामस पेन ने प्रेसिडेंट जेफरसन के पास प्रार्थना की भाॅति कुछ पत्र भेजे थे, पर उनका कुछ विशेप फल नहीं हुआ। सन् १८०९ में टामस पेन का देहांत हो गया। उनकी अंत्येष्टिक्रिया के समय अपनी जाति की ओर से कृतज्ञता प्रकट करने के लिये दो हवशी भी उपस्थित थे।

यह एक ईश्वरीय नियम है कि सत्य कभी दवाया नहीं जा सकता और अंत में उसकी जय ही होती है। दासत्व-प्रथा वंद करने का उद्योग करनेवाले टामस पेन जव मर गए, तव उसी वर्ष यह प्रथा वंद करनेवाले महात्मा अब्राहम लिंकन का जन्म हुआ। लिंकन का जन्म एक वहुत ही दरिद्र के

घर मे हुआ था। जब अब्राहम बड़े और होशियार हुए तब उनकी योग्यता देखकर ओफट नामक एक व्यापारी ने उन्हे अपना सहकारी बनाकर स्प्रिंगफील्ड से अपने पास न्यू-ओरलिएंस में बुलवा लिया। न्यू-ओरलिएंस पहुँचकर अब्राहम ने दासत्व-प्रथा के भयंकर अन्याय देखे। वहाँ दासो की बिक्री के लिये एक बड़ा बाजार लगा करता था। अब्राहम ने पहले पहल अपनी आँखो से वहीं देखा कि झुंड के झुंड गुलाम बेड़ियाँ पहनाकर पंक्ति मे खड़े किए जाते हैं और जब तक उनकी पीठ से रक्त की धारा न बहने लगे तब तक उन पर कोड़ों की मार पड़ती है। दूसरे देखनेवालों पर तो इस भयंकर दृश्य का कुछ भी प्रभाव न पड़ा पर अब्राहम का हृदय इस वेदना से विदीर्ण हो गया। उस समय या उसके बाद तो उन्होने इस संबंध मे किसी से कुछ भी नहीं कहा, पर अपने मन मे वे इस विषय पर विचार अवश्य करने लगे। उस समय उनके हृदय मे दासत्व-प्रथा के संबंध मे जो काँटा चुभा वह उस प्रथा के समूल नष्ट हो जाने से पहले नहीं निकला। उन्होंने दासत्व-प्रथा बंद करने का दृढ़ संकल्प कर लिया और ईश्वर की कृपा से वह संकल्प पूरा भी हो गया।

सन् १८३० के लगभग विलियम लॉइड गैरिसन नामक एक धनवान् सज्जन ने लिबरेटर (Liberator) नामक एक समाचारपत्र निकालना आरंभ किया। उसका उद्देश्य सर्व-साधारण पर दासत्व-प्रथा के अन्याय प्रकट करना था। एक

दिन कुछ दुष्टो ने सेंट-लुइस नगर के "लिवरेटर" के दफ़्तर मे घुसकर गैरिसन तथा कुछ नौकरों को वहुत पीटा और उनमे से कुछ को मार भी डाला था।

दासत्व-प्रथा के संवंध मे इस प्रकार के अथवा इससे भी अधिक भयंकर कृत्य देख और सुनकर एच० वी० स्टो नामक एक अमेरिकन विदुषी वहुत अधिक दु:खी हुई थी। पहले तो वह कुछ दिनो तक यही समझकर चुप रही कि ज्यों ज्यों लोगों मे सुधार और ज्ञान का प्रचार होता जायगा त्यों त्यों यह अन्याय भी कम होता जायगा। पर जव सन् १८५० में भागे हुए गुलामो को पुनः पकड़वा मँगाने के लिये नियम वनाने का उद्योग होने लगा, क्रिस्तान कहलानेवाले तथा अन्य धार्म्मिक लोग भी उपदेश देने लगे कि स्वामी के अन्याय और अत्याचार से डरकर भागे हुए गुलामो के पकडने मे सहायता देना प्रत्येक नागरिक का कर्त्तव्य है, और उत्तर प्रांत के राज्यों के वड़े वड़े दयालु और शिष्ट लोग भी सभाएँ करके गुलामो को पकडने के लिये ईसाई धर्मशास्त्रों का मत संग्रह करने लगे, तव उस विदुषी को वहुत आश्चर्य और दु:ख हुआ। अव वह चुपचाप न रह सकी। लोगों को दासत्व-प्रथा संवंधी अन्यायो का वास्तविक स्वरूप दिखलाने के लिये उसने Uncle Tom's Cabin (अंकिल टामस केविन) नामक एक वहुत उत्तम पुस्तक लिखी। गुलामो को वागों में दिन भर किस प्रकार जी-तोड़ परिश्रम करना पड़ता था, जरा सी भूल हो

जाने पर ओवरसियर लोग उन्हे किस निर्दयता से चाबुक लगाकर उनसे पुनः काम कराते थे, यदि यह ओवरसियर भी हवशी ही होता तो वह भी "जात का बैरी जात" के न्यायानुसार दूसरे हवशी को कितना अधिक दुःख देता था, रात को भर पेट भोजन न देकर गुलाम लोग किस प्रकार एक छोटी कोठरी मे ठूँस दिए जाते थे, धन के लालच से पति-पत्नी, भाई-बहन और माता-पुत्र को अलग अलग मालिकों के हाथ बेचकर उनकी कैसी दुर्दशा की जाती थी, युवती दासियों का अनेक प्रकार से सतीत्व नष्ट करके उनका जीवन किस प्रकार नष्ट किया जाता था, असह्य कष्ट से डरकर भागे हुए गुलामों के पीछे इनाम के लालच से किस प्रकार शिकारी कुत्ते और दुष्ट लोग छोड़े जाते थे, हाथों और पैरो मे हथकड़ियाँ और बेडियाँ डालकर उन्हे बाजार मे बेचने के लिये ले जाने के समय किस निर्दयता से मारा जाता था और पादरी लोग इस प्रकार के अन्यायों का बाइबिल के आधार पर किस तरह समर्थन करते थे, इत्यादि इत्यादि, अनेक हृदयविदारक और रोमांचकारी दृश्यों का पूरा पूरा वर्णन बडी ही उत्तमता से इस पुस्तक में किया गया है। इस पुस्तक ने अमेरिकन लोगों में खूब उत्तेजना फैला दी और दासत्व-प्रथा के विरुद्ध बहुत कुछ लोकमत तैयार कर लिया। जिन लोगों को दासत्व-प्रथा के अन्यायों और उसके वास्तविक स्वरूप का पूरा ज्ञान प्राप्त करना हो, वे लोग यह पुस्तक अवश्य पढे।

इस प्रकार आंदोलन होने पर दो प्रवल पक्ष तैयार हो गए। एक कहता था कि दासो को स्वतंत्रता दी जाय और दूसरा कहता था कि उनकी वर्त्तमान स्थिति ही ठीक और सुखदायक है, इसलिये उन्हे स्वतंत्रता न दी जाय। इन दोनो पक्षों मे वहुत से झगड़े हुए। सन् १८५६ के वाद अमेरिका की दशा और भी नाजुक हो चली। उस समय देश को भावी आपत्ति से वचाने मे समर्थ एक महापुरुष प्रेसिडेंट चुना गया। वह महापुरुष अब्राहम लिंकन था।

अमेरिकन लोगों को अपने पहले किए हुए पापों का प्रायश्चित्त करना वहुत आवश्यक था। सन् १८६० मे दासों को स्वतंत्रता देने के लिये तथा और कारणो से दक्षिण और उत्तर राज्यों मे युद्ध (Civil War) छिड़ गया जो चार पाँच वर्षों तक जारी रहा। इस झगड़े को विना युद्ध किए ही निपटाने और अमेरिका को दो टुकड़े होने से वचाने के लिये महात्मा लिंकन ने जी-जान लडाकर परिश्रम किया, पर यह झगड़ा विना युद्ध के तै होता दिखाई न देता था। सन् १८६१ मे प्रेसिडेट लिंकन ने सेना के लिये पाँच लाख स्वयं-सेवक माँगे*। दक्षिण के राज्यो ने विद्रोह का झंडा खड़ा

---

* अमेरिका मे स्थायी सेना (Standing Army) नहीं रहती। वहाँ आवश्यकता पड़ने पर प्रेसिडेट स्वयंसेवक माँगते है, और उस समय जो लोग युद्ध करने मे समर्थ होते है वे अपने देश के झडे के नीचे आ खड़े होते हैं।

कर दिया। अप्रैल सन् १८६२ मे दासत्व-प्रथा वंद करने का नियम पास हुआ। पहले विद्रोहियों की कुछ जीत हुई और वे राजधानी वाशिंगटन नगर पर आक्रमण करने का विचार करने लगे। लिंकन ने अधिक सेना संग्रह करके विद्रोह दमन करने का यत्न किया। ग्रांट नामक एक होशियार सेनापति मिलने पर युद्ध का रंग पलटा और विद्रोहियो का वल कम होने लगा। सितंवर सन् १८६२ मे प्रेसिडेंट लिंकन ने घोषणा की कि १ जनवरी सन् १८६३ से दासत्व-प्रथा वंद कर दी जायगी। उसी वर्ष ३ दिसंवर को उन्होने यह भी घोषणा की कि जो विद्रोही हथियार रख देंगे और शांतिपूर्वक रहकर देश की रक्षा करने का वचन देंगे उन्हे क्षमा किया जायगा। १ जनवरी १८६३ को एक घोषणापत्र द्वारा दासत्व-प्रथा का अंत किया गया। उस समय तक युद्ध जारी था पर विद्रोहियों का बल बहुत घट गया था। उसी समय लिंकन का सभा-पतित्व-काल भी पूरा हो गया। मार्च सन् १८६५ में लिंकन पुनः प्रेसिडेंट चुने गए। ६ अप्रैल (सन् १८६३) को विद्रोही सेना का जनरल भी प्रेसिडेंट की शरण मे आया और विद्रोह का अंत हो गया। युद्ध मे दोनों पक्षों के लाखों आदमी काम आए, असंख्य धन नष्ट हुआ और अंत में दासत्व-प्रथा भी वंद हो गई। कोई तीस चालीस लाख मनुष्यो को स्वतंत्रता मिली। सब लोग महात्मा लिंकन का यश गाने लगे। स्वतंत्र होनेवाले हवशी तो उन्हें प्रत्यक्ष ईश्वर मानने लगे।

देश पर आया हुआ संकट दूर करके और अनेक महत्त्व के कार्य्य करके प्रेसिडेंट लिंकन दोनों पक्षों मे मेल कराने का प्रयत्न कर रहे थे। उसी अवसर पर १४ अप्रैल के दिन किसी दुष्ट ने वाशिंगटन के फोर्ड थियेटर में गोली से उन्हें मार डाला! इस प्रकार इस काम में महात्मा लिंकन का भी बलिदान हो गया!

आत्मोद्धार



१—जन्म और प्रारंभिक अवस्था

बुकर टी० वाशिंगटन का जन्म वर्जीनिया प्रांत (अमेरिका) के फ्रांकलिन परगने के किसी बाग मे एक हबशी गुलाम के घर हुआ था। उनके जन्म-स्थान वा तिथि का कोई ठीक पता नहीं मिलता, केवल इतना कहा जा सकता है कि जन्म का सन् १८५८ या ५९ होगा। उनके जीवन का आरंभ बहुत ही निराश और दु:खपूर्ण दशा मे हुआ था। अपने स्वामी के बाग मे उनकी माता जेन अपने दो पुत्रों और एक कन्या के साथ एक छोटी सी कोठरी मे रहा करती थी। जेन को उसके बाल-बच्चो सहित एक अमेरिकन जमींदार ने मोल ले लिया था। उसका पति एक गोरा था, पर वाशिंगटन के जन्म के समय वह उससे संबंध छोड़ चुका था। वह पास ही के एक गाँव में रहा करता था। पर उसने वाशिगटन या उसके भाई-बहन की शिक्षा-दीक्षा का कभी कोई प्रबंध नही किया। कदाचित् इससे पहले ही वह सिविल वार मे मारा जा चुका था।

जेन जिस कमरे मे अपने बच्चों सहित रहती थी, वह रसोईघर था, और उसी के सुपुर्द भोजन बनाने का काम भी था। उस कोठरी की जमीन मिट्टी की थी और उसमे एक छोटा सा दरवाजा था। उस कोठरी मे सब लोग बड़े दुःख से अपने दिन बिताते थे। वहाँ गरमी के दिनो मे कड़ी धूप और जाड़े मे ठंढी हवा के झकोरो के कारण सबको बहुत अधिक कष्ट होता था। जेन अपने बालकों सहित गुलामो की तरह उसी रसोईघर मे अपना जीवन बिताती थी। बहुत तड़के उठकर उसे काम में लग जाना पड़ता था और बहुत रात बीते तक भी उसे काम से छुट्टी न मिलती थी। इसलिये उसे दिन भर अपने बालकों की खबर लेने का अवकाश न मिलता था। जब तक अमेरिका मे दासत्व-प्रथा रही तब तक उन लोगों को कभी सोने के लिये बिछौना नहीं मिला। सब लोग उसी जमीन पर फटे पुराने चोथड़े बिछाकर सोया करते थे।

बाल्यावस्था मे वाशिंगटन कभी खेल-कूद का नाम भी न जानते थे, इसलिये नही कि उनकी रुचि खेल-कूद की ओर थी ही नहीं, बल्कि इसलिये कि वे एक दास-जाति के बालक थे; और जब से उन्हें कुछ कुछ ज्ञान हुआ तब से उन्हे अपना अधिकांश समय परिश्रमपूर्वक अपने स्वामी का काम करने मे ही बिताना पड़ता था। उन्हे घर मे झाड़ू देना पड़ता था, खेत मे काम करनेवालों के लिये पानी ले जाना पड़ता था और सप्ताह मे एक दिन मिल मे जाकर अनाज पिसवाना

पड़ता था। मिल मे जाने से वे बहुत घबराया करते थे। जिस मिल मे अनाज पीसा जाता था, वह उनके बाग से तीन मील दूर थी। अनाज से भरा, भारी बोरा घोड़े पर लादकर वे मिल में ले जाते और वहाँ से पिसवा लाते थे। घोड़े पर दोनों ओर अनाज का बोझ बराबर न होने के कारण प्राय: वे उस पर से बोरे सहित भूमि पर गिर पड़ते थे और जब तक कोई पथिक आकर पुन: वह बोरा घोड़े पर लाद न देता तब तक वे उसी स्थान पर बैठे बैठे रोया करते थे। इसी कारण उन्हे मिल मे पहुँचने मे बहुत विलब हो जाता था और अनाज पिसवाकर घर लौटने मे प्राय. बहुत रात बीत जाती थी। मिल और बाग के बीच मे एक बड़ा जंगल पड़ता था और उस मार्ग से बहुत ही कम लोग आते जाते थे। इसके अतिरिक्त वाशिगटन ने यह भी सुन रखा था कि सेना से भागे हुए बहुत से सैनिक इसी जंगल मे छिपे रहते हैं और किसी अकेले-दुकेले हबशी बालक को पाकर वे उसका कान काट लेते हैं। सबसे बड़ी बात यह थी कि विलंब से घर पहुँचने पर चाबुक से उनकी खबर ली जाती थी।

दासावस्था मे वाशिगटन को किसी प्रकार की स्कूल की शिक्षा न मिली थी। उनके मालिक की कन्या पढ़ने के लिये एक स्कूल मे जाया करती थी और वे प्राय: उसका बस्ता लेकर पहुँचाने के लिये उसके साथ जाया करते थे। बहुत से बालक और बालिकाओं को पढ़ते लिखते देखकर उनके

चित्त पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा था, और उसी समय से वे स्कूल मे बैठकर पढ़ने को स्वर्ग-सुख समझने लगे थे।

उन्हीं दिनों दासों को मुक्त करने के लिये अमेरिका मे खूब आंदोलन हो रहा था। एक दिन प्रातःकाल जेन ने अपने बालकों सहित घुटने टेककर ईश्वर से प्रार्थना की थी—"हे ईश्वर! लिंकन और उनकी सेना विजयी हो और वह दिन भी आवे जब कि मैं अपने बालकों सहित मुक्त होऊँ।" उस समय वाशिंगटन की अवस्था बहुत थोड़ी थी और वे उस प्रार्थना का पूरा पूरा अर्थ न समझ सके थे। जब दासों को मुक्त करने के लिये बहुत अधिक आंदोलन होने लगा तब दक्षिण अमेरिका के गुलामो का ध्यान भी उस ओर गया। 'सिविल वार' से पहले और उसके आरंभ होने पर वाशिंगटन अपनी माता तथा दूसरे गुलामों से प्रायः उसका समाचार सुना करते थे। इससे मालूम होता है कि उस समय उन लोगों को अपनी दशा का बहुत कुछ ज्ञान हो गया था।

वाशिंगटन जिस बाग मे रहते थे, वह यद्यपि शहर और रेल के स्टेशन से बहुत दूर था, पर तो भी वहाँ के गुलामो को युद्ध छिड़ने और लिंकन के सभापति होने के संबंध मे बहुत सी बातें मालूम थीं। जिस समय उत्तर और दक्षिण अमेरिका मे युद्ध आरंभ हुआ उस समय उस बाग के सभी गुलाम भली भाँति जानते थे कि इस युद्ध के अनेक कारणों मे से उनके मुक्त होने का प्रश्न ही मुख्य है। उन दिनो समस्त देश के

गुलाम यही मनाते थे कि उत्तर अमेरिका की सेना की जीत हो। प्रायः बड़े बड़े युद्धों का परिणाम गोरो की अपेक्षा गुलामों को पहले मालूम हो जाया करता था। जो गुलाम अपने मालिक की डाक लेने के लिये डाकघर जाया करते थे, वे वहीं से सब समाचार सुन आते और तुरंत अपने स्वजातियों को सुना देते थे। इस प्रकार सब समाचार गोरों की अपेक्षा गुलामो को पहले मिल जाया करते थे।

उन दिनो गुलामो के भोजन का कभी कोई ठोक प्रबंध न होता था। वाशिगटन और उनके घरवालों को कभी केवल थोड़ो सी रोटी, कभी केवल मांस, कभी केवल दूध और कभी केवल आलू ही मिला करता था। कार्य्य की अधिकता के कारण उन लोगो को कभी एक साथ बैठकर ईश्वराराधन या भोजन करने का भी अवकाश न मिलता था। भोजन के लिये उन लोगो के पास कोई पात्र भी न होता था, सबको हाथ पर भोजन करना पड़ता था। कुछ बड़े होने पर वाशिगटन को भोजन के समय अपने मालिक के घर जाकर पंखे से टेबुल पर की मक्खियाँ हाँकनी पड़ती थी। वहाँ वे प्रायः युद्ध और गुलामो की मुक्ति के संबंध मे लोगों की बातचीत सुना करते थे। एक दिन उन्होंने गृहस्वामिनी को जिंजर-केक्र नामक पक्वान्न खाते देखा था। उस समय उन्होने निश्चित किया था कि मैं भी जिस दिन स्वतंत्र होकर इसी प्रकार जिंजर-केक खाऊँगा, उस दिन अपने आपको धन्य समझूँगा।

जब युद्ध होते बहुत दिन हो गए तब अधिकांश गोरों को अन्न के लिये बहुत कठिनता होने लगी। गुलाम लोग केवल बाजरे आदि मोटे अन्न की रोटी और मांस खाते थे और ये चीजें बाग मे ही अधिकता से होती थीं। पर गोरों का काम बिना चीनी, चाय और कहवे के न चलता था। ये चीजें गाँव मे नहीं होती थी और युद्ध के कारण उनका बाहर से आना भी बहुत कठिन हो गया था। इसलिये गुलामो की अपेक्षा गोरो को बहुत कष्ट होने लगा। उन दिनों गुलामो के प्रति गोरों का द्वेष बहुत बढ़ गया था। गोरो के अधिकांश संबंधी युद्ध मे मारे जाते थे और उन पर अनेक प्रकार की विपत्तियाँ आती थीं। एक बार वाशिंगटन के मालिकों मे से एक युवक मारा गया और दो बहुत अधिक घायल होकर घर लौटे। वाशिंगटन के मालिक औरो की अपेक्षा कुछ अधिक दयालु और सज्जन थे, इसलिये उनके सभी गुलामो की उनके साथ बहुत सहानुभूति थी। सबने मिलकर अपने दोनो घायल मालिको की संबंधियों से बढ़कर सेवा-शुश्रूषा की और उनके प्रति बहुत सहानुभूति दिखलाई। घर के पुरुष जब युद्ध मे जाते तो गुलाम उनके घर-बार और स्त्री बच्चो की बड़ा सावधानी से रक्षा करते थे। यद्यपि बहुत से गोरे अपने गुलामो के साथ बहुत ही अनुचित व्यवहार करते थे, पर तो भी गुलाम उनके साथ कभी किसी प्रकार का विश्वासघात न करते थे। यद्यपि गुलामों के साथ गोरे द्वेष रखते थे, पर तो भी गुलाम सदा

स्वामिभक्त बने रहते थे। कभी कभी तो यहाँ तक हुआ कि युद्ध आरंभ होने पर गुलाम अपने पुराने मालिकों के अनाथ बाल-बच्चों तक का पालन करते थे। अनेक अवसरों पर उन लोगों ने अपने मालिको को कष्ट से बचाने के लिये चंदा करके बहुत सा धन एकत्र किया था और अनेक प्रकार से उनकी सहायता की थी। एक बार एक मालिक के मर जाने पर उसके लडके को मदिरा पीने का दुर्व्यसन लग गया और उसी के पीछे उसने अपनी सारी संपत्ति नष्ट कर दी थी। उसकी दरिद्रावस्था मे बहुत दिनों तक उसके गुलाम अपने पास से उसके भोजन आदि का प्रबंध करते रहे थे और कभी उसे कष्ट न होने देते थे।

दासत्व-प्रथा उठने से दो तीन वर्ष पूर्व एक हबशी ने अपने स्वामी से इस शर्त पर मुक्ति पाई थी कि वह कुछ निश्चित धन प्रति वर्ष कई किस्तो मे अपने स्वामी को देकर अपना मूल्य पूरा कर देगा। स्वामी ने भी यह बात मानकर उसे मुक्त कर दिया और वह ओवियो राज्य मे, जहाँ अधिक मजदूरी मिलती थी, चला गया। जिस समय देश से दासत्व-प्रथा उठा दी गई उस समय वह अपने स्वामी का तीन सौ डालर का देनदार था। यद्यपि नियमानुसार अब उसे अपने मालिक का ऋण चुकाने की कोई आवश्यकता न थी पर तो भी उस हबशी ने स्वय अपने स्वामी के पास जाकर वह धन व्याज सहित उसे लौटा दिया। उसने एक बार वाशिंगटन से

ओवियो राज्य मे मिलने पर कहा था—'यद्यपि नियमानुसार अब मैं अपने स्वामी का देनदार नहीं हूँ पर तो भी मैंने उनको वचन दिया है, और मैं अपने वचन से कभी फिर नहीं सकता'। अर्थात् विना अपने स्वामी का ऋण चुकाए उसने अपनी स्वतंत्रता का उपयोग नहीं किया। हमारे जो भारतवासी भाई ऋण चुकाने से वचने के लिये ३ वर्षवाली मुद्दत विता देना चाहते हैं, उन्हें इस उदाहरण से शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए।

वाशिंगटन ज्यों ज्यों बड़े होते गए त्यों त्यो वे समझते गए कि यद्यपि हवशियो के साथ निर्दयता का व्यवहार होता है पर फिर भी दासत्व-प्रथा का फल गोरो और कालो को समान रूप से ही मिल रहा है। सब लोग परिश्रम करने को वहुत ही तुच्छ और अवनति का लक्षण समझते थे। गोरे और काले दोनों ही, जहाँ तक हो सकता था, काम करने से जी चुराते थे। हवशियों को तो विवश होकर काम धंधा करना ही पड़ता था, पर गोरे एकदम निरुद्यमी और आलसी हो गए थे। वाशिंगटन के मालिक के कई लड़के और लड़कियाँ थीं; पर उनमें से एक भी किसी प्रकार के शिल्प या व्यापार के योग्य न था। लड़कियाँ न तो कुछ लिखती पढ़ती थीं, न भोजन आदि बनाना या गृहस्थी के और काम करना जानती थी। सब कार्य्य अशिक्षित गुलामो पर ही छोड़ दिए जाते थे, इसलिये गृहस्थी की वहुत ही दुर्दशा होती थी। यद्यपि वहाँ आवश्यक चीजों की कमी नहीं थी पर तो भी

अव्यवस्था और कुप्रबंध के कारण गृहस्थी का सुख किसी को न मिलता था। दासत्व-प्रथा उठ जाने पर, शिक्षा और स्वामित्व के अधिकार को छोड़कर शेष, प्रायः सभी बातों मे गोरे और हवशी दोनों समान ही थे। गोरे लोग किसी प्रकार का कारबार नहीं कर सकते थे और किसी प्रकार का परिश्रम करने से अपनी मानहानि समझते थे। हाँ, हबशियों ने भले ही कुछ छोटे मोटे काम सीख लिए थे और परिश्रम करने मे उन्हे किसी प्रकार की लज्जा भी न होती थी।

होते होते युद्ध समाप्त हो गया और हबशियों को स्वतंत्रता मिली। सभी छोटे बड़े हवशियों के लिये वह बड़े महत्त्व का दिन था। सब लोग बड़ी उत्सुकता से उस दिन की प्रतीक्षा कर रहे थे। कई मास पहले वे सुना करते थे कि अब हमें स्वतंत्रता मिलेगी। डाक और तारों का ताँता सा लग गया था। समाचार बड़ी शीघ्रता से एक गाँव से दूसरे गाँव तक पहुँचाए जाते थे। धनवान् गोरों ने उत्तरीय अमेरिका की सेना के आक्रमण के भय से चाँदी आदि के बहुमूल्य पदार्थ घरों में से निकालकर जंगलों में गाड़ रखे थे और उन पर विश्वसनीय दासों का पहरा नियुक्त कर दिया था। वे लोग भी उत्तरीय अमेरिका की सेना के सिपाहियों को, इन सब चीजों को छोड़कर, रसद और कपड़े-लत्ते आदि से पूरी सहायता देते थे। गुलाम लोग अपनी झोपड़ियों मे रात रात भर प्रसन्नता के गीत गाया करते थे। ज्यो ज्यों यह स्मरणीय दिन

निकट आने लगा त्यों त्यों ऐसे गानों की अधिकता होने लगी। उनके अधिकांश गीतों में प्रायः स्वतंत्रता का ही वर्णन होता था। इससे पहले भी वे लोग वही गीत गाया करते थे, पर उस समय उन्हे यह मालूम होता था कि मानो इन गीतों का इस संसार से नहीं बल्कि केवल परलोक से ही संबंध है। पर अब धीरे धीरे उन्हे मालूम होने लगा कि उन गीतों मे की स्वतंत्रता इसी संसार और इसी शरीर की स्वतंत्रता है। उस स्मरणीय दिन से पहलेवाली रात को सब गुलामो से कह दिया गया था कि कल प्रातःकाल मालिको के घरो मे कोई विलक्षण चमत्कार होगा। उस रात को किसी को निद्रा न आई। दूसरे दिन प्रात.काल ही सब छोटे बड़े हबशी अपने मालिकों के घर बुलाए गए। जेन भी अपने पुत्रों और कन्या को साथ लेकर अपने मालिक के घर गई। उस समय घर के सब लोग कुछ चिंतित दिखाई पड़ते थे, पर उनकी चिंता में खिन्नता ही अधिक थी द्वेष नहीं था। उस समय वाशिंगटन के मन मे यही धारणा हुई थी कि वे लोग अपने दासो के प्रेम और ममत्व के कारण ही अधिक चिंतित थे। उस दिन प्रातः-काल एक विदेशी सज्जन ने, जो कदाचित् संयुक्त राज्य के कोई कर्म्मचारी थे, एक छोटी सी वक्तृता दी और दासत्व-प्रथा के उठा देने का घोषणापत्र पढ़ सुनाया। तदुपरांत यह कहा गया कि अब सब छोटे बड़े हबशी स्वतंत्र हैं और जहाँ चाहे वहाँ जा सकते हैं। जेन की माता ने अपने पास खड़े हुए बालकों

का चुंबन किया, उस समय उसकी आँखों से प्रेमाश्रु बह रहे थे। उसने अपने बालकों को सब बातों का अर्थ भली भाँति समझा दिया और कहा कि हम सब लोग बहुत दिनों से ईश्वर से यह दिन दिखलाने की प्रार्थना कर रहे थे और मुझे यह आशा नहीं थी कि अपने जीवन मे मैं यह दिन देखूँगी।

थोड़ी देर तक सब लोगो को बहुत आनंद हुआ और वे नाचते कूदते रहे। पर अपने पुराने मालिकों पर उन्हे कुछ दया सी आती थी, इसलिये उनका वह आनंद अधिक समय तक न रहा। अपनी अपनी झोंपड़ियों मे आने पर उन्हें अनेक प्रकार की चिताओ ने आ घेरा। अब उन्हे सबसे अधिक अपने और अपने बाल-बच्चो के भरण पोषण की चिता हुई। उनकी दशा ठीक ऐसे बालक के समान हो गई जिसे बिलकुल असहाय बनाकर घर से बाहर किसी जंगल में छोड़ दिया गया हो। जिस प्रश्न पर अँगरेज लोग कई शताब्दियों से विचार कर रहे थे, वह प्रश्न थोड़ी ही देर मे मानो हबशियों पर छोड़ दिया गया। वह प्रश्न गृहस्थी, जीविका और शिक्षा आदि का था। ऐसी दशा मे यदि थोड़ी ही देर मे हबशियो की झोपड़ियों मे नाचना गाना बंद हो गया और उदासीनता छा गई तो इसमें आश्चर्य्य की कोई बात नहीं है। उस समय बहुत से लोगों को यह स्वतंत्रता अपने अनुमान से कहीं अधिक भारी मालूम होने लगी। उनमे से बहुत से लोग सत्तर अस्सी वर्ष की अवस्था तक पहुँच चुके थे और अपने जीवन

का अधिकांश समाप्त कर चुके थे। यद्यपि उनके लिये रहने के स्थान की कमी न थी पर तो भी विदेश और विदेशियों में जीविका का प्रबंध करना उनके लिये कठिन था। अपने पुराने स्वामियों और उनके बाल बच्चो के प्रति उनकी विलक्षण निष्ठा थी। कुछ लोगों ने अपने मालिकों के साथ पचास पचास वर्ष विताए थे, और इसलिये उन्हे छोड़कर उनसे अलग होना कुछ सहज काम न था। धीरे धीरे बूढ़े गुलाम एक एक करके अपने अपने मालिकों के घर यह पूछने के लिये जाने लगे कि अब हम लोग भविष्य मे क्या करें ?

२—बाल्यावस्था

स्वतंत्रता प्राप्त करने पर समस्त दक्षिण अमेरिका के गुलामों ने एकमत होकर अपने संबंध मे दो मुख्य बातें निश्चित कीं। एक तो यह कि सब लोगों को अपना अपना नाम बदल लेना चाहिए और दूसरे यह कि अपनी स्वतंत्रता के चिह्न-स्वरूप, यदि अधिक दिनो के लिये नहीं तो, कम से कम एक सप्ताह के लिये अपना निवास-स्थान अवश्य बदल देना चाहिए। उस समय तक गुलाम लोग अपने अपने मालिकों के उपनाम पर ही अपने नाम रखते थे, पर अब उन्होने तुरंत अपना अपना नाम बदल डाला। स्वतंत्रता का यह मानो पहला चिह्न था। जिस समय दासत्व-प्रथा प्रचलित थी उस

समय लोग गुलामों को जान अथवा सुसन कहकर पुकारा करते थे। यदि उसके स्वामी का नाम हेचर या इसी प्रकार और कुछ होता तो लोग उसे कभी कभी जान हेचर या हेचर्स जान पुकारा करते थे। पर जब उन लोगों मे यह विचार उत्पन्न हुआ कि एक स्वतंत्र मनुष्य के लिये जान हेचर या हेचर्स जान आदि नाम उपयुक्त नहीं हैं, तब उन्होने अपना नाम बदलकर जान एस० लिंकन, जान एस० शर्म्मन आदि रख लिया। गुलामों के उपनाम के पहले एस० शब्द निरर्थक ही था और हबशियों ने उसे अपनी पदवी की भाँति अपने नामो के साथ लगा लिया था।

ऊपर कहे अनुसार बहुत से हबशियों ने स्वतंत्रता का उपभोग करने के उद्देश्य से थोड़े दिनों के लिये अपना पुराना निवासस्थान छोड़ दिया। कुछ दिनों तक वाहर रहकर बहुत से गुलाम अपने पुराने निवासस्थान पर फिर लौट आए और अपने पहले के मालिकों से कुछ नई शर्तें करके पुनः उन्ही के पास रहने लगे। वाशिंगटन के बड़े भाई का बाप और वाशिंगटन का सौतेला बाप एक दूसरे मालिक का गुलाम था। वह वाशिंगटन और उसकी माता के यहाँ वहुत ही कम आता था। जिस समय युद्ध हो रहा था, उस समय वह उत्तर अमेरिका के पश्चिमी वर्जीनिया नामक प्रदेश मे चला गया और वहीं के एक नए राज्य में बस गया। दासत्व-प्रथा का अंत हो जाने पर उसने वाशिंगटन की माता को अपने पास बुलवा भेजा था। उस समय वर्जीनिया और पश्चिमी वर्जी-

निया के बीच का पहाड़ा रास्ता बहुत ही दुर्गम और कठिन था। जेन को अपने बाल-बच्चों सहित सैकड़ों मील पैदल चलना पड़ा था। इससे पहले उन लोगों को कभी अपने निवास-स्थान से अधिक दूर न जाना पड़ा था, इसलिये यह लंबा प्रवास उन लोगों को बहुत महत्त्व का मालूम पड़ा। अपने पुराने मालिकों और परिचितों को छोड़ते समय भी उन्हें बहुत दुःख हुआ था। बहुत दूर विदेश में रहकर भी उन्होंने अपने पुराने मालिकों के साथ बराबर पत्र व्यवहार जारी रखा था।

मार्ग मे अनेक प्रकार के कष्ट सहते हुए ये लोग माल्डन नामक गॉव मे पहुॅचे। उन दिनों उस प्रांत में नमक की बहुत सी खाने थीं। वाशिंगटन का सौतेला बाप भी नमक की एक भट्ठी मे काम करता था। उसने पहले से ही अपनी स्त्री और बाल-बच्चों के लिये एक छोटी सी कोठरी ले रखी थी। वह कोठरी भी एक गंदे और निकृष्ट स्थान मे थी। उसके आस-पास बहुत से हबशियों और गरीब गोरों की झोपड़ियाँ थी। उनके पड़ोसी प्रायः मदिरा पीकर लड़ाइयाँ, झगड़े तथा अनेक प्रकार के अत्याचार आदि किया करते थे। उस गॉव के प्रायः सभी लोगों का किसी न किसी रूप मे नमक की खानों से संबंध था। वाशिंगटन तथा उनके बड़े भाई जान दोनो को उनके पिता ने नमक की भट्ठी मे किसी काम पर लगा दिया। वाशिंगटन को वहाँ नित्य प्रातःकाल चार बजे से अपने काम मे लग जाना पड़ता था।

उसी स्थान पर वाशिंगटन ने पहले पहल लिखना पढ़ना सीखा। प्रत्येक नमक भरनेवाले को अपने पीपे पर एक निश्चित अंक लिखना पड़ता था। वाशिंगटन के सौतेले पिता का अंक १८ था। नित्य काम बंद होने के समय एक कर्म्म-चारी आकर उनके सब पीपों पर १८ का अंक लिख जाता था। वहीं वाशिंगटन ने १८ का अंक पहचानना सीखा। १८ के सिवा वे न तो और कोई अंक लिख ही सकते थे और न पहचान ही सकते थे। उसी समय से वाशिंगटन की पढ़ने लिखने की इच्छा बहुत अधिक बढ़ी। वे चाहते थे कि अधिक नहीं तो कम से कम पुस्तके और समाचारपत्र पढ़ने की योग्यता मुझमे अवश्य आ जाय। एक दिन उन्होंने अपनी माता से किसी प्रकार एक पुस्तक ला देने की भी प्रार्थना की। तदनुसार उसने उन्हे स्पेलिंगवुक नामक एक पुस्तक ला दी जिसमे केवल Aa Ba Ca Da (आ० वा० सा० डा०) आदि अर्थरहित शब्द थे। पुस्तक तो मिल गई पर कोई पढानेवाला उन्हे दिखाई न दिया। वहॉ रहनेवाले कालों मे से कोई पढ़ना लिखना न जानता था और गोरो के पास जाने मे वे बहुत घबराते थे। इसलिये उन्होने बड़ी कठिनता से किसी न किसी प्रकार कुछ सप्ताहों मे वह पुस्तक स्वयं ही पढ़ डाली। पढ़ने मे उन्हे थोड़ी सी सहायता अपनी माता से अवश्य मिला करती थी। यद्यपि जेन स्वयं कुछ पढ़ी लिखी न थी पर तो भी वह इतना अवश्य चाहती थी कि मेरे बालक खूब पढ़ लिख-

कर अच्छे विद्वान् हो। इसी बीच मे ओहियो राज्य से एक पढ़ा लिखा हवशी लड़का उनमें आ गया। जब माल्डन के निवासियो को यह बात मालूम हुई तब वे नित्य संध्या समय उसके पास एक समाचारपत्र लेकर जाने और उसमें दिया हुआ सब वृत्तांत उससे सुनने लगे। उस समय वहाँ पुरुषों, स्त्रियों और बालको की खूब भीड़ हुआ करती थी। वाशिंगटन की पढ़ने लिखने की इच्छा अब और भी बढ़ गई और वे उस बालक के बराबर होने की इच्छा करने लगे।

उसी अवसर पर माल्डन के निवासियो ने अपने गाँव में हवशी बालकों के लिये एक छोटी पाठशाला खोलने का विचार किया। वर्जीनिया के उस भाग में हवशी बालको के लिये खुलनेवाली वह पहली ही पाठशाला थी, इसलिये चारो ओर खूब आंदोलन हुआ। पर सबसे बड़ी कठिनता वहाँ शिक्षक की थी। पहले समाचारपत्र पढ़कर सुनानेवाले उक्त बालक को शिक्षक बनाने का विचार हुआ, पर उसकी अवस्था बहुत ही कम थी, इसलिये वह विचार छोड़ देना पड़ा। उसी अवसर पर उस गाँव मे एक और शिक्षित हवशी आ गया। वह पहले कुछ दिनों तक सेना मे काम कर चुका था। इसलिये उस पाठशाला का पहला अध्यापक वही नियत हुआ। गाँव के सब लोगो ने उस शिक्षक को प्रतिमास कुछ निश्चित धन और एक एक दिन भोजन देना स्वीकृत किया। इससे उस शिक्षक को भी बहुत सुभीता हुआ। शिक्षक पारी पारी

से लोगो के घर जाकर पढ़ाता और उस दिन वहीं भोजन करता था। वाशिंगटन अपने यहाँ की पारी के दिन की बड़ी उत्सुकता से प्रतीक्षा किया करते थे।

किसी जाति या समाज के सब लोगों का मिलकर शिक्षा की ओर ध्यान देना ही उसकी उन्नति मे मूल सहायक होता है। माल्डन के हबशियों ने शिक्षा के प्रचार में जितना उत्साह दिखलाया था, उसका ठीक ठीक अनुमान वही लोग कर सकते हैं जो उस समय वहाँ उपस्थित थे। वाशिंगटन अपने भाई सहित नित्य पाठशाला में जाकर पढ़ने लगे। युवको और अधिक अवस्थावालो को भी उस समय पाठशाला मे जाकर पढ़ने मे किसी प्रकार का संकोच न होता था। शिक्षा का चाव लोगों के मन मे इतना अधिक बढ़ा कि लोग रात को भी पाठशाला में जाकर पढ़ने लगे। बूढ़े बूढे लोग भी यही चाहते थे कि हम मरने से पूर्व बाइबिल पढ़ने के योग्य हो जायँ। पुरुषों के सिवा बड़ो बड़ो स्त्रियाँ भी पढ़ने के लिये पाठशाला मे जाने लगीं। इसके अतिरिक्त एक और पाठशाला भी स्थापित हुई जो केवल रविवार को खुलती थी। ये तीनों पाठशालाएँ विद्यार्थियो से खूब भरी हुई होती थीं और उनमे स्थान के अभाव के कारण बहुत से विद्यार्थियों को योंही लौट जाना पड़ता था।

लेकिन इतना होने पर भी वाशिंगटन की शिक्षा प्राप्त करने की इच्छा पूरी न हो सकी। उसका सौतेला बाप यह नहीं चाहता था कि वे भट्ठी का काम छोड़कर पढ़ने के लिये पाठ-

शाला में जायँ। इससे उनकी सब आशाओं पर पानी फिर गया। सवेरे और संध्या समय लोगों को पाठशाला जाते और वहाँ से आते देखकर उनका मन और भी उद्विग्न होता था। लेकिन उनकी विद्याध्ययन की इच्छा बहुत ही प्रबल थी, इसलिये उन्होंने किसी न किसी प्रकार लिखने पढ़ने का दृढ़ संकल्प कर लिया। स्पेलिंगबुक के पाठ वे जल्दी जल्दी याद करने लगे। इस काम में उनकी माता की भी बहुत सहानुभूति और सहायता थी, इसलिये थोड़े ही दिनों में उन्होंने रात के समय शिक्षक से पढ़ने का प्रबंध कर लिया। उनकी रात की पढ़ाई दूसरे बालकों की दिन की पढ़ाई की अपेक्षा कहीं अच्छी होने लगी। अपने निज के अनुभव के कारण उन्हे रात्रि-पाठशाला की उपयोगिता पर अधिक विश्वास हो गया और इसी लिये आगे चलकर उन्होंने हैंपटन और टस्केजी से रात्रि-पाठशाला से ही अधिक संबंध रखा। पर उस समय लड़क-बुद्धि के कारण वे दिन की पाठशाला मे जाना चाहते थे। इसके लिये जहाँ तक हो सका वे बराबर उद्योग करते गए और अंत मे उन्हे कुछ महीनो के लिये दिन की पाठशाला मे जाने की आज्ञा भी मिल ही गई। वे बहुत तड़के उठकर भट्ठी मे जाकर नौ बजे तक काम करते और दिन भर पाठशाला मे पढ़कर संध्या को दो घंटे काम करने के लिये फिर भट्ठी मे लौट आते।

भट्ठी से पाठशाला कुछ दूर थी और नौ बजे खुलती थी। इसलिये जब वे काम से छुट्टी पाकर वहाँ पहुँचते तब उस

समय तक दूसरे बालकों का बहुत सा पाठ हो जाया करता था। यह कठिनता दूर करने के लिये उन्होंने एक ऐसा उपाय किया था, जिसके लिये बहुत से लोग उन्हे दोपी ठहरा सकते हैं। वे नित्य प्रातःकाल आफिस की घड़ी को आध घंटा तेज कर देते थे। यद्यपि उसी घडी के अनुसार भट्ठी के सैकड़ों आदमियो को आध घंटे पहले छुट्टी हो जाती थी, पर विद्या-प्रेमी वाशिगटन ठीक समय पर पाठशाला मे पहुँच जाते थे। बालक वाशिगटन इस कार्रवाई से किसी को कुछ हानि नही पहुँचाना चाहते थे. केवल ठीक समय पर पाठशाला मे पहुँचना ही उनका मुख्य उद्देश्य था। उनकी निष्ठा सत्य पर बहुत अधिक थी इसी लिये उन्होंने आत्मचरित मे इस घटना का स्पष्ट उल्लेख कर दिया है। जब भट्ठी के मैनेजर को मालूम हुआ कि घडी रोज आध घंटा तेज रहती है तब उसने उसे एक बक्स मे रखकर उस पर ताला लगा दिया।

पाठशाला मे और लड़के तो टोपी पहनकर जाते थे पर वाशिंगटन के पास कोई टोपी ही न थी। उस समय तक वे यह भी न जानते थे कि टोपी पहनने की भी कोई आवश्यकता हुआ करती है। उन्होंने अपनी माता से बाजार से कोई पुरानी टोपी खरीदकर ला देने के लिये कहा, पर धनाभाव के कारण वह उनकी यह इच्छा पूरी न कर सकी। इसलिये विवश होकर उसने एक साधारण कपड़े को काटकर उसकी एक टोपी बना दी और वाशिंगटन ने बड़े अभिमान से

अपने जीवन मे पहली वार वह टोपी पहनी। पर उस टोपी से उन्हे जो शिक्षा मिली उसे वे मरते समय तक नहीं भूले, और सदा समय पड़ने पर वे दूसरों को वही शिक्षा देते रहे। टोपी खरीदने के लिये उनकी माता के पास धन नहीं था और उसके लिये किसी से उधार माँगना उसने उचित न समझा। उस समय जो बालक बाजार की वनी बढिया टोपी पहनते थे और वाशिंगटन की टोपी की हँसी उड़ाते थे, उनमें से बहुत से लोग वाशिंगटन के देखते ही देखते जेल चले गए और बहुत से इतने दरिद्र हो गए कि उनमे किसी प्रकार की टोपी खरीदने की सामर्थ्य ही न रह गई।

बाल्यावस्था मे वाशिंगटन को लोग बुकर कहा करते थे। जव पाठशाला मे हाजिरी के समय उन्होने दूसरे बालकों के दो दो नाम सुने तब उन्हे भी अपना दोहरा नाम रखने की आवश्यकता मालूम हुई। जब रजिस्टर मे लिखने के समय शिक्षक ने उनका नाम पूछा तो उन्होंने बड़े शांत भाव से कह दिया—'बुकर वाशिंगटन'। यद्यपि इस नाम की कल्पना उन्होने स्वयं ही उसी समय की थी, पर उन्हें ऐसा मालूम होता था कि मानो आरंभ से ही उनका यही नाम रखा गया हो। कुछ समय के उपरांत उन्हे मालूम हुआ कि उनकी माता ने उनका नाम 'बुकर टेलिफेरो' रखा था, इसलिये उन्होने फिर से अपना नाम 'बुकर टेलिफेरो वाशिंगटन' रखा।

दिन मे पाठशाला जाने के लिये उन्हें बहुत ही थोड़ा समय मिलता था और वे ठीक समय पर पहुँच भी न सकते थे, इसलिये कुछ ही दिनो में उनका दिन के समय पाठशाला जाना बंद हो गया और वे फिर दिन भर भट्ठी में काम करने लगे। कभी कभी उन्हे रात को पढ़ाने के लिये कोई शिक्षक मिल जाता और वे उसी से थोड़ा बहुत पढ़ लेते। पर यदि अभाग्यवश वह शिक्षक उन्हीं के समान कम पढ़ा लिखा होता तो वे बहुत दुःखित होते। कभी कभी उन्हें अपना पाठ सुनाने के लिये रात के समय कई कई मील पैदल जाना पड़ता था। यद्यपि उनके दिन बड़ी ही निराशा और बुरी अवस्था में बीतते थे, पर तो भी युवावस्था में सदा उनका एक दृढ़ निश्चय और उद्देश्य बना रहा, और वह निश्चय या उद्देश्य शिक्षा प्राप्त करना था।

नमक की भट्ठी मे कुछ दिनों तक काम करने के बाद उन्हे कोयले की खान मे काम मिला। इस काम से वे बहुत घबराया करते थे। कोयले की खान मे काम करने से सारा शरीर बिलकुल काला हो जाता था और दिन भर काम करने के बाद संध्या समय उनके लिये नहाना बहुत कठिन होता था। दूसरा कारण उनके घबराने का यह था कि खान के मुहाने से काम करने के स्थान तक आने के लिये उन्हे एक मील घोर अंधकार में चलना पड़ता था। खान के अंदर बहुत सी शाखाएँ थीं इसलिये वे प्रायः अपना मार्ग भूल जाया करते

थे। यदि रास्ते में कभी उनके हाथ की बत्ती बुझ जाती और उनके पास दियासलाई न होती तो उन्हें घंटों भटकना पड़ता। इसके अतिरिक्त कोयले की खान में और भी अनेक प्रकार की विपत्तियों की संभावना थी। उस समय बहुत ही छोटी अवस्था के बालकों से खानों में काम लिया जाता था पर उनको पढ़ाने लिखाने का कुछ भी प्रबंध न होता था। इसमें सबसे बड़ा दोष यह था कि खान में काम करनेवालों की शारीरिक और मानसिक अवस्था बहुत बिगड़ जाती थी और बड़े होने पर वे लोग किसी दूसरे काम के योग्य न रह जाते थे।

बाल्यावस्था में वाशिंगटन के मन में प्रायः इस प्रकार के विचार उठते थे कि यदि मेरा जन्म किसी उच्च कुल के गोरे अमेरिकन के घर में हुआ होता तो मुझे कांग्रेस के सभासद, गवर्नर, बिशप, या प्रेसिडेंट होने में किसी प्रकार की कठिनता न होती और मैं बड़े सुख से रहकर उन्नति कर सकता। पर वास्तव में उनके ये विचार ठीक न थे। यदि उनका जन्म इन्हीं विचारों के अनुसार किसी उच्च कुल के गोरे के घर हुआ होता तो बहुत संभव था कि वे अपनी कुलीनता के घमंड में ही रह जाते और इतनी उन्नत अवस्था तक न पहुँच सकते। ज्यों ज्यों उनकी अवस्था बढ़ती गई त्यों त्यों उनके ये विचार बदलते गए और अंत में उन्होंने यही निश्चय किया कि यदि मेरा जन्म किसी उच्च कुल में नहीं हुआ तो कम से कम अपने

वाहुवल से मुझे कोई ऐसा सुकृत्य अवश्य करना चाहिए जिसके कारण मेरे वंशजों को मेरा कुछ अभिमान हो। उनका सिद्धांत था कि किसी के यश का मूल्य निश्चित करने के लिये यह न देखना चाहिए कि वह किस उच्च पद तक पहुँच गया है, वल्कि यह देखना चाहिए कि उस पद का यश प्राप्त करने मे उसे कितनी अड़चन और कठिनाइयाँ झेलनी पड़ी हैं। कठिनाइयाँ झेलने से मनुष्य मे सब प्रकार की शक्ति, आत्म-विश्वास और योग्यता की वृद्धि होती है। लेकिन जो लोग उच्च कुल या जाति के कारण बिना किसी प्रकार की कठिनता का सामना किए ही बड़ा पद पा जाते हैं, उन्हें उक्त गुणों से वंचित रहना पड़ता है। जो लोग अपनी योग्यता का ध्यान न रखकर केवल उच्च जातियो या कुल मे उत्पन्न होने के कारण वड़े वड़े अधिकार माँगते हैं, उनकी दशा पर वाशिंगटन को वहुत दुःख होता था और दया आती थी, क्योंकि यह एक निश्चित सिद्धांत है कि केवल उच्च कुल मे उत्पन्न होने के कारण ही कोई मनुष्य उन्नति नही कर सकता, और यदि किसी मनुष्य में वास्तविक योग्यता हो तो वह केवल नीच जाति मे उत्पन्न होने के कारण ही कभी पीछे नहीं रह सकता। योग्यता अथवा श्रेष्ठता, चाहे किसी वर्ण या जाति के मनुष्य में हो, अंत मे अवश्य यश और विजय प्राप्त कराती है। प्रत्येक मनुष्य और जाति को इस सिद्धांत पर दृढ़ विश्वास रखकर अपनी योग्यता वढ़ाने का उद्योग करना चाहिए।

पश्चिम वर्जीनिया में पहुँचने पर वाशिंगटन की माता ने बहुत दरिद्र होने पर भी एक अनाथ बालक को अपने यहाँ रख लिया था। उसका नाम जेम्स बी० वाशिंगटन रखा गया था।

३—शिक्षा के लिये उद्योग

एक दिन कोयले की खान में काम करते समय वाशिंगटन ने दो बेलदारों से सुना कि वर्जीनिया में किसी स्थान पर हबशियों के लिये एक बड़ी पाठशाला खुलनेवाली है, वहाँ साधारण शिक्षा के अतिरिक्त योग्य दरिद्र बालकों को शिल्प आदि की भी शिक्षा दी जायगी और उनसे कुछ काम लेकर, व्यय-निर्वाह के लिये, उन्हें कुछ वृत्ति भी दी जायगी। उस विद्यालय का नाम था—हैंपटन नार्मल ऐंड एग्रीकलचरल इंस्टीट्यूट। उसका वर्णन सुनकर वाशिंगटन को उसमें प्रविष्ट होने के लिये बहुत उत्सुकता होने लगी। उन्हे ऐसा अनुमान होने लगा कि संसार मे सबसे अधिक महत्त्व का स्थान यही विद्यालय होगा और उसके सामने स्वर्गसुख की भी कोई गणना न होगी। यद्यपि उस समय उन्हें यह नहीं मालूम था कि वह विद्यालय कहाँ और कितनी दूर है, पर तो भी उन्होंने किसी न किसी प्रकार वहाँ पहुँचने का दृढ़ संकल्प कर लिया।

अब उन्हें दिन रात हैंपटन के उसी विद्यालय में पहुँचने की चिंता रहने लगी।

इस घटना के कई महीने बाद वाशिंगटन ने सुना कि खान और भट्ठी के मालिक जनरल लेविस रफनर के मकान में कोई जगह खाली हुई है। जनरल रफनर की स्त्री का नाम वायोला रफनर था और वह उत्तर अमेरिका के वरमांट नामक स्थान में रहती थी। वायोला रफनर के विषय मे यह प्रसिद्ध था कि वह अपने नौकरों के साथ बहुत कठोर व्यवहार करती है और कोई नौकर दो तीन महीने से अधिक उसके पास नहीं ठहर सकता। वाशिंगटन ने खान का काम छोड़कर कुछ दिनों तक वायोला रफनर के यहाँ काम करना निश्चित किया और अपनी माता से प्रार्थना करके उसकी सिफारिश से पाँच डालर मासिक पर उन्होंने उस पद पर अपनी नियुक्ति करा ली। लेकिन श्रीमती रफनर के कठोर व्यवहार की बात सुनकर वाशिंगटन इतने भयभीत हो गए थे कि जब पहले पहल वे उसके सामने गए तब थरथर काँपने लगे थे। पर कुछ ही सप्ताह काम करने के बाद वे उसके स्वभाव से भली भाँति परिचित हो गए। उन्होंने समझ लिया कि घर की सब चीजें स्वच्छ रखने, सब कार्य जल्दी और नियमित रूप से करने तथा सब व्यवहारों मे प्रामाणिक और स्पष्ट रहने से ही स्वामिनी प्रसन्न रहती है, और यदि सब काम होशियारी से किए जायँ तो वह कभी कठोर व्यवहार नहीं करती।

वाशिंगटन ने प्राय: डेढ़ वर्ष तक वहाँ काम किया। इस बीच में उन्होंने नियमित रूप से और स्वच्छतापूर्वक सब कार्य्य करने की अच्छी शिक्षा प्राप्त कर ली। घर और वहां की सब चीजे वे सदा बहुत स्वच्छ रखते थे और कभी किसी चीज पर मैल जमने या दाग पड़ने न देते थे। इसी लिये वायोला रफनर उनसे बहुत अच्छा व्यवहार करने लगी और वे भी उसे अपना दयालु मित्र समझने लगे। उनकी रुचि पढ़ने लिखने की ओर अधिक देखकर, जाड़े के दिनों मे वायोला उन्हे प्राय: पाठशाला जाने के लिये एक घंटे की छुट्टी दे दिया करती थी। पढ़ने लिखने के लिये अधिक समय उन्हे प्राय: रात को ही मिला करता था। इस काम मे स्वामिनी उन्हें प्राय. सहायता और उत्तेजना दिया करती थी। वहीं उन्होंने पहले पहल कुछ छोटी मोटी पुस्तकें एकत्र करके अपने छोटे से पुस्तकालय का आरंभ किया।

यद्यपि वायोला रफनर के यहाँ वे बहुत सुख से रहते थे, पर तो भी हैंपटन जाने की उनकी इच्छा ज्यों की त्यों बनी रही। उस समय तक उन्हें इस बात की कुछ भी कल्पना न थी कि हैंटपन किस ओर है और वहाँ जाने मे कितना व्यय होगा। सन् १८७२ की वर्षा ऋतु मे उन्होने हैंपटन जाना चाहा, पर उनकी माता के सिवा और कोई उनके इस विचार से सहमत न हुआ। उन्होने अपनी शक्ति से बढ़-कर साहस किया था इसलिये उनकी माता को कुछ दुःख भी

हुआ। तो भी किसी न किसी प्रकार उन्होने उससे हैंपटन जाने की आज्ञा ले ही ली। इस कार्य के लिये उन्होने पहले से ही कुछ धन एकत्र कर रखा था, पर उनके सौतेले बाप तथा अन्य कुटुंबियों ने वह धन खर्च कर डाला और उसमे से केवल थोड़े से डालर बच रहे। कपड़े आदि मोल लेने और मार्ग के व्यय के लिये उनके पास यथेष्ट धन नहीं था। उनके भाई जान ने यथाशक्ति उन्हे सहायता दी, पर उसकी सहायता का कुछ अधिक उपयोग न हो सका, क्योंकि उसे खान मे अधिक वेतन न मिलता था और जो कुछ मिलता भी था उसका अधिकांश गृहस्थी मे ही लग जाता था। हाँ, वहाँ के बहुत से वृद्ध हवशियों ने उनके साथ उस अवसर पर बहुत सहानुभूति दिखलाई थी और उन्हें अच्छा उत्साह दिलाया था। उनमे से किसी ने उन्हे निकल (ढाई आने का सिक्का), किसी ने चौथाई डालर और किसी ने दस्ती रूमाल दिए थे।

अंत में निश्चित तिथि को उन्होंने हैंपटन की यात्रा की। उस समय अचानक उनकी माता बहुत बीमार हो गई थी और उसके बचने की कोई आशा नहीं थी। इस कारण दोनों के लिये यह वियोग बहुत ही दुस्सह हुआ। तो भी उनकी माता ने बहुत धैर्यपूर्वक अपने आपको सँभाला और प्रसन्नता से उन्हे जाने की आज्ञा दी। माल्डन से हैंपटन प्रायः पाँच सौ मील दूर था। मार्ग में रेल बहुत थोड़ी दूर तक गई थी। घर से निकलने के कुछ ही घंटे बाद उन्हे मालूम हुआ कि

उनके पास मार्ग-व्यय के लिये यथेष्ट धन नहीं है। पर तोभी वे ईश्वर पर विश्वास रखकर आगे वढे। एक दिन संध्या के समय उनकी घोड़ा-गाड़ी एक छोटी सराय मे पहुँची। उस गाड़ी में वाशिंगटन्न के अतिरिक्त शेष सभी यात्री गोरे थे। जव उस सराय मे सव यात्रियों के ठहरने और भोजन आदि की व्यवस्था हो गई तव वाशिंगटन्न भी वहाँ के प्रवंध-कर्त्ता के पास गए। यद्यपि उस समय उनके पास एक पैसा भी नहीं था पर तो भी उन्हे आशा थी कि मैं किसी न किसी प्रकार सरायवाले को प्रसन्न करके उससे सराय मे ठहरने की आज्ञा ले लूँगा। लेकिन सरायवाले ने केवल उनके हवशी होने के कारण ही उन्हें सराय में स्थान देना अस्वीकृत किया। उसी दिन उन्हे पहले पहल मालूम हुआ कि गोरे और काले चमड़े में कितना अधिक भेद है। यद्यपि वह प्रदेश पहाड़ी था और वहाँ सर्दी वहुत अधिक पड़ती थी तो भी उन्होंने किसी प्रकार वह रात विता ही दी। उस समय वे हैंपटन जाने के लिये इतने व्यग्र हो रहे थे कि उन्हें इस अपमानपूर्ण व्यवहार पर विचार करने का अवसर ही न मिला। लेकिन यह घटना वाशिंगटन कभी भूले नहीं।

वहुत सा मार्ग पैदल चलकर और अनेक प्रकार की कठिनाइयाँ सहकर वहुत दिनों वाद वे रिचमंड नामक नगर में पहुँचे। वहाँ से हैंपटन ८२ मील रह गया था। रिचमंड में वे आधी रात के समय दिन भर के थके माँदे और भूखे प्यासे

पहुँचे थे। उस दिन से पहले उन्होंने कभी कोई बड़ा नगर नहीं देखा था, इसलिये उन्हे बहुत दुर्दशा भोगनी पड़ी। रिचमंड पहुँचने के समय उनके पास एक पैसा भी न था। न तो उस नगर मे उनका कोई परिचित ही था और न वे वहाँ की गलियाँ और सड़कें ही जानते थे। रहने की जगह पाने के लिये उन्होंने कई आदमियों से प्रार्थना की, पर सबने उनसे किराया माँगा और किराया देने के लिये उनके पास एक पैसा भी न था। इस पर वे कुछ कर्त्तव्य निश्चित न कर सके और इधर उधर गलियों में घूमने लगे। गलियों और सड़कों पर उन्हे बहुत सी दूकानें दिखाई दीं, जिन पर भोजन आदि के अच्छे अच्छे पदार्थ सजाए हुए रखे थे। पर पास मे पैसा न होने के कारण वे कुछ भी न ले सके और वह रात उन्होंने बिना कुछ खाए पीए ही बिता दी।

बहुत देर तक इधर उधर घूमने पर आधी रात के समय वे बहुत अधिक थक गए और उनमें चलने या खड़े रहने की शक्ति न रह गई। उस समय की अपनी दशा का वर्णन करते हुए उन्होंने लिखा था—"मैं थक गया, भूखा रहा, सब कुछ हुआ, पर मैं जरा भी निराश न हुआ"। वह रात उन्होने सड़क के पास की एक पटरी पर सोकर बिताई। कई दिनों से उन्हें भरपेट अन्न नहीं मिला था, इसलिये दूसरे दिन जब वे सोकर उठे तब उन्हे बहुत अधिक भूख लगी। कोई काम ढूँढ़ने के अभिप्राय से वे इधर उधर घूमने लगे। थोड़ी देर

वाद उन्हे पास ही एक जहाज दिखाई पड़ा जिस पर से लोहा उतर रहा था। उन्होंने तुरंत जहाज के कप्तान के पास जाकर उसे अपनी दशा सुनाई और काम पाने की प्रार्थना की। कप्तान ने भी कृपा कर उनकी प्रार्थना स्वीकृत कर ली और उन्हें काम दे दिया। वहुत देर तक काम करने के वाद उन्हे जलपान के लिये यथेष्ट पैसे मिले। कई दिनों से भूखे होने के कारण वडी रुचि से उन्होने थोड़ा भोजन किया और वे फिर काम में लग गए। उनके काम से प्रसन्न होकर कप्तान ने उन्हे आज्ञा दे दी कि जव तुम्हारी इच्छा हो तव तुम आकर थोड़ा वहुत काम कर दिया करो। इस प्रकार काम पाकर वे वहुत प्रसन्न हुए और कई दिनों तक वहाँ काम करते रहे। लेकिन वहाँ जो कुछ मजदूरी उन्हे मिलती थी, वह सव खाने पीने मे ही खर्च हो जाती थी, इसी लिये हैंपटन जाने के लिये वे यथेष्ट धन एकत्र न कर सके। अंत मे उन्होने अपने भोजन का व्यय कम कर दिया और नित्य कुछ पैसे वचाना आरंभ किया। रात के समय वे उसी पटरी पर सोया करते थे, जिस पर पहली रात को सोए थे। कुछ वर्षों वाद जव वे पुनः लौटकर रिचमंड आए तव उस समय कई हजार आदमियों ने उनका वहुत स्वागत किया था। पर उस अवसर पर भी उनका ध्यान उन लोगों की अपेक्षा अपने पहले सोनेवाले स्थान की ओर ही अधिक था।

जव वाशिंगटन ने यथेष्ट मार्गव्यय एकत्र कर लिया तव वे जहाज के कप्तान को उसकी कृपा के लिये धन्यवाद देकर

हैंपटन की ओर चल पड़े। मार्ग मे कोई घटना नहीं हुई और वे सकुशल हैंपटन पहुँच गए। वहाँ पहुँचने पर उनके पास केवल ५० सेंट (एक रुपया नौ आने) बच रहे थे। उसी छोटी रकम से उन्होंने अपनी शिक्षा आरंभ कर दी। यद्यपि हैंपटन तक पहुँचने मे उन्हें अनेक प्रकार के कष्ट सहने पड़े थे पर जब उन्होने दूर से हैंपटन-विद्यालय के तिमंजले भवन के दर्शन किए तब उनका सारा परिश्रम मानों सफल हो गया। उस भवन को देखकर उनके हृदय पर बहुत ही अच्छा परिणाम हुआ। उन्होंने अनुभव किया कि इससे बढ़कर सुन्दर इमारत मैंने पहले कभी देखी ही न थी। उस इमारत को देखते ही उनके शरीर मे मानों नवीन जीवन का संचार हो आया। अब उन्हे जीवन का उद्देश्य भी बिल्कुल नवीन मालूम होने लगा। उस समय उन्होंने स्वर्ग-सुख का अनुभव करके मन मे दृढ़ निश्चय कर लिया कि भविष्य मे मैं यथासाध्य जगत् के कल्याण और उपकार करने की शक्ति संपादन करने में कभी किसी प्रकार की त्रुटि न करूँगा।

हैंपटन-विद्यालय मे पहुँचकर वे सबसे पहले वहाँ की मुख्य अध्यापिका के पास किसी दरजे मे भर्ती होने के लिये गए। पर इधर कई दिनों से उन्होंने न तो स्नान ही किया था और न कपड़े ही बदले थे, यहाँ तक कि भर पेट भोजन भी नहीं किया था, इसलिये उनकी आकृति और वेष देखकर मुख्य अध्यापिका कुछ हिचकी और थोड़ी देर तक चुपचाप

कुछ सोचती रहीं। वाशिंगटन भी उनके हृदय का भाव समझ गए। इसलिये उन्होंने अपनी योग्यता प्रकट करने के लिये अनेक प्रकार के उपाय और उद्योग किए। इसी बीच में और भी कई विद्यार्थी वहा आए और उन सबको अध्यापिका ने भर्ती कर लिया। वाशिगटन मन ही मन बहुत दुखी हुए। दुखी होने का मुख्य कारण यह था कि उस समय उन्हें पूर्ण विश्वास था कि यदि मुझे अपनी योग्यता दिखलाने का अवसर मिल जाय तो मैं अध्यापिका को भली भाँति संतुष्ट कर लूँगा।

इसी प्रकार कई घंटे बीत जाने पर वहा की मुख्य अध्यापिका ने वाशिंगटन से कहा—"इस कमरे को झाड़ू देकर अच्छी तरह साफ कर दो।" वाशिंगटन का मनोरथ पूर्ण हुआ और उन्हे अपनी योग्यता दिखलाने का अवसर मिला। श्रीमती रफनर के यहाँ रहकर उन्होंने इस काम की बहुत अच्छी शिक्षा पाई थी। तुरंत जाकर उन्होने उस कमरे में तीन बार झाड़ू दिया, कुरसी, मेज, दीवार आदि को खूब साफ किया, सब चीजें क्रम से उठाकर उनके नीचे की धूल साफ की और सारे कमरे को बहुत स्वच्छ कर दिया। वे भली भाँति समझते थे कि मेरा सारा भविष्य इसी काम को उत्तमतापूर्वक करने पर निर्भर है। कमरे को अच्छी तरह साफ करके उन्होने जाकर अध्यापिका को सूचना दी। उनके साथ आकर अध्यापिका ने कमरे को चारों ओर से भली भाँति देखा और रूमाल से कुरसी, टेबुल आदि रगड़कर देखे। जब उसे निश्चय

हो गया कि किसी चीज पर जरा भी धूल नहीं है तब उसने बहुत शांत होकर कहा—"मैं समझती हूँ कि तुम इस विद्यालय में भर्ती होने के योग्य हो।"

यह सुनते ही वाशिंगटन ने अपने आपको बहुत ही भाग्यवान् और धन्य समझा। कोठरी मे झाड़ू देना ही, उनकी कालेज की प्रवेश-परीक्षा थी। यद्यपि इसके बाद वे अनेक परीक्षाओं मे उत्तीर्ण हुए थे पर इस परीक्षा को उन्होंने सदा सर्वोत्तम समझा। विद्यालय मे प्रविष्ट होने के लिये वाशिंगटन को जिस कठिनता का सामना करना पड़ा था, उसका जोड़ और देशों के विद्यालयों मे बहुत ही कम मिलेगा। पर हैंपटन मे प्रविष्ट होनेवाले विद्यार्थियों को प्रविष्ट होने के समय प्रायः ऐसी ही परीक्षाएँ देनी पड़ती थीं। इस प्रकार की परीक्षाओं से यह मालूम हो जाता था कि विद्यार्थी मे कितनी योग्यता है और विद्याभ्यास के लिये उसका उत्साह कहाँ तक बढ़ा हुआ है। फल यह होता था कि केवल बहुत अधिक योग्य और विद्याप्रेमी बालक ही हैंपटन के विद्यालय मे प्रविष्ट हो सकते थे। और वाशिंगटन वहाँ के योग्यतम विद्यार्थियों मे से एक थे।

कोठरी मे अच्छी तरह झाड़ू देने से ही मानो वाशिंगटन की विद्या-प्राप्ति का मार्ग खुल गया। मुख्य अध्यापिका मिस मेरी एफ० मैकी ने उन्हें द्वाररक्षक (Janitor) का पद दिया और उन्होंने बड़ी प्रसन्नता से वह पद स्वीकृत किया। यद्यपि

वह काम बहुत कठिन और परिश्रम का था पर तो भी वाशिंगटन ने उसे नहीं छोड़ा, क्योंकि उस पद पर काम करने से उन्हे जो वृत्ति मिलती थी उससे उनके भोजनादि का बहुत कुछ व्यय निकल आता था। बहुत सी कोठरियों पर देखरेख रखने के सिवा उन्हे रात को भी कई घंटे तक काम करना पड़ता था और आग सुलगाने तथा अपना पाठ याद करने के लिये उन्हे प्रातःकाल चार ही बजे उठना पड़ता था। हैंपटन मे रहने के समय तथा उसके बाद अन्यत्र जाने पर भी वाशिंगटन को मुख्य अध्यापिका मिस मैकी से सब कार्य्यों मे बहुत सहायता मिली और वे उनकी मित्र हो गईं। उन्हीं की सम्मति और उत्तेजना से वे सब काम किया करते थे।

हैंपटन के सब दृश्यों और घटनाओं की अपेक्षा, वाशिंगटन के हृदय पर सबसे अधिक उत्तम प्रभाव स्वर्गीय महात्मा जनरल एस० सी० आर्मस्ट्रांग के सहवास का पड़ा था। यद्यपि उसके बाद वाशिगटन की भेंट यूरोप तथा अमेरिका के अनेक बड़े बड़े विद्वानों और सज्जनों से हुई थी, पर जनरल आर्मस्ट्रांग के सदृश योग्य, सदाचारी और सज्जन उन्हें और कोई न मिला था। कोयले की खान से निकलते ही एकाएक जनरल आर्मस्ट्रांग के साथ रहने का अवसर पाने को उन्होंने अपना परम सौभाग्य समझा। पहले पहल जब वे जनरल महाशय के पास गए तब उन्हें ऐसा अनुमान हुआ कि जनरल के अंग में कोई अलौकिक और दैवी अंश है।

हैंपटन पहुँचने के बाद वे जनरल के मृत्युकाल तक उनके साथ ही रहे। इस बीच में जनरल के लिये उनके हृदय मे दिन पर दिन आदर और पूज्यभाव सदा बढ़ता ही गया। जनरल की योग्यता का वर्णन करते हुए उन्होने कहा था—"यदि हैंपटन विद्यालय के सब भवन, वर्ग, शिक्षक तथा कलाकौशल आदि का अस्तित्व मिटाकर वहाँ के सब विद्यार्थियों को केवल जनरल आर्मस्ट्रांग के सत्संग का सुयोग दिया जाय, तो केवल उस सत्संग या सत्समागम के प्रभाव से ही उन विद्यार्थियों को सर्वोत्तम शिक्षा मिल सकती है। मैं ज्यों ज्यों बड़ा होता जाता हूँ त्यों त्यो मुझे दृढ़ विश्वास होता जाता है कि सत्पुरुषो के समागम से मिलनेवाली शिक्षा के सामने पुस्तकों और बहुमूल्य उपकरणों से मिलनेवाली शिक्षा का मूल्य कुछ भी नहीं है। मैं समझता हूँ कि यदि सदा पुस्तकों का अभ्यास करने के बदले हमारे विद्यालय और कालेजो मे मनुष्यों और वस्तुओं का अध्ययन करना सिखलाया जाता तो बहुत अच्छा होता।"

जनरल आर्मस्ट्रांग ने अपने जीवन के अंतिम छः मास टस्केजी में, वाशिंगटन के घर में, व्यतीत किए थे। उस समय पक्षाघात से पीड़ित होने के कारण अपने शरीर और वाणी पर उनका बहुत ही कम अधिकार रह गया था। उस कठिन रुग्णावस्था मे भी वे अपने ऊपर लिए हुए काम को पूरा करने का दिन रात प्रयत्न किया करते थे। उनके समान काम के

पीछे शरीर को भूल जानेवाले लोग वहुत ही कम मिलेंगे। स्वार्थ का उन्हें कभी विचार तक न होता था। दक्षिण अफ्रिका के किसी विद्यालय आदि की सहायता करते समय उन्हे ठीक उतना ही आनंद होता था जितना अपने स्थापित किए हुए हैंपटन-विद्यालय की उन्नति करते समय होता था। यद्यपि 'सिविल वार' में वे दक्षिण के गोरो के विरुद्ध लड़े थे, तथापि उसके वाद उन्होने उन गोरों को कभी एक भी दुर्वचन नहीं कहा। यही नहीं, बल्कि वे सदा उन गोरों की भलाई के उपाय भी सोचा करते थे।

हैंपटन-विद्यालय के विद्यार्थियों की जनरल पर जो श्रद्धा थी उसका वर्णन करना वहुत ही कठिन है। इसमे संदेह नही कि विद्यार्थी लोग उन्हे ईश्वर तुल्य मानते थे। जिस काम को वे अपने हाथ मे लेते थे, उसमे उन्हे सदा यश मिलता था। वे जिससे जिस बात की प्रार्थना करते थे, वह उसे अवश्य ही मान लेता था। एक वार वे अलवामा में वाशिंगटन के घर में ठहरे थे। उस समय भी वे पक्षाघात से पीड़ित थे, इसलिये उन्हे कुरसी पर वैठाकर कुरसी समेत उठाकर हवा खिलाने के लिये ले जाना पड़ता था। एक वार एक बिलकुल नए विद्यार्थी की सहायता से वाशिंगटन उन्हे हवा खिलाने के लिये वड़े कष्ट और परिश्रम से एक ऊँचे टीले पर ले गए। वहाँ पहुँचकर उस नए विद्यार्थी ने बड़ी प्रसन्नता से कहा—"मैं इस वात से वहुत अधिक प्रसन्न हूँ कि जनरल

की मृत्यु से पहले, मुझे इस प्रकार उनकी सेवा करने का सुयोग प्राप्त हुआ है।"

वाशिंगटन जब हैंपटन-विद्यालय मे पढ़ते थे तब वहाँ के छात्रावास विद्यार्थियों से इतने अधिक भर गए थे कि नए विद्यार्थियों को स्थान मिलना असंभव हो गया था। इस कठिनता को दूर करने के लिये जनरल ने निश्चय किया कि मैदान में कुछ नए तंबू लगा दिए जायँ और उन्हीं मे विद्यार्थी रहें। जब पुराने विद्यार्थियों को मालूम हुआ कि जनरल की इच्छा है कि कुछ विद्यार्थी उन तंबुओ मे रहे तो उनमें से बहुत से स्वेच्छापूर्वक उन तंबुओ मे रहने के लिये तैयार हो गए। वाशिंगटन भी उन्ही विद्यार्थियों मे से एक थे। उन दिनों सरदी बहुत अधिक पड़ती थी और सब विद्यार्थियों ने बड़े कष्ट से उन तंबुओ मे दिन बिताए थे। लेकिन उनके इस कष्ट की सूचना जनरल को कभी नहीं मिली। इसका मुख्य कारण यह था कि विद्यार्थियों में कभी आपस मे इस संबंध में किसी प्रकार की कहा-सुनी नहीं हुई थी। सब विद्यार्थी यही समझकर प्रसन्न रहते थे कि हम जनरल को संतुष्ट करने के अतिरिक्त बहुत से विद्यार्थियों को विद्योपार्जन मे सहायता दे रहे हैं। प्रायः ऐसा होता था कि सरदी में अधिक तेज वायु चलने के कारण विद्यार्थियों के खेमे उड़ जाया करते थे और उन लोगों को कड़कड़ाते जाड़े में बैठकर रात बितानी पड़ती थी। सबेरा होते ही जनरल उन लोगों के

पास आते और उनके उत्तेजक और प्रेमपूर्ण वाक्य सुनकर विद्यार्थी अपनी सारी उदासीनता, सारा कष्ट भूल जाते थे।

हैंपटन-विद्यालय जनरल सरीखे सैकड़ों स्वार्थत्यागी महानुभाव शिक्षकों से भरा हुआ था। उस विद्यालय मे काम करनेवाले अध्यापको और अध्यापिकाओ से बढ़कर उच्च, उदात्त और स्वार्थत्यागी स्त्रियों और पुरुषो का मिलना प्राय: असंभव ही है। ऐसे आदर्श विद्यालय मे रहकर वाशिंगटन ने अनेक नवीन बातें सीखीं। वे मानो एक बिलकुल नए संसार मे आ गए थे। नियमित समय पर भोजन करना, रूमाल और तौलिए का व्यवहार करना, बुरुश से दाँत साफ करना आदि सभी बातें उनके लिये एकदम नई थीं। वहीं उन्हें स्नान की उपयोगिता और उससे होनेवाले लाभों का ज्ञान हुआ। स्नान के संबंध मे वे कहते हैं—"इससे केवल शरीर ही नीरोग नहीं रहता, बल्कि मनुष्य मे सद्गुणों की वृद्धि भी होती है।" यदि कभी उनके कमरे मे कोई अतिथि आ जाता था और वहाँ वह स्नान न कर सकते, तो किसी जंगल मे चले जाते और वहाँ बहते हुए झरने मे स्नान कर लेते थे। जहाँ तक हो सकता था, वे स्वयं नित्य स्नान करते और दूसरों को भी वैसा ही करने का उपदेश देते थे।

हैंपटन मे भोजन के लिये प्रति मास उनके दस डालर खर्च होते थे। इसमें से कुछ अंश तो वे नगद दे देते थे और कुछ के बदले में वहाँ का काम कर दिया करते थे। हैंपटन

पहुँचने के समय उनके पास केवल ५० सेंट ही बच गए थे। कुछ समय के उपरांत उनके भाई जान ने उन्हे कई डालर भेजे थे। पर उतने धन से उनके भोजन का काम न चल सकता था, इसलिये उन्हे विद्यालय का काम करने के लिये विवश होना पड़ा था। अपना काम वे इतनी उत्तमता से करते थे कि जिससे विद्यालय के अधिकारियों को सदा उनकी आवश्यकता बनी रहा करे। उनकी शिक्षा का वार्षिक व्यय ७० डालर था और इतनी रकम देने मे वे नितांत असमर्थ थे। यदि भोजन और शिक्षा का पूरा व्यय उन्हे नगद देना पड़ता तो वे कभी उस विद्यालय में न ठहर सकते। इसलिये जनरल आर्मस्ट्राग कृपा कर उनकी शिक्षा का व्यय बेडफोर्ड के मि० मार्गन नामक एक सज्जन से दिलवा दिया करते थे। इस कार्य्य के लिये वाशिंगटन सदा मि० मार्गन के बहुत अनुगृहीत रहे और अपने जीवन मे प्रायः उनसे मिला करते थे।

हैंपटन पहुँचने के थोड़े ही दिनों बाद वाशिंगटन को पुस्तकों और कपड़ों की आवश्यकता मालूम होने लगी। पुस्तकें तो वे प्रायः औरो से माँगकर अपना काम चला लेते थे, पर कपड़ों के लिये उन्हे बहुत कठिनता होती थी। पीछे से दयालु शिक्षकों की कृपा से उनकी यह अड़चन भी दूर हो गई और उन्हे कुछ साधारण कपड़े मिल गए। हैंपटन विद्यालय के अनेक विद्यार्थियों की अवस्था तो चालीस वर्ष से भी ऊपर थी। उनका सारा समय प्रायः पढ़ने और काम करने

मे ही व्यतीत होता था। संसार की गति देखकर उन लोगों को भली भाँति मालूम हो गया था कि प्रत्येक मनुष्य को शिक्षा प्राप्त करने की बहुत बड़ी आवश्यकता है। उनमे से बहुत से विद्यार्थी वाशिंगटन की भाँति बहुत ही दरिद्र थे और उनके पास बहुत ही आवश्यक पदार्थ भी न थे। इसके अतिरिक्त कुछ लोग ऐसे भी थे जिन्हे अपने वृद्ध माता-पिता अथवा स्त्री बच्चों के भरण-पोषण की भी चिंता लगी रहती थी। पर उन सबने दृढ़तापूर्वक एक महत्त्वपूर्ण संकल्प कर रखा था, और वह संकल्प अपने आपको स्वजाति की उन्नति करने के योग्य बनाना था। अपने आपकी चिंता उनमे से किसी को न थी। विद्यालय के अधिकारी और शिक्षक भी देवता-तुल्य ही थे। वे दिन रात विद्यार्थियों के लिये कठिन परिश्रम करते थे। अनेक प्रकार से विद्यार्थियों की सहायता करने मे ही उन्हें प्रसन्नता होती थी। 'सिविल वार' के उपरांत उत्तर अमेरिका के गोरे शिक्षकों ने हबशियों की शिक्षा के संबंध मे जो काम किया था, वह निस्संदेह इतिहास मे स्वर्णाक्षरों मे लिखने योग्य है।

४—दूसरों की सहायता

हैंपटन में एक वर्ष रहने के बाद वाशिंगटन को एक और कठिनता का सामना करना पड़ा। विद्यालय मे छुट्टी हुई, सब

विद्यार्थी घर गए, पर धनाभाव के कारण वाशिंगटन कहीं न जा सके। उस समय छुट्टी के दिनों मे बहुत ही कम विद्यार्थियों को विद्यालय मे रहने की आज्ञा मिलती थी। वाशिंगटन के पास एक पुराना कोट था, उसी को बेचकर उन्होने कही बाहर जाना निश्चित किया। लड़कपन और अभिमान के कारण उन्होंने अपनी दुर्दशा किसी विद्यार्थी से न कही। गुप्त रूप से उन्होंने एक हबशी को वह कोट मोल लेने पर राजी किया। निश्चित समय पर वह कोट देखने के लिये आया। उसके पूछने पर उन्होंने उसका मूल्य तीन डालर बतलाया। इस पर उसने बड़ी चतुरता से कहा—"मैं यह कोट मोल ले लेता हूँ और अभी तुम्हे पाँच सेंट (ढाई आने) देता हूँ। बाकी और रुपया मिलने पर दूँगा।" उस समय उन्हे जो निराशा हुई होगी उसका अनुमान सहज ही में हो सकता है। विवश होकर उन्होंने काम के लिये बाहर जाने की आशा छोड़ दी। शीघ्र ही सब विद्यार्थी और शिक्षक अपने अपने घर चले गए और वाशिंगटन बहुत दुखी होकर वहीं रह गए।

कई दिनों तक इधर उधर घूमने और अनेक प्रयत्न करने पर अंत मे उन्हे एक भोजन बनानेवाले की दूकान पर कुछ काम मिल गया। पर वहाँ उन्हे वेतन बहुत ही कम मिलता था और भोजन आदि के व्यय के बाद उनके पास बहुत ही कम धन बच रहता था। रात के समय वे कुछ पढ़ लिया

करते थे और दिन भर काम करते थे। पहले वर्ष की समाप्ति पर, विद्यालय छोड़ने के समय, वे विद्यालय के सोलह डालर के देनदार थे। इसी लिये वे चाहते थे कि गरमियों में काम करके मैं अपना यह ऋण चुका दूँ। इसलिये उन्होंने अपना व्यय बहुत ही कम कर दिया। वे बहुत ही कम कपडे पहनते और उन्हे स्वयं ही धोते थे। पर इतना सब कुछ करने पर भी छुट्टी समाप्त हो गई और वे सोलह डालर एकत्र न कर सके। अंतिम सप्ताह मे भोजनवाले की दूकान पर, एक टेबुल के नीचे, एक दिन उन्हें दस डालर का एक नोट पड़ा हुआ मिला। उसे बड़ी प्रसन्नता से उठाकर वे अपने मालिक के पास ले गए। उसने वह नोट चुपचाप अपने पास रख लिया, इससे वाशिंगटन और भी अधिक दुखी हो गए। पर निराशा उन्हे उस समय भी नहीं हुई। उन्होंने कहा था—"मैं यह नहीं मानता कि मैं निराश हो गया। क्योकि अपने पिछले जीवन के देखते हुए, मैंने जो कुछ कार्य करना निश्चित किया था, उसके संबंध मे मुझे यह स्मरण नहीं आता कि मैं कभी निराश हुआ हूँ। मैंने प्रत्येक कार्य यही समझकर आरंभ किया है कि उसमें मुझे अवश्य यश मिलेगा।" अस्तु, भविष्य मे आनेवाली कठिनता का सामना करने के लिये वे तैयार हो गए। सप्ताह के अंत मे वे विद्यालय के खजांची जनरल जे० एफ० बी० मारशल के पास गए और उन्होने उन्हे अपनी सारी दशा कह सुनाई। उन्होने कह दिया—"तुम फिर

विद्यालय मे भरती हो जाओ। जब तुम्हें रुपया मिले, तब तुम यह ऋण चुका देना। मुझे तुम पर विश्वास है।" इस प्रकार दूसरे वर्ष भी वे द्वार-रक्षक का काम करते रहे।

हैंपटन-विद्यालय मे रहकर वाशिंगटन ने जितनी बातें सीखी थीं, पुस्तकों से मिली हुई शिक्षा उनका एक अंश मात्र थी। दूसरे वर्ष उनके हृदय पर जिस बात का सबसे अच्छा और अधिक प्रभाव पड़ा, वह शिक्षकों का स्वार्थत्याग था। उस समय उनके लिये यह समझना बहुत ही कठिन था कि परोपकार के लिये कष्ट उठाने मे लोगों को इतना सुख क्यो मिलता है। पर दूसरे वर्ष की समाप्ति पर वे भली भाँति समझ गए थे कि जो लोग दूसरों के लिये कष्ट उठाते हैं, वे ही सबसे अधिक सुखी रहते हैं। तब से वे सदा इसी सिद्धांत पर विशेष ध्यान रखते थे। उसी दूसरे वर्ष, मिस लार्ड नामक एक शिक्षिका की कृपा से उन्होंने बाइबिल को ध्यानपूर्वक पढ़ा और उसका महत्त्व समझा। तब से वे उसे केवल धार्मिक ग्रंथ ही नहीं समझते थे, बल्कि साहित्य की दृष्टि से भी वे उसे बहुत मूल्यवान् मानते और नित्य प्रातःकाल उसका थोडा बहुत पाठ किया करते थे।

वक्तृत्व-कला की शिक्षा भी वाशिंगटन को पहले पहल मिस लार्ड से ही मिली थी। जब मिस ने उनकी रुचि इस ओर देखी तब उन्हे शब्दों का ठीक उच्चारण करना और आवश्यकतानुसार शब्दों और वाक्यो पर जोर देना सिखलाया। बाल्या-

वस्था से ही संसार का कुछ वास्तविक कल्याण करने की उनकी उत्कट इच्छा थी, और इस संबंध में वे संसार को कुछ उपदेश भी देना चाहते थे। इसके अतिरिक्त वे यह भी समझते थे कि केवल निरुपयोगी व्याख्यान सदा व्यर्थ होते हैं और उनसे किसी का संतोष नहीं होता। इन सब कारणों से वक्ता बनने की उनकी प्रबल इच्छा थी, जो मिस लार्ड की सहायता से भली भाँति पूरी हो गई। हैंपटन में कई ऐसी सभाएँ थीं जिनमे बालक और युवक मिलकर वाद-विवाद और वक्तृत्व-कला का अभ्यास किया करते थे। उन सभाओं के अधिवेशन प्रति शनिवार को हुआ करते थे और वाशिंगटन उनमें से एक मे सदा नियमपूर्वक जाया करते थे। इसके अतिरिक्त उन्होने स्वयं भी एक ऐसी ही सभा स्थापित की थी। हैंपटन-विद्यालय मे नित्य संध्या को भोजनोपरांत, पाठ आरंभ होने से पहले, विद्यार्थियों को २० मिनट का अवकाश मिला करता था। यह समय सब लोग प्रायः गप्पें लड़ाने मे बिता दिया करते थे। वाशिंगटन ने अपने बीस सहपाठियो की सहायता से एक समिति संगठित की जिसमे सब लोग वाद-विवाद करने और वक्तृता देने का अभ्यास करने लगे।

दूसरे वर्ष की समाप्ति पर उनके माता और भाई ने उन्हे कुछ रुपए भेजे और कुछ रुपए एक शिक्षक ने दिए। छुट्टी होने पर उन रुपयों से वे अपने घर माल्डन गए। जिस समय वे घर पहुँचे उस समय मजदूरों की हड़ताल के कारण माल्डन

की खानें और नमक की भट्टियाँ वंद पड़ी हुई थीं। मजदूरों का यह नियम सा था कि दो तीन महीने काम करके जब वे कुछ धन एकत्र कर लेते थे तब हड़ताल कर देते थे और जब वह धन खर्च करने के सिवा कुछ ऋण भी ले चुकते थे, तब किसी दूसरी खान मे जाकर काम करने लग जाते थे। मजदूरों की यह मूर्खता और दुर्दशा देखकर वाशिंगटन बहुत दुःखी हुए थे। दो वर्ष तक घर से बाहर रहकर उन्होने जो उन्नति की थी उसे देखकर उनके घर के तथा और लोग बहुत प्रसन्न हुए। उनकी जाति के कई वृद्धों ने भी बहुत प्रसन्नता और सहानुभूति प्रकट की। नित्य कोई न कोई हवशी उन्हे अपने घर बुलाकर भोजन कराता और उनके प्रवास तथा अध्ययन का हाल सुनता। इसके अतिरिक्त गिरजा तथा रविवार की पाठशाला में भी उन्हे छोटी मोटी वक्तृता देनी पड़ती थी। उस समय उनकी इच्छा थी कि मुझे किसी प्रकार का काम मिल जाय, पर हड़ताल के कारण सब काम बंद पड़े थे। हैंपटन लौटने तथा वहाँ पहुँचकर शिक्षा आरंभ करने के लिये उन्हें रुपयो की बहुत आवश्यकता थी, पर बहुत चेष्टा करने पर भी एक मास तक उन्हे कोई काम न मिला। मास की समाप्ति पर एक दिन काम ढूँढ़ने के लिये वे अपने निवास-स्थान से बहुत दूर चले गए। पर वहाँ भी उन्हें कोई काम न मिला और रात होने पर वे घर की ओर लौटे। जब उनका घर एक मील रह गया तब वे बहुत थक गए और चलने मे बिलकुल

असमर्थ हो गए। बाकी रात वहीं बिताने के लिये वे पास के एक टूटे फूटे मकान में गए। प्रातःकाल प्रायः तीन बजे उनके भाई जान ने आकर उन्हें जगाया और माता की मृत्यु का शोकजनक समाचार सुनाया। वाशिंगटन उस समय अत्यंत दुखी हुए। यद्यपि उनकी माता कई वर्षों से अस्वस्थ थी, पर पहले दिन घर से चलते समय उन्हें स्वप्न में भी इस बात की आशंका न थी कि मेरे लौटने से पहले ही उसका शरीरांत हो जायगा। इसके अतिरिक्त उसके अंतकाल में उसके समीप रहने की उनकी उत्कट इच्छा थी। हैंपटन मे तो वे प्रायः यही सोचा करते थे कि यदि ईश्वर मुझे समर्थ करे तो मैं अपनी माता के सुखपूर्वक रहने का प्रबंध कर दूँ। उनकी माता सदा यही चाहती थी कि किसी प्रकार मेरे पुत्र पढ़ लिखकर योग्य बनें और संसार मे प्रतिष्ठापूर्वक उन्नति करे। पर माता और पुत्र दोनों की इच्छाएँ मन ही मन मे रह गई और माता का देहांत हो गया। माता के मरते ही उनकी गृहस्थी भी बिगड़ गई। उनकी बहन एमंडा निपट बालिका थी, इसलिये घर के लोगों के भोजन का भी कोई प्रबंध नहीं होता था। तात्पर्य्य यह कि वाशिंगटन ने वे दिन बड़ी ही कठिनता और कष्ट से बिताए। उस अवसर पर श्रीमती रफनर अनेक प्रकार से उनकी बहुत सहायता किया करती थीं। उन्होंने उन्हें अपने यहाँ एक काम पर भी लगा दिया था जिससे उन्होंने हैंपटन लौटने के लिये यथेष्ट धन एकत्र कर लिया।

बीच मे एक बार धनाभाव के कारण वे इतने चिंतित हो गए थे कि उन्होंने हैंपटन लौटने का विचार छोड़ देना चाहा। जाड़े के लिये उनके पास कपड़े भी न थे, पर अपने भाई जान की सहायता से उन्हें कुछ कपड़े मिल गए। काम मिल जाने पर जब उन्होंने हैंपटन लौटने के लिये यथेष्ट धन संग्रह कर लिया तब उन्हें बहुत प्रसन्नता हुई। उन्हे दृढ़ निश्चय था कि विद्यालय मे पहुँचने पर मुझे फिर पुराना पद मिल जायगा और तब मैं किसी न किसी प्रकार अपना निर्वाह कर ही लूँगा। विद्यालय खुलने से तीन सप्ताह पूर्व ही उन्हे वहाँ की प्रधान अध्यापिका मिस मैकी का एक पत्र मिला जिसमे उन्हे विद्यालय-भवन की सफाई आदि के लिये दो सप्ताह पूर्व ही हैंपटन बुलाया गया था। इसलिये वे तुरंत हैंपटन पहुँचे। वहाँ दो सप्ताह तक मिस मैकी के साथ रहकर उन्होने एक बहुत ही अच्छी शिक्षा प्राप्त की। यद्यपि मिस मैकी का जन्म एक बहुत ही उच्च और प्रतिष्ठित कुल मे हुआ था, तथापि दो सप्ताह तक वे बराबर वाशिंगटन के साथ झाड़ू देतीं, खिड़कियों और किवाड़ियो की धूल झाड़तीं, विद्यार्थियों के बिछौने ठीक करतीं तथा इसी प्रकार के और अनेक छोटे छोटे कार्य्य करती रहीं। प्रति वर्ष, विद्यालय खुलने से पहले मिस मैकी को यह काम करना पड़ता था, और उस वर्ष वाशिंगटन ने भी उसमे उन्हे सहायता दी थी। उस समय वाशिंगटन यह न समझ सके कि हबशियो की उन्नति के उद्देश्य से मिस मैकी सरीखी प्रति-

क्षित और शिक्षित स्त्री को इतने छोटे छोटे काम करने में क्यों आनंद आता है। लेकिन तब से उन्हे हबशियों का कोई ऐसा विद्यालय भला नहीं मालूम हुआ जिसमे विद्यार्थियों को परिश्रम का महत्त्व न बतलाया जाता हो।

हैंपटन मे अंतिम वर्ष मे वाशिंगटन का जितना समय काम करने से बचता था, वह सब पढ़ने लिखने मे बीतता था। उन्होंने दृढ़ निश्चय कर लिया था कि मैं परीक्षा में इतने अधिक नंबर पाऊँगा जिसमे मेरा नाम आनर-रोल (Honour Roll) में प्रकाशित हो, और अंत में इस उद्योग मे उन्हें सफलता भी हुई। सन् १८७५ के जून मास मे उनका हैंपटन का शिक्षाक्रम समाप्त हो गया। तीन वर्षों मे उन्हे जो बड़े बड़े लाभ हुए उनमें से दो लाभ मुख्य थे। एक तो जनरल आर्मस्ट्रांग सरीखे अद्वितीय उदार और परोपकारी महात्मा का सहवास और दूसरे इस बात का ज्ञान कि शिक्षा से मनुष्य की कहाँ तक उन्नति हो सकती है। इससे पूर्व और बहुत से लोगों की भाति वाशिंगटन यही समझते थे कि शिक्षा प्राप्त करने पर मनुष्य को किसी प्रकार के शारीरिक श्रम करने की आवश्यकता नहीं रह जाती और जीवन सुख से बीत जाता है। हैंपटन मे रहकर उन्होंने केवल यही नहीं सीखा कि परिश्रम करने में किसी प्रकार की अप्रतिष्ठा नहीं है बल्कि उन्होंने परिश्रम से प्रेम करना भी सीखा। उन्हे भली भाँति मालूम हो गया कि परिश्रम करने से केवल आर्थिक लाभ

ही नहीं होता बल्कि मनुष्य में आत्मविश्वास और स्वतन्त्रता की वृद्धि होती है और वह संसार में कुछ वास्तविक कार्य्य करने के योग्य हो जाता है। वहीं रहकर उन्होंने परोपकार का महत्त्व भी जाना और उन्हे इस सिद्धांत का पूरा ज्ञान हो गया कि जो लोग दूसरों को योग्य और सुखी बनाने के लिये यथासाध्य परिश्रम करते हैं, वे ही सबसे अधिक भाग्यवान् और सुखी होते हैं।

विद्यालय छोड़ने के समय वाशिंगटन के पास कुछ भी धन न था। अपने कई सहपाठियो के साथ उन्होंने कानेक्रिकट के एक होटल मे, जो गरमी के दिनों के लिये खुलनेवाला था, भोजन करानेवाले खिदमतगार का काम अपने लिये ठीक कर लिया और कुछ रुपए उधार लेकर वे वहाँ पहुँचे। पर उन्हे खिदमतगारी का काम बिलकुल न आता था। जब पहले पहल चार पाँच धनवानों के भोजन का प्रबंध उनके सपुर्द हुआ तब उनकी अयोग्यता देखकर उन धनवानों ने इतना फटकारा कि विवश होकर उन्हें बिना उन लोगों को भोजन कराए ही वहाँ से भाग जाना पड़ा। परिणाम यह हुआ कि वे उस पद से हटा दिए गए और उन्हे केवल रिकाबियाँ ले आने और ले जाने का काम दिया गया। पर पीछे कुछ ही सप्ताहों मे भोजन कराने का काम उन्होंने सीख लिया और अपना पहला पद पा लिया। अपने शेष जीवन मे वे कई बार उस होटल मे उतरे थे।

गरमी बीत जाने पर होटल बंद हो गया और वे अपने घर माल्डन चले गए। वहाँ उन्हे पाठशाला मे शिक्षक का स्थान मिल गया। यहीं से मानो उनके सुखपूर्ण जीवन का आरंभ हुआ। वे पहले ही से समझते थे कि केवल पुस्तको की शिक्षा विद्यार्थियों के लिये यथेष्ट न होगी। वे नित्य प्रातःकाल आठ बजे अपना काम आरंभ करके रात को दस बजे समाप्त करते थे और साधारण शिक्षाओं के अतिरिक्त विद्यार्थियों को कंघी करना और अपने हाथ पैर तथा कपड़े आदि स्वच्छ रखना भी सिखलाते थे। स्नान तथा दांत साफ करने की शिक्षा की ओर वे अधिक ध्यान दिया करते थे। बहुत से ऐसे पुरुषों और स्त्रियों के लिये, जिन्हें दिन के समय काम करने के कारण बहुत ही थोड़ा अवकाश मिलता था, उन्हे एक रात्रि-पाठशाला भी खोलनी पड़ी। उसके खुलते ही बहुसंख्यक विद्यार्थी उसमे आने लगे। ५०-६० वर्ष तक के पुरुषों और स्त्रियों का शिक्षा-प्राप्ति के लिये उद्योग करने का दृश्य बड़ा ही करुणोत्पादक होता था।

इन दो पाठशालाओ के अतिरिक्त वाशिंगटन ने एक पुस्तकालय तथा एक वाद-सभा की भी स्थापना की थी। रविवार को प्रातःकाल वे अपने गाँव से तीन मील दूर एक विद्यालय मे पढ़ाने जाते थे और वहाँ से लौटकर तीसरे पहर अपने गाँव की पाठशाला मे पढ़ाते थे। ये दोनों पाठशालाएँ केवल रविवार को ही खुलती थीं। इसके अतिरिक्त जिन

विद्यार्थियों को वे हैंपटन विद्यालय मे भेजने के योग्य समझते थे उन्हे वे विशेष रूप से अलग भी शिक्षा दिया करते थे। वे वेतन या वृत्ति आदि का कुछ भी ध्यान न करते थे और विद्या पढ़ने के लिये उनके पास जो आता था उसे भली भाँति पढ़ाते थे। दूसरों को किसी प्रकार की सहायता देने मे उन्हें परम प्रसन्नता होती थी। इन सब कामो के लिये उन्हे सार्वजनिक फंड से जो वेतन मिलता था वह बहुत ही थोड़ा था।

जिस समय वाशिंगटन छात्रावस्था मे हैंपटन मे रहते थे, उस समय उनके बड़े भाई जान ही खान मे मजदूरी करके गृहस्थी का पालन करते और कभी कभी उन्हें भी कुछ सहायता भेजा करते थे। अपने भाई को शिक्षा दिलाने मे लगे रहने के कारण ही वे स्वयं कुछ पढ़ लिख न सके थे। अब वाशिंगटन इस उद्देश्य से धन संग्रह करने लगे कि यथावकाश वे अपने भाई जान को भी विद्योपार्जन के लिये हैंपटन भेज सकें। इस उद्देश्य मे उन्हे पूरी सफलता हुई और तीन वर्षों मे उनके भाई ने भी हैंपटन मे पूरी शिक्षा प्राप्त कर ली। आजकल वे महाशय टस्केजी विद्यालय में शिल्प विभाग के सुपरिटेंडेंट हैं। पीछे से इन दोनो भाइयों ने जेम्स नामक अपने दत्तक भाई को भी शिक्षा प्राप्त करने के लिये हैंपटन भेजा। जेम्स आजकल टस्केजी विद्यालय के पोस्ट मास्टर हैं।

जिस समय वाशिंगटन अपने गाँव माल्डन मे रहते थे उस समय "कु-क्लुक्स-क्लान" (Ku Klux Klan) नामक संस्था

वहुत जोरों पर थी। कु-क्लुक्स दल में वे गोरे थे जो हवशियों के व्यवहारो को परिमित रखते थे और उन्हे राजनीतिक विषयों में सम्मिलित होने से रोकते थे। उनकी समता उन पेट्रोलर्स (Patrollers) से की जा सकती है जो 'सिविल वार' से पहले इसी प्रकार हवशियो पर तीव्र दृष्टि रखते थे, उन्हें विना पास के एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने से रोकते थे, और विना आज्ञा के और विना किसी एक गोरे की उपस्थिति के हवशियों की सभा-समितियाँ न होने देते थे। इन लोगो की भाँति कु-क्लुक्स के सव कार्य्य भी रात ही को होते थे। कु-क्लुकस अपेक्षाकृत कुछ अधिक निर्दयी भी होते थे। उन लोगों का मुख्य उद्देश्य हवशियों की उच्चाकांक्षाएँ नष्ट करना था। कभी कभी वे लोग पाठशालाएँ और गिरजे तक जला दिया करते थे और निरपराधों को वहुत कष्ट दिया करते थे। उनके कारण वहुत से लोगों के प्राण तक जा चुके थे।

युवावस्था के कारण वाशिंगटन के हृदय पर इन अन्यायों का वहुत प्रभाव पड़ा था। एक बार उन्होंने अपने गाँव में हवशियों और कु-क्लुक्स में एक छोटा युद्ध होते भी देखा था जिसमें दोनों ओर सौ सौ आदमी थे। उस युद्ध मे वहुत से लोग वुरी तरह से घायल हुए थे, जिनमे श्रीमती रफनर के पति भी थे। जनरल रफनर हवशियों की ओर थे। उस समय वाशिंगटन का अनुमान हुआ था कि अव कदाचित् उस देश मे हवशियों को रहना न मिलेगा। तव से अव उस देश

की अवस्था में बहुत कुछ परिवर्तन हो गया है और अब वहाँ इस प्रकार के दलों या संस्थाओं का अस्तित्व नहीं है।

५—पुनर्घटनात्मक काल

अमेरिका के इतिहास मे सन् १८६७ से १८७२ तक का समय "पुनर्घटनात्मक (Reconstruction) काल" कहा जा सकता है*। उस काल मे हबशियों को सब से अधिक दो ही बातों की चिंता रहा करती थी, एक तो ग्रीक और लैटिन सीखने की और दूसरे नौकरी करके कोई पद पाने की। जिस जाति के लोगों ने कई पीढ़ियाँ बड़ी ही दुर्दशा और दासत्व में बिताई थीं उस जाति के लिये पहले पहल शिक्षा का ठीक उद्देश्य समझना बहुत ही कठिन था। उन दिनों दक्षिण अमेरिका के प्रत्येक स्थान मे दिन और रात की पाठशालाएँ खुल गई थीं जिनमे साठ और सत्तर वर्ष तक की अवस्था के विद्यार्थी जाया करते थे। शिक्षा-प्राप्ति के लिये उन लोगों का यह उद्योग बहुत ही सराहनीय और उत्तेजनीय था। उस समय सब लोगों मे यही विचार फैल गया था कि थोड़ी शिक्षा प्राप्त कर लेने से ही मनुष्य सब प्रकार की सांसारिक कठिनाइयो से बच जाता है और उसे किसी प्रकार का शारी-

* वाशिंगटन ने छात्रावस्था तथा शिक्षक की दशा मे जो समय विताया था, उसका समावेश भी इसी काल के अंतर्गत है।

रिक श्रम करने की कोई आवश्यकता नहीं रह जाती। इसके अतिरिक्त लोग यह भी समझते थे कि ग्रीक और लैटिन का थोड़ा सा ज्ञान होते ही मनुष्य में लोकोत्तर गुण आ जाते हैं और वह देव-तुल्य बन जाता है। वाशिंगटन ने भी पहले पहल विदेशी भाषा जाननेवाले एक मनुष्य को देखकर यही अनुमान किया था कि लोग उसकी दशा पर ईर्ष्या करते हैं।

अधिकाश हवशी पढ़-लिखकर या तो शिक्षक बन जाते थे या उपदेशक। यद्यपि उनमे से अधिकाश लोग योग्य और सदाचारी होते थे, और अधिक उत्तम कार्य्य कर सकते थे तथापि वे लोग इन्ही दोनों कार्य्यों को जीविकानिर्वाह का सुगम उपाय समझते थे। जिन लोगों मे हस्ताक्षर करने से कुछ ही अधिक योग्यता होती थी, वे भी शिक्षक बन बैठते थे। उपदेशकों की भी प्रायः यही दशा थी। उनमे केवल अशिक्षित ही नहीं बल्कि दुराचारी लोग भी सम्मिलित हो जाते थे। उस समय लोगों की यह धारणा थी कि उपदेशक बनने के लिये लोगों को ईश्वर की ओर से प्रेरणा या आदेश होता है। यह आदेश या प्रेरणा मनुष्य को प्रायः उसी समय हुआ करती थी जब कि वह गिरजे मे बैठा होता था। बैठे बैठे मनुष्य अचानक भूमि पर गिर पड़ता और घंटों के लिये बेहोश हो जाता था। उसी समय लोग समझ लेते थे कि इस मनुष्य को उपदेशक बनने की प्रेरणा हुई है। ये विचार उन दिनों इतने अधिक फैले हुए थे कि वाशिंगटन को

भी युवावस्था में यह भय लगा रहता था कि शिक्षा प्राप्त कर लेने पर कहीं मुझे भी इसी प्रकार की प्रेरणा न हो जाय, पर वह बात नहीं हुई।

शिक्षितों के साथ अशिक्षित उपदेशकों को मिला देने से उनकी संख्या बहुत अधिक बढ़ जाती थी। एक गिरजे के दो सौ आदमियो मे से अठारह उपदेशक थे। पर समय के परिवर्त्तन के साथ ही साथ आजकल ये बातें बहुत ही कम हो गई हैं और अब लोगों को उपदेशक बनने की अपेक्षा व्यापारी या शिल्पकार बनने के लिये अधिक प्रेरणाएँ हुआ करती हैं। शिक्षकों की दशा तो अब इनसे और भी अच्छी और संतोष-जनक हो गई है।

पुनर्घटनात्मक काल मे दक्षिण अमेरिका के हबशी बात बात के लिये ठीक उसी प्रकार संयुक्त सरकार (Federal Government) का मुँह देखा करते थे जिस प्रकार बालक अपनी माताओं का देखा करते हैं; और उनका यह कृत्य कुछ अस्वाभाविक भी नहीं था। सरकार ने उन्हे स्वतन्त्रता दी थी और समस्त राष्ट्र दो शताब्दियों तक हबशियों के परिश्रम से बहुत कुछ लाभ उठा चुका था। युवावस्था में और बड़े होने पर बहुत दिनों तक वाशिंगटन की ऐसी धारणा थी कि हबशियों को स्वतंत्र करके राज्यों ने उनकी शिक्षा का जो प्रबंध किया था, उसके अतिरिक्त, लोगों को योग्य नागरिक बनाने के लिये संयुक्त सरकार का शिक्षा-संबंधी कोई विशेष प्रयत्न

न करना बड़ा भारी पाप है। पर आगे चलकर उनकी यह धारणा बदल गई और उन्होंने समझ लिया कि सरकार ने जो कुछ किया वह बहुत ही ठीक था। युवावस्था मे वे यही समझते थे कि सरकार बहुत भूल कर रही है और वर्त्तमान स्थिति अधिक दिनो तक न ठहरेगी। वे समझते थे कि सरकार ने हमारी जाति के संबंध में जो नीति निश्चित की है वह अस्वाभाविक है और उसका मूल ठीक नहीं है। अनेक अवसरों पर उन्हे यह मालूम होता था कि सरकार हमारी अज्ञानता से लाभ उठाकर गोरों को बड़े बड़े पद देती है और उत्तर अमेरिका के कुछ लोग दक्षिण अमेरिका के गोरों को, हबशियों के अधीन रखकर, कुछ दंड देना चाहते हैं, पर वाशिंगटन का अनुमान था कि अंत मे इसका दुष्परिणाम हबशियों को ही भोगना पड़ेगा। तिस पर से अभाग्यवश हबशियों का ध्यान शिल्पकला तथा धनोपार्जन की ओर से हटकर राजनीतिक झगड़ों की ओर अधिक लग गया था।

राजनीतिक जीवन के प्रलोभन इतने अधिक थे कि वाशिंगटन बड़ी कठिनता से उनसे बच सके। उन्होंने विचार-पूर्वक देखा कि वर्त्तमान पीढ़ी की मानसिक, आत्मिक तथा शिल्पसंबंधिनी शिक्षा की नींव डालने में सहायता देकर ही मैं जाति की अधिक वास्तविक सेवा कर सकूँगा। उन्होंने राजकीय कौंसिल के अनेक ऐसे हबशी सभासदों तथा प्रांतीय अधिकारियों को देखा था जो न तो कुछ लिख-पढ़ ही सकते

थे और न सदाचारी ही थे। एक बार एक नगर की गली मे घूमते हुए उन्होंने देखा कि दो खंड की बननेवाली एक इमारत पर से एक चिल्लाकर कह रहा है—"गवर्नर! जल्दी ईंटे लाओ।" "गवर्नर! जल्दी करो। गवर्नर! जल्दी करो।" इस पर उन्हे इतना कुतूहल हुआ कि उन्होंने पता लगाकर मालूम कर लिया कि वह "गवर्नर" एक हबशी है जो पहले उस राज्य का लेफ्टिनेंट गवर्नर रह चुका है। लेकिन इससे यह न समझना चाहिए कि उन दिनों के सभी हबशी अधिकारी ही थे। उनमे से बहुत से लोग ऐसे भी थे जो विद्या, बुद्धि और सदाचार आदि के लिये आदर्श कहे जा सकते थे। तथापि बहुत से अशिक्षित अधिकारियो के कारण राजकार्य्य मे अनेक भयंकर भूलें हो गई थीं, और अब भी बहुत से लोगों का यह अनुमान है कि यदि हबशियों को अपने राजनीतिक अधिकारों का उपयोग करने की स्वतंत्रता दे दी जाय तो पुनः उसी प्रकार की अनेक भूलें हो सकती हैं। पर यह बात ठीक नहीं मालूम होती, क्योंकि गत चालीस वर्षों मे हबशी कहीं अधिक योग्य और बुद्धिमान् हो गए हैं और सब विषयों को भली भाँति समझने लगे हैं। इसके अतिरिक्त सरकार की वर्त्तमान नीति गोरों और हबशियों के लिये समान रूप से उपयोगी है, और यदि उसमे किसी प्रकार का परिवर्त्तन करके किसी पक्ष को कोई विशेष अधिकार दिए जायँ अथवा किसी दूसरे मार्ग का अवलंबन किया जाय तो

उन दोनों पक्षों के लिये अन्याय होगा और आगे चलकर सब को उसका फल भोगना पड़ेगा।

माल्डन में दो वर्ष तक शिक्षक का काम करके सन् १८७८ के अंत मे हमारे चरित्रनायक वाशिंगटन नगर मे चले गए और वहाँ आठ मास तक विद्याभ्यास करते रहे। वहाँ की शिक्षा से उन्हें वहुत लाभ हुआ तथा वे अनेक योग्य स्त्रियों और पुरुषों से मिले। जिस विद्यालय मे वे प्रविष्ट हुए थे, उसमे विद्यार्थियों को किसी प्रकार की शिल्प-संवंधी शिक्षा नहीं दी जाती थी। वहाँ रहकर उन्होने देखा कि प्राय: विद्यार्थी धनवान् होते थे, उनके वस्त्र आदि वहुमूल्य और भड़कीले होते थे और उनमे से कुछ की मानसिक शक्ति भी वहुत प्रवल हुआ करती थी। लेकिन हैंपटन-विद्यालय मे—जहाँ कि शिल्प-शिक्षा का भी प्रवंध था—यह एक साधारण नियम था कि विद्यालय सब विद्यार्थियों की शिक्षा का व्यय किसी के द्वारा दिलवाने का उत्तरदायित्व अपने ऊपर ले लेता था और विद्यार्थियों को अपनी शिक्षा, भोजन, वस्त्र और निवास आदि का कुल व्यय काम करके, अथवा उसका कुछ अंश काम करके और कुछ नगद चुकाना पड़ता था पर इस विद्यालय मे वह वात नहीं थी। विद्यार्थी किसी न किसी प्रकार अपने व्यय का निर्वाह कर लेते थे। हैंपटन-विद्यालय के विद्यार्थी अपना व्यय कोई न कोई काम करके निकालने की चेष्टा किया करते थे और उनकी प्रत्येक चेष्टा से उनके चरित्र-

गठन में बहुत सहायता मिला करती थी। पर इस विद्यालय के विद्यार्थियों मे आत्मनिर्भरता की मात्रा कम थी। उनका ध्यान अधिकतर ऊपरी तडक भड़क की ओर ही रहता था। तात्पर्य यह कि हैंपटन के विद्यार्थियों को देखते हुए उनकी जड़ अधिक मजबूत नही मालूम होती थी। विद्यालय छोड़ने पर उन्हे ग्रीक और लैटिन भाषाओ का तो अवश्य बहुत कुछ ज्ञान होता था पर सांसारिक तथा गार्हस्थ जीवन से वे बिलकुल अनभिज्ञ होते थे। कई वर्षों तक बहुत सुख से रहने के कारण वे दक्षिण अमेरिका के देहातो मे, हबशियों की उन्नति के कार्य्य करने के लिये न जा सकते थे और केवल खिदमतगारी और कुली का काम ही कर सकते थे।

हमारे चरित-नायक जिस समय वाशिंगटन नगर मे विद्याभ्यास करते थे, उस समय वह नगर दक्षिण अमेरिका से आए हुए हबशियों से भरा हुआ था। उनमें से अधिकांश लोग तो यही समझकर आए थे कि वहाँ चलकर हम सुख से जीवन व्यतीत कर सकेगे। कुछ लोगों को छोटी मोटी सरकारी नौकरियाँ भी मिल गई थीं और कुछ लोग नौकरियाँ पाने की आशा में थे। कुछ योग्य हबशी वहाँ की पार्लामेंट या प्रतिनिधि सभा (House of Representatives) मे भी थे और एक सज्जन सिनेट तक के सभ्य हो गए थे। इन सब कारणों से वाशिंगटन मे बहुत से हबशी आने लगे। इसके अतिरिक्त वे लोग भी यह समझते थे कि कोलंबिया प्रांत मे हम

राजनियमों से रक्षित रहेगे। वाशिंगटन के सार्वजनिक विद्यालय भी और स्थानों के विद्यालयों से कहीं अच्छे थे। वाशिंगटन ने वहाँ अपने स्वजातियों के जीवन को जव बहुत सूक्ष्म और विचार की दृष्टि से देखा तो उन्हे मालूम हुआ कि यद्यपि उनमें से वहुत से लोग योग्य नागरिक थे, तौ भी अधिकांश की दशा संतोषजनक नहीं थी। उन्होंने अनेक ऐसे हवशियों को वहाँ देखा था जो सप्ताह मे केवल चार डालर कमाते थे और रविवार के दिन दो डालर खर्च करके सैर करने के लिये वग्घियों पर सवार होकर निकलते थे; और पचहत्तर और सौ डालर वेतन पानेवाले सरकारी अफसर भी प्रत्येक मास की समाप्ति पर कर्ज से लद जाते थे। उन्होने कई ऐसे आदमियों को भी देखा था जो कई मास पहले कांग्रेस के सभासद थे, पर उस समय वे विलकुल दरिद्र हो रहे थे और उन्हे कोई काम न मिलता था। वे लोग अपनी दशा स्वयं सुधारने की बहुत थोड़ी चेष्टा करते थे और प्रायः उसके लिये सरकार का ही मुँह ताकते थे। उस समय, तथा उसके वाद अब तक कई वार वाशिंगटन ने यह इच्छा की कि किसी ऐंद्रजालिक शक्ति से उनमें से अधिकांश लोगों को गाँवों और देहातों में ले जाकर उस प्रकृति माता के सहारे और आसरे पर छोड़ दें जो कभी धोखा नहीं दे सकती और जो समस्त यशस्वी राष्ट्रों और जातियों की उन्नति का मूल स्थान है। यद्यपि इस मूल स्थान से होनेवाला अभ्युदय और उसका मार्ग

मंद और कठिन मालूम होता है, तथापि वह वास्तविक और बहुत ठीक है ।

उन्होंने वाशिंगटन में आकर ऐसी बालिकाओं को भी देखा जिनकी माताएँ कपड़े धोकर अपना जीवन निर्वाह करती थीं। अपनी माताओं से कपड़े धोने की शिक्षा पाकर वे बालिकाएँ विद्यालय में प्रविष्ट हुईं और वहाँ सात आठ वर्ष तक रहीं। विद्यालय से निकलते ही उन्हे बहुमूल्य वस्त्रों, जूतों और टोपियों की आवश्यकता पड़ी। उनकी योग्यता की अपेक्षा उनकी आवश्यकताएँ कहीं अधिक बढ़ गई थीं। सात आठ वर्ष की शिक्षा के कारण वे कपड़े धोने मे भी असमर्थ हो गई थीं। इन सब बातो का परिणाम यह हुआ कि उनमे से अधिकांश का चरित्र भ्रष्ट हो गया। वाशिंगटन के विचारों के अनुसार यदि उन्ही बालिकाओं को चरित्र शुद्ध रखनेवाली मानसिक शिक्षा के साथ साथ कपड़े धोने या इसी प्रकार के और कामों की भी शिक्षा दी जाती तो यह कही अधिक उत्तम और बुद्धि-मत्ता का कार्य होता।

६—वर्ण और जातिभेद

सन् १८७८-७९ मे पश्चिम वर्जीनिया मे राजधानी को ह्वीलिंग से किसी और मध्यस्थ नगर मे उठा ले जाने के लिये बहुत आंदोलन हो रहा था। सरकार की ओर से तीन नगरो

के नाम वतलाए गए थे और उनके संबंध मे राज्य के नागरिकों की सम्मति माँगी गई थी। उन तीन नगरों मे से एक नगर चार्लस्टन भी था जो वाशिंगटन के निवास-स्थान माल्डन से केवल पाँच मील दूर था। जव वाशिंगटन ने वाशिंगटन विद्यालय की शिक्षा समाप्त कर ली तब चार्लस्टन के गोरे निवासियों की एक समिति ने उन्हे अपने नगर को राजधानी वनाने के उद्योग में सहायता देने के लिये निमंत्रित किया। तदनुसार वे वाशिंगटन राज्य के भिन्न भिन्न स्थानों मे तीन मास तक वक्तृताएँ देते फिरे और अंत में उन्हीं के पक्ष की जीत हुई। राजधानी उठकर चार्लस्टन चली गई और अव तक वहीं है। इस उद्योग मे वाशिंगटन की वहुत प्रसिद्धि हुई और लोग उन्हे वहुत अच्छा वक्ता समझने लगे। वहुत से लोगों ने उन्हे राजनीतिक जीवन में प्रविष्ट कराना चाहा, पर उस समय तक उन्हे यही विश्वास था कि अपनी जाति की वास्तविक सेवा करने के लिये मुझे इसकी अपेक्षा कोई और अधिक उत्तम मार्ग मिल जायगा और इसी लिये उन्होंने वह प्रस्ताव अस्वीकृत कर दिया। उस समय उन्हे दृढ विश्वास था कि मेरे स्वजातियों को शिक्षा, शिल्प और संपत्ति की वहुत अधिक आवश्यकता है और राजनीतिक झंझटों मे फँसने की अपेक्षा इसी आवश्यकता को पूरा करना उन्हे अधिक अभीष्ट था। यद्यपि वे समझते थे कि राजनीतिक विषयो मे भी मुझे यथेष्ट कृतकार्यता होगी, तथापि वह मार्ग उन्हें स्वार्थपूर्ण मालूम हुआ

और उन्होंने अपने व्यक्तिगत लाभ के लिये समाजोन्नति-संबंधी कर्त्तव्य से मुँह मोड़ना अनुचित समझा।

उन दिनों स्कूलों और कालिजों से निकले हुए बहुत से युवक राजसभा के सभासद या वकील बनने के लिये चेष्टा करते थे, और बहुत सी स्त्रियाँ संगीत-शिक्षिका बनने का उद्योग करती थी। पर वाशिंगटन का ध्यान लोगों को शिक्षा देकर इन कामो के योग्य बनाने की ओर था। दासत्व-काल मे हबशियों की अज्ञानता बहुत अधिक बढ़ी हुई थी, और उस अज्ञानता को दूर करना ही उनका मुख्य उद्देश्य था। राजधानी संबंधी कार्य्य से छुट्टी पाते ही संयोगवश उन्हे जनरल आर्मस्ट्रांग का एक पत्र मिला जिसमे उन्होंने वाशिंगटन को हैंपटन-विद्यालय के पदवी-दान के अवसर पर नए ग्रेजुएट विद्यार्थियों के समक्ष एक वक्तृता देने के लिये निमंत्रित किया था। यह कार्य्य बड़े महत्व और सम्मान का था और वाशिंगटन को उसका भार पाने की स्वप्न मे भी आशा न थी। उन्होंने अपने लिये "यशस्वी शक्ति" (The force that wins) का विषय निश्चित किया और बहुत सावधानतापूर्वक अपनी वक्तृता तैयार की।

छः वर्ष पहले विद्याध्ययन के अभिप्राय से जिस मार्ग से वाशिंगटन को रेल न होने के कारण पैदल चलकर हैंपटन जाना पड़ा था उसी मार्ग से इस बार वे बराबर रेल पर गए। इन्हीं पाँच छः वर्षों में वाशिंगटन की दशा मे भी आकाश-

पाताल का अंतर हो गया था; और इस बात से सब लोगों को बहुत अच्छी शिक्षा मिल सकती है। हैंपटन में शिक्षकों और विद्यार्थियों ने उनका बहुत अच्छा स्वागत किया। उन्होंने देखा कि विद्यालय लोगों की वास्तविक आवश्यकताएँ पूरी करने के लिये उत्तरोत्तर उन्नति करता और अधिक उपयोगी बनता जाता है। शिल्प, विज्ञान तथा अन्य विषयों की शिक्षा के प्रबंध मे बहुत कुछ उन्नति हुई थी। प्रायः शिक्षा तथा अन्य परोपकारी कार्य्यों के लिये लोग सैकड़ों वर्ष के पुराने अथवा हजारों मील दूर होनेवाले कार्य्यों को ही आदर्श मानते और उनका अनुकरण करते हैं, और अपनी स्थिति या उद्देश्य को भूलकर अपने कार्य्यों को किसी निश्चित साँचे मे ही ढालना चाहते हैं। पर हैंपटन-विद्यालय में यह बात नहीं थी, वहाँ की प्रणाली आदि बिलकुल स्वतंत्र थी और सब कार्य्य जनरल आर्मस्ट्रांग के विचारों के अनुसार तथा उनकी देख-रेख मे, देश, काल और पात्र का विचार रखकर किए जाते थे।

पदवी-दान के दिन, वाशिंगटन ने जो भाषण किया उसे सुनकर सब लोग बहुत प्रसन्न और संतुष्ट हुए। शीघ्र ही उन्हे इस बात का एक बहुत अच्छा प्रमाण भी मिल गया। पश्चिम वर्जीनिया पहुँचने पर जहाँ वे पुनः अपना शिक्षक का काम करना चाहते थे, उन्हे जनरल आर्मस्ट्रांग का एक और पत्र मिला, जिसमें उनसे कुछ तो शिक्षक का काम करने के

लिये और कुछ नई शिक्षा के लिये हैंपटन आने की प्रार्थना की गई थी। यह बात सन् १८७९ की ग्रीष्म ऋतु की है। इससे पूर्व वे अपने दो भाइयो तथा दस अन्य योग्य विद्यार्थियों को विद्याध्ययन के लिये हैंपटन भेज चुके थे। वे सब लोग वहाँ पहुँचते ही उच्च कक्षाओं में प्रविष्ट हो गए थे, इसलिये उनकी योग्यता देखकर भी वहाँ के शिक्षकों ने वाशिंगटन के गुणों का परिचय पा लिया था। उनके भेजे हुए शिष्यों में से एक डाक्टर सेमुएल कर्टने हैं जो आजकल बोस्टन नगर के एक प्रतिष्ठित चिकित्सक और वहाँ के स्कूल-बोर्ड के एक सभासद हैं।

उन्हीं दिनों जनरल आर्मस्ट्रांग पहले पहल परीक्षास्वरूप अपने विद्यालय मे इंडियन लोगों की शिक्षा का प्रबंध कर रहे थे। इंडियनो की योग्यता आदि के संबंध मे लोगो को बहुत संदेह था और किसी को यह आशा न होती थी कि वे शिक्षा से कोई लाभ उठा सकेंगे। जनरल आर्मस्ट्रांग इस कार्य्य को अधिक विस्तृत रूप से करना चाहते थे। उन्होने पश्चिमी राज्यों से एक सौ से अधिक निपट जंगली और बहुत ही अज्ञान मनुष्यों को, जिनमें से अधिकांश युवक ही थे, अपने यहाँ शिक्षा देने के लिये बुलवाकर रखा था। वाशिंगटन को वे उन सब विद्यार्थियों के पालक और निरीक्षक का काम देना चाहते थे, जिस दशा मे कि उन्हे उन विद्यार्थियों के साथ एक ही मकान मे रहकर उनके निवास, वस्त्र, चरित्र और व्यवहार आदि की देखरेख करनी पड़ती। उस समय वे अपने पश्चिम

वर्जीनियावाले काम मे वहुत मग्न थे और उसे छोड़ने मे उन्हे वहुत कष्ट वोध होता था। वड़ी कठिनता से उन्होने उस कार्य्य से अपना संवंध तोड़ा, क्योकि जनरल आर्मस्ट्रांग की इच्छित सेवा से वे मुँह नहीं मोड़ सकते थे।

हैंपटन पहुँचने पर रहने के लिये वाशिंगटन को एक ऐसा मकान मिला जिसमें प्राय: पचहत्तर इंडियन युवक रहते थे। उस मकान भर मे इंडियनो के लिये वे ही एक मात्र विजातीय थे। पहले तो उन्हें अपनी सफलता मे वहुत कुछ संदेह था, क्योकि इंडियन लोग अपने आपको गोरो से भी अधिक श्रेष्ठ समझते थे। हवशी लोग गुलामी कर चुके थे, पर इंडियन लोग कभी ऐसा करना स्वीकार न कर सकते थे। दासत्व-काल मे इंडियनों के पास स्वयं वहुत से हवशी दास थे। इसके अतिरिक्त, सर्वसाधारण का यह भी विश्वास था कि हैंपटन विद्यालय मे इंडियनों को शिक्षित बनाने के उद्योग में सफलता न होगी। वाशिंगटन अपने उत्तरदायित्व को भली भाँति समझते थे, इसलिये इन सव वातो से वे वहुत सचेष्ट हो गए और उन्होने सफलता प्राप्त करने का दृढ़ निश्चय कर लिया। उनके व्यवहारों से इंडियन विद्यार्थी वहुत ही शीघ्र संतुष्ट हो गए, उनका यथेष्ट आदर करने लगे और यथा-साध्य उन्हें सुखी और प्रसन्न रखने की चेष्टा करने लगे।

वाशिंगटन ने अपने अनुभव से जान लिया कि अँगरेजी सीखने की कठिनता को छोड़कर व्यापार-संवंधिनी तथा अन्य

प्रकार की शिक्षाएँ ग्रहण करने मे हब्शी और इंडियन विद्यार्थियों मे बहुत ही थोड़ा अंतर है। उन्हे यह देखकर और भी अधिक प्रसन्नता होती थी कि हवशी विद्यार्थी, सदा इंडियनों को यथासाध्य सब प्रकार की सहायता दिया करते हैं। केवल थोड़े से हवशी विद्यार्थी ऐसे थे जो इंडियनों के हैंपटन-विद्यालय मे प्रविष्ट होने के विरुद्ध थे, और नहीं तो अधिकांश हब्शी सदा उन्हें अपने साथ एक ही कमरे मे रखने और उन्हे अँगरेजी बोलना सिखाने के लिये उद्यत रहते थे। इंडियनो का जितना अधिक अभिनंदन हैंपटन-विद्यालय के हवशी विद्यार्थियों ने किया था, उतना अमेरिका के किसी विद्यालय के गोरे विद्यार्थी नहीं कर सकते थे। इसी लिये वाशिंगटन ने गोरे विद्यार्थियों को कई बार यह समझाना चाहा था कि मनुष्य दूसरों की जितनी अधिक सहायता करता है वह स्वयं भी उतनी ही अधिक उन्नति करता है, और मनुष्य छोटी और असभ्य जाति की जितनी ही सहायता करता है, वह स्वयं भी उतना ही अधिक उन्नत होता है।

उन दिनो अमेरिका मे जाति-भेद की बहुत अधिक प्रबलता थी। एक बार आनरेबुल फ्रेडरिक डगलस नामक एक सज्जन को हवशी होने के कारण रेल मे माल लादने की गाड़ी में बैठना पड़ा था। उस अवसर पर एक अँगरेज यात्री ने उनसे कहा था—"मिस्टर डगलस, मुझे इस बात का बहुत दु:ख है कि आप इस प्रकार अपमानित किए गए।" मि० डगलस

ने उत्तर दिया—"वे फ्रेडरिक डगलस का अपमान नहीं कर सकते। मुझमे जो आत्मा है, उसे कोई अपमानित नहीं कर सकता। उस प्रकार के व्यवहार से मैं अपमानित नहीं हुआ हूँ, बल्कि वेही लोग अपमानित हुए हैं जिन्होंने मेरे साथ ऐसा व्यवहार किया है।"

कभी कभी रेलवे अधिकारियों को हवशियों और गोरो का भेद करने मे बड़ी कठिनता होती थी। एक बार एक हवशो जिसका रंग प्रायः गोरों के समान ही था, हवशियों की गाड़ी मे बैठा हुआ था। रेल-कंडक्टर उसे देखकर बहुत चकराया, क्योंकि यदि वह मनुष्य हवशो था तो वह उसे गोरो की गाड़ी मे नहीं भेज सकता था और यदि वह गोरा था तो वह उससे यह पूछकर कि "क्या आप हवशी हैं?" उसका अपमान नहीं कर सकता था। इसलिये वह उस यात्री के सर्वांग को बड़े ध्यान से देखने लगा, पर उसका संदेह दूर न हुआ। अंत में उसने उसके पैरों की ओर देखा और थोड़ी देर मे निश्चय कर लिया कि वह हवशी ही है। वाशिंगटन ने भी वह दृश्य अपनी आँखों से देखा था, इसलिये उन्होंने अपना अहोभाग्य समझा कि मेरी जाति ने कम से कम अपना एक चिह्न तो बचा रखा है। तभी से उन्होंने यह सिद्धांत स्थिर किया कि किसी मनुष्य की सज्जनता की परीक्षा उसी समय करनी चाहिए जब कि वह अपने से अभागी जाति के मनुष्य से किसी प्रकार का व्यवहार कर रहा हो।

लेकिन पुराने ढंग के दक्षिणी गोरे अपने पुराने गुलामों और उनके वंशजों के साथ ऐसा अनुचित व्यवहार नहीं करते थे। जार्ज वाशिंगटन के संबंध मे यह प्रसिद्ध है कि एक बार जब एक हबशी ने सड़क पर उन्हे सलाम करने के लिये अपनी टोपी उतारी, तब उन्होंने उत्तर-स्वरूप अपनी टोपी भी उतार ली। इस पर उनके एक मित्र ने कुछ टीका-टिप्पणी की। जार्ज वाशिंगटन ने उसे उत्तर दिया—"क्या तुम यह समझते हो कि एक दीन अशिक्षित हबशी को मैं अपने से अधिक नम्र बन जाने दूँगा?"

वाशिंगटन ने इसी प्रकार की और भी दो एक घटनाएँ देखी थीं। एक बार एक इंडियन विद्यार्थी बीमार पड़ा। नियमानुसार विद्यालय का यह कर्त्तव्य था कि वह किसी प्रकार उस विद्यार्थी को वाशिंगटन नगर मे पहुँचा दे और उसे अपने निवास-स्थान पश्चिमी जंगलों मे पहुँचाने के लिये उस प्रांत के मंत्री के सपुर्द करके उसके लिये एक रसीद ले ले। यह कार्य वाशिंगटन के सपुर्द हुआ। उस समय तक वे सांसारिक व्यवहारो से प्रायः अनभिज्ञ ही थे। वे उस विद्यार्थी को साथ लेकर स्टीमर द्वारा वाशिंगटन की ओर चले। मार्ग में स्टीमर पर भोजन का घंटा बजा। जब तक बहुत से यात्री भोजन न कर चुके तब तक वाशिंगटन ठहरे रहे और सब के पीछे अपने साथ उस विद्यार्थी को लेकर भोजन के कमरे मे घुसे। वहाँ के अधिकारी ने नम्रतापूर्वक उनसे कहा कि इंडियन तो यहाँ भोजन कर सकते हैं पर आप नहीं कर सकते।

वाशिंगटन इस बात का कुछ भी अनुमान न कर सके कि वर्ण का भेद किस प्रकार किया जाता है, क्योंकि इंडियन और उनका वर्ण प्रायः एक ही सा था। विद्यालय के अधिकारियों ने उनसे कह दिया था कि वाशिंगटन नगर मे आप उस विद्यार्थी सहित अमुक होटल मे ठहरे। पर जब वे उस होटल मे पहुँचे तब वहाँ के क्लर्क ने उनसे कहा कि हम इंडियन को तो अपने यहाँ स्थान दे सकते हैं, पर हबशी को नहीं।

एक बार एक काले आदमी के किसी होटल मे ठहरने के कारण वहाँ के लोगो मे इतनी अधिक खलबली मची थी कि मानो वे उसे बिना किसी प्रकार का विचार किए ही बडा भारी दंड दे डालेगे। पर जब अनुसंधान करने पर उन्हे मालूम हुआ कि वह अमेरिकन हबशी नही बल्कि मरक्को देश का निवासी है और अँगरेजी केवल शौक से बोलता है, तब उनकी सारी व्यग्रता दूर हो गई। तभी से उस बेचारे मनुष्य ने यह भी निश्चित कर लिया कि अब इन प्रांतो मे यात्रा करते समय मैं कभी अँगरेजी न बोलूँगा।

हैंपटन में एक वर्ष तक इंडियन विद्यार्थियो के साथ रहने के उपरांत संयोगवश वाशिंगटन को एक और सुअवसर मिल गया जिसके कारण आगे चलकर उन्हे टस्केजी के काम में बहुत सहायता मिली। जनरल आर्मस्ट्रांग ने देखा कि बहुत से हबशी, भोजन और पुस्तकों का व्यय न दे सकने के कारण, शिक्षा के लिये बहुत उत्सुक होने पर भी हमारे विद्यालय में

प्रविष्ट नहीं हो सकते, इसलिये उन्होंने विद्यालय के साथ एक ऐसी रात्रि-पाठशाला खोलने का विचार किया जिसमें केवल बहुत ही होनहार स्त्रियाँ और पुरुष इस शर्त्त पर लिए जायँ कि वे दिन में दस घंटे काम करे और रात को दो घंटे पढ़ें। उनके काम के बदले में, भोजन के अतिरिक्त उन्हे कुछ नगद देना भी विचारा गया था। इसके अतिरिक्त यह भी निश्चित हुआ था कि उनके काम की मजदूरी का कुछ अंश विद्यालय के कोश मे जमा किया जाय और जब एक या दो वर्ष तक रात्रि-पाठशाला में पढ़ने के बाद वे दिन के विद्यालय में प्रविष्ट हों तब उस जमा किए हुए धन से उनके भोजन आदि का व्यय चलाया जाय। इस प्रकार विद्यालय से होनेवाले लाभों के अतिरिक्त उनकी शिक्षा भी आरंभ हो जाती और उन्हें व्यापार या शिल्प आदि का भी ज्ञान हो जाता।

जनरल आर्मस्ट्रांग के कहने पर वाशिंगटन ने उस रात्रि-पाठशाला का भार अपने ऊपर लिया। आरंभ मे उसमें केवल बारह पुरुष और स्त्रियाँ सम्मिलित हुईं। दिन के समय पुरुष विद्यालय की ओर की कल मे काम करते थे और स्त्रियाँ कपड़े धोती थीं। यद्यपि ये दोनो ही काम बहुत कठिन थे, तो भी वाशिंगटन उन विद्यार्थियों से जितने अधिक संतुष्ट हुए थे उतने और किसी विद्यार्थी से कभी नहीं हुए। उन्हें विद्याध्ययन से इतना अधिक अनुराग था कि जब तक छुट्टी का घंटा न बजता तब तक वे अपना पाठ नहीं छोड़ते थे,

और प्राय: रात को सोने के समय भी वाशिंगटन से पढ़ाने के लिये आग्रह करते थे। दिन के समय काम में भी वे उतना ही अधिक परिश्रम करते थे। इसी लिये वाशिंगटन ने उनका नाम—"साहसी वर्ग" (The plucky class) रक्खा था, और शीघ्र ही इस नाम का प्रचार समस्त विद्यालय में हो गया। जब कोई विद्यार्थी अधिक समय तक रात्रि-पाठशाला में रहकर अपनी उत्कृष्ट योग्यता का परिचय दे चुकता, तब वाशिंगटन उसे उस "वर्ग" का एक प्रशंसापत्र देते थे। विद्यार्थी उस प्रशंसापत्र का बहुत अधिक आदर करते थे; और उसके कारण रात्रि-पाठशाला की सर्वप्रियता भी बहुत अधिक बढ़ गई थी। कुछ ही दिनों में उस पाठशाला के विद्यार्थियों की संख्या दूनी हो गई। पाठशाला छोड़ने पर वाशिंगटन ने सदा उन लोगों के कार्यों पर ध्यान रखा था। अब वे लोग दक्षिण अमेरिका के भिन्न भिन्न भागों में अच्छे पदों पर और उत्तम दशा में हैं। अब यह पाठशाला हैंपटन-विद्यालय का एक मुख्य और स्थायी अंग है और उसमें तीन चार सौ विद्यार्थी शिक्षा पाते हैं।

७—टस्केजी में प्रारंभिक दिन

हैंपटन में इंडियनों और रात्रि-पाठशाला का प्रबंध करने के साथ ही वाशिंगटन स्वयं भी विद्याभ्यास करते थे। मई

सन् १८८१ में अचानक उन्हे सौभाग्यवश अपने जीवन का मुख्य कार्य्य आरंभ करने का अवसर मिला। एक दिन गिरजा मे रात की उपासना होने के बाद जनरल आर्मस्ट्राग ने जिक्र किया कि टस्केजी नामक एक छोटे कसवे मे हबशियों के लिये एक नार्मल स्कूल खुलनेवाला है और उसके लिये अलवामा के कुछ सज्जनों ने एक आदमी मॉगा है। शायद वे लोग समझते थे कि इस कार्य्य के लिये कोई योग्य हबशी न मिलेगा और इसी लिये वे लोग आशा करते थे कि जनरल इस पद के लिये किसी गोरे की सिफारिश करेंगे। दूसरे दिन जनरल ने वाशिंगटन को अपने कार्य्यालय मे बुलाकर उनसे पूछा कि क्या आप अलबामा मे उस पद के लिये जा सकते हैं? उन्होने उत्तर दिया कि मैं यथाशक्ति इसके लिये उद्योग करूँगा। इस पर जनरल ने उसी समय उन लोगों को लिख दिया कि यदि आप लोग किसी हबशी को वह पद देना चाहे तो बुकर वाशिंगटन उसके लिये तैयार हैं। कई दिन बाद, रविवार के दिन संध्या समय, जनरल को गिरजा में ही एक तार मिला। उसमें लिखा था—"बुकर वाशिंगटन हम लोगों के लिये उपयुक्त हैं। उन्हें तुरंत भेज दीजिए।"

इस पर वहॉ के शिक्षकों और विद्यार्थियों ने बहुत प्रसन्नता प्रकट की और वाशिंगटन को हार्दिक बधाइयॉ दीं। वे भी तुरंत टस्केजी जाने के लिये तैयार होने लगे। हैंपटन से पहले वे अपने मकान पश्चिम वर्जीनिया गए और कई दिनों

तक वहाँ रहकर टस्केजी पहुँचे। टस्केजी की आबादी प्रायः दो हजार थी जिसमें से आधे हवशी थे। उस प्रांत को लोग दक्षिण का "ब्लैक बेल्ट"* कहते थे। टस्केजी प्रांत में हवशियों की जनसंख्या गोरों से तिगुनी और उसके आसपास के प्रांतो मे इससे भी कुछ अधिक थी। टस्केजी पहुँचने से पहले वाशिंगटन समझते थे कि वहाँ हमे विद्यालय के लिये भवन तथा अन्य आवश्यक उपकरण तैयार मिलेंगे। पर वहाँ पहुँचने पर उनकी सारी आशा व्यर्थ हो गई। वहाँ उन्हे भवन आदि तो कुछ भी न मिला, पर सैकड़ों दरिद्र विद्यार्थियों की भीड़ अवश्य दिखाई दी। विद्यालय के लिये टस्केजी बहुत ही उपयुक्त स्थान था। उसके आसपास हवशियों की बस्ती बहुत थी। दासत्व-काल मे और उसके उपरांत वहाँ गोरों की शिक्षा का अच्छा प्रबंध था। वहाँ के गोरे अन्य स्थानो के गोरो की अपेक्षा अधिक शिक्षित और सभ्य थे और इस बात से वाशिंगटन को कुछ लाभ भी हुआ। वहाँ के हवशी निवासी अशिक्षित होने पर भी दुर्व्यसनी नहीं थे। वहाँ के गोरों और कालों का पारस्परिक व्यवहार

* दासत्व-काल में "ब्लैक बेल्ट" उस स्थान को कहते थे जहा की भूमि उपजाऊ और मिट्टी करैल होती थी और इसी कारण जहाँ कृषि कार्य्य के लिये बहुत से हवशी दास रहा करते थे। पर सिविल वार के उपरांत "ब्लैक बेल्ट" उस स्थान को कहने लगे थे, जहाँ गोरों की अपेक्षा हवशियो की आबादी अधिक होती थी।

भी अच्छा था। इसके उदाहरण-स्वरूप वहाँ लोहे के सामान की एक बड़ी दूकान थी जो एक गोरे और एक हवशी के साझे में थी और गोरे साझीदार के जीवन तक यह साझा बराबर बना रहा।

वाशिंगटन के टस्केजी पहुँचने के एक वर्ष पूर्व वहाँ के निवासियों ने अपने प्रतिनिधियों द्वारा सरकार से प्रार्थना की थी कि वह टस्केजी में एक नार्मल स्कूल खोलने के लिये कुछ रकम दे। इस पर सरकार ने उन्हें प्रति वर्ष दो हजार डालर सहायता-स्वरूप देना स्वीकृत किया था। वाशिंगटन को शीघ्र ही यह बात भी मालूम हो गई कि सरकारी सहायता का धन केवल शिक्षकों के वेतन में व्यय किया जा सकता है, पर विद्यालय के लिये स्थान, भवन या अन्य आवश्यक पदार्थ मोल लेने के लिये अब भी कोई प्रबंध नहीं हुआ था। जो कार्य उनके सामने उपस्थित था वह अधिक उत्साहजनक न मालूम होता था। हाँ, वहाँ के हवशी निवासियों को विद्यालय खुलने की बहुत खुशी थी और वे लोग यथासाध्य सब प्रकार से उसकी सहायता करने के लिये तैयार थे।

वाशिंगटन को सबसे पहले विद्यालय के लिये स्थान की चिंता हुई। ढूँढ़ने पर उन्हें मेथोडिस्ट चर्च के निकट एक पुराना झोपड़ा मिला। चर्च और झोपड़ा दोनों ही बहुत बुरी दशा में थे। पहले मास तो उसकी दशा इतनी रद्दी थी कि बालकों के पाठ सुनने के समय जब कभी वर्षा होती तब एक

वृद्ध विद्यार्थी खड़ा होकर वाशिंगटन पर छाता लगाता था, और जब कभी उनके भोजन के समय वर्षा होती तब घर की मालकिन उन पर छाता लगाती थी ! उन दिनों अलबामा-निवासी राजनीतिक विषयों की ओर अधिक ध्यान दिया करते थे और चाहते थे कि वाशिंगटन भी हमारे पक्ष में हो जायँ क्योंकि इस संबंध में उन्हें विदेशियो पर पूरा विश्वास न था। एक मनुष्य वाशिंगटन के पास प्राय: आया करता था और उनसे कहा करता था—"हम चाहते हैं कि आप भी ठीक हम लोगों की तरह मत (वोट) दिया करे। हम लोग समाचारपत्र भली भाँति नहीं पढ़ सकते पर तो भी हम लोग सदा इस विषय पर ध्यान रखते हैं कि गोरे लोग किस पक्ष में मत दिया करते हैं और जब हमे उनका पक्ष मालूम हो जाता है तब हम लोग अपना मत उससे ठीक विरुद्ध देते हैं और तब हम लोग समझ लेते हैं कि हम लोगों ने उचित पक्ष मे मत दिया है।" पर अब वहाँ के हबशियों में ऐसी धारणा बिलकुल नहीं है। अब वे लोग सिद्धांत स्थिर करके और दोनों जातियों के लाभो का ध्यान रखते हुए मत देते हैं।

जून सन् १८८१ में वाशिंगटन टस्केजी पहुँचे थे। पहला मास विद्यालय के लिये स्थान आदि ढूँढ़ने, अलबामा मे यात्रा करके वहाँ के निवासियों की और विशेषत: देहातियों की वास्तविक स्थिति का पता लगाने और लोगों को विद्यालय-संबंधी विज्ञप्ति देने में ही बीत गया। उनकी अधिकांश यात्रा

एक खच्चर और छकड़ा गाड़ी पर देहातों में ही हुआ करती थी। देहातियों के साथ मे ही उनके छोटे झोंपडे मे वे भोजन और विश्राम किया करते थे। उनके खेतों, स्कूलों और गिरजों मे वे बिना पहले से कोई सूचना दिए ही पहुँच जाते थे और वहाँ की वास्तविक दशा का पता लगाया करते थे। बागो और जमींदारियों मे उन्होने यह एक नियम सा देखा कि सारा परिवार अपने अनेक संबंधियों और अभ्यागतों के साथ एक ही कमरे मे सोता है। नहाने धोने का प्रबंध, सब मकानों में, घर के बाहर आँगन मे ही रहता था। साधारणत: लोग सूअर का मांस और बाजरे की रोटी खाया करते थे। कभी कभी तो वाशिंगटन को केवल बाजरे की रोटी और उबाले हुए मटरो पर ही संतोष करना पड़ता था। यद्यपि देहातों में सब स्थानों पर अच्छे अच्छे फल और तरकारियाँ हो सकती थीं, पर वहाँ के निवासी अपने आलस्य और मूर्खता के कारण स्वयं कोई चीज नहीं बोते थे, और अधिक मूल्य पर बाजार से बाजरा और मांस मोल लेते थे। वे लोग केवल रूई बोना जानते थे और कभी कभी अपने दरवाजे पर भी उसे बो देते थे।

वहाँ के हबशी शौकीनी मे भी बहुत बढे चढे थे। प्राय: उनकी झोंपड़ियों में साठ साठ डालर मूल्य की कपड़ा सीने की कलें और बारह बारह, चौदह चौदह डालरों की घड़ियाँ रखी रहा करती थीं। एक बार वाशिंगटन एक मकान मे

चार और आदमियों के साथ भोजन करने बैठे थे। वहाँ उस समय भोजन करने का काँटा तो केवल एक ही था, पर सामने साठ डालर का एक बाजा अवश्य रखा हुआ था। कपड़ा सीने की कलो का व्यवहार भी बहुत ही कम होता था। घड़ियाँ बहुत ही कम ठीक चलती थी। यही नहीं बल्कि दस घरो मे से नौ घर तो प्रायः ऐसे ही होते थे, जहाँ के लोग घडी देखना बिलकुल जानते ही न थे। बाजों की भी प्रायः यही दशा थी। किसी बजानेवाले के अभाव के कारण वे भी यो ही पडे रहा करते थे। सब घरो मे प्रात.काल स्त्रियाँ उठकर दस पंद्रह मिनट मे थोड़ा सा मांस उबाल लेती थी और पुरुष उसी को रास्ते मे खाते हुए खेतों मे काम करने के लिये चले जाते थे। स्त्रियाँ प्रायः उसी बरतन मे जलपान किया करती थी जिसमे वह बनाया जाता था और बालक हाथ मे मांस और रोटी लेकर आँगन मे खेलते कूदते और खाते थे। जिस ऋतु मे मांस मँहगा हो जाता था, उस ऋतु मे मास केवल खेत में काम करनेवाले पुरुषो को ही मिलता था। जलपान के उपरांत प्रायः सभी लोग घर की चिंता छोडकर रूई के खेत मे चले जाते थे। छोटे छोटे बालक, जो कुदाल तक उठा सकते थे, काम में लगा दिए जाते थे और बहुत ही छोटे बालक खेत की मेंड़ पर बैठा दिए जाते थे। दोपहर और संध्या का भोजन भी प्रात:काल के भोजन के समान ही हुआ करता था।

शनिवार और रविवार के अतिरिक्त, गृहस्थों के शेष सब दिन प्रायः इसी प्रकार बीतते थे। शनिवार का आधा और कभी कभी सारा दिन लोग प्रायः शहर मे जाकर सौदा खरीदने मे ही बिताते थे। पर यह सौदा इतना साधारण होता था कि यदि एक मनुष्य चाहता तो केवल दस मिनट में खरीद सकता था। घर के सभी लोग गलियों में इधर उधर टहलने, सिगरेट पीने या सुँघनी सूँघने मे दिन बिता देते थे। रविवार के दिन लोग प्रायः बड़ी सभाओं मे जाया करते थे। अधिकांश खेती की फसले रेहन होती थी और खेतिहर ऋण से लदे रहते थे। स्कूल प्रायः गिरजे या झोंपड़ो मे ही होते थे और उनके लिये राज्य की ओर से कोई मकान न बना होता था। जाड़े के दिनों मे स्कूल के कमरो को गरम रखने का कोई प्रबंध न होता था। अधिकाश शिक्षक बहुत ही निर्धन और प्रायः चरित्रहीन हुआ करते थे। स्कूलो मे तीन से पाँच मास तक पढ़ाई हुआ करती थी। किसी स्कूल मे एक काले बोर्ड के अतिरिक्त और कोई सामान ही नहीं होता था। कही कही एक ही पुस्तक से चार पाँच विद्यार्थी तक अपना पाठ याद करते थे। गिरजाघरों और पादरियो की भी प्रायः यही दशा थी।

एक बार वाशिंगटन ने साठ बरस के एक बुड्ढे हवशी से उसका हाल पूछा। उसने उत्तर दिया कि वर्जीनिया मे मेरा जन्म हुआ था और सन् १८४५ मे मैं अलबामा मे बेचा

गया था। वाशिंगटन ने पूछा—तुम लोग कितने आदमी एक साथ बिके थे? उसने उत्तर दिया—हम लोग पाँच थे। मैं, मेरा भाई और तीन खच्चर।

८—अस्तबल और मुर्गीखाने में पाठशाला

टस्केजी और उसके आसपास के स्थानों की दशा देखकर वाशिंगटन बहुत चिंतित हुए। उस प्रांत के लोगों की दशा सुधारना बहुत ही दुष्कर कार्य था। उन्हे शंका होने लगी कि इतना बड़ा कार्य अकेले मुझसे हो सकेगा या नहीं। हाँ, इस प्रवास में उन्होंने यह बात अवश्य समझ ली थी कि केवल आजकल के ढंग की साधारण शिक्षा से इन हबशियों की कभी उन्नति नहीं हो सकती। उस समय उन्हे जनरल आर्म-स्ट्रांग की हैंपटनवाली शिक्षाप्रणाली की उपयोगिता और भी अधिक मालूम होने लगी। उन्होंने भली भाँति समझ लिया कि इन हबशियों के बालकों को केवल दो चार घंटे पुस्तकें पढ़ाना, उनका समय व्यर्थ नष्ट करने के समान होगा।

टस्केजी-निवासियो से परामर्श करके वाशिंगटन ने ४ जूलाई सन् १८८१ को एक छोटे गिरजे में पाठशाला खोलना निश्चित किया। गोरो और कालों ने इस कार्य्य में अच्छा उत्साह दिखलाया था और सब लोग बड़ी उत्सुकता से विद्यालय खुलने की प्रतीक्षा कर रहे थे। इसके अतिरिक्त वहाँ कुछ

ऐसे गोरे भी थे जो इस कार्य से असंतुष्ट थे। उन्हें हबशियों के लिये इसकी उपयोगिता मे बहुत कुछ संदेह था और आशंका थी कि इस शिक्षा के कारण गोरो और कालों में परस्पर विरोध बढ़ेगा। कुछ लोग यह भी समझते थे कि हबशियों को जितनी अधिक शिक्षा मिलेगी, सरकार की सांपत्तिक अवस्था भी उतनी ही गिर जायगी। उन्हे भय था कि शिक्षित होकर हबशी लोग खेतों मे काम करना छोड़ देंगे और उनसे गृहस्थी मे सेवा कराना कठिन हो जायगा। लेकिन जो गोरे इस विद्यालय के पक्ष में थे, वे समझते थे कि हबशी लोग पढ़ लिखकर अच्छे खासे जंटिलमैन बन जायँगे और केवल अपने चातुर्य और बुद्धिबल से जीवन-निर्वाह कर सकेंगे। उन लोगों के लिये यह समझना बहुत ही कठिन था कि शिक्षा की सहायता से और किसी प्रकार के हबशी तैयार हो सकते हैं।

वाशिंगटन को टस्केजी मे दो आदमियों से सदा बहुत बड़ी सहायता मिलती रही। एक मिस्टर जी० डब्ल्यू० कैंबल से और दूसरे मिस्टर लेविस एडम्स से। मिस्टर कैंबल वहाँ के व्यापारी और महाजन थे तथा शिक्षा-संबंधी कार्य्यों का भी कुछ अनुभव रखते थे। मि० एडम्स एक कारीगर थे और उन्होने दासत्व-काल मे जूते और जीन आदि बनाना और टीन के सामान तैयार करना सीखा था। उन्होंने किसी पाठशाला मे पढ़ा तो न था, पर तो भी वे साधारण लिखना पढ़ना जानते

थे। इन लोगों ने पहले से ही वाशिंगटन की शिक्षा-प्रणाली पर विचार करके उनके साथ सहानुभूति प्रकट की और सब कार्यों मे उन्हें सहायता दी। इन्हीं दोनों सज्जनों ने जनरल आर्मस्ट्राग से एक शिक्षक माँगा था। जिस समय पाठशाला की आर्थिक दशा बहुत ही खराब थी, उस समय जब मि० कैंबल से प्रार्थना की जाती थी, तब वे कुछ न कुछ धन उसकी सहायता के लिये अवश्य दिया करते थे। इसके अतिरिक्त ये लोग विद्यालय के कार्य्यों मे सम्मति आदि के द्वारा भी बहुत कुछ सहायता दिया करते थे। मि० एडम्स ने दासत्व-काल मे शिल्प सीखकर अपनी मानसिक शक्ति भी बहुत कुछ बढ़ा ली थी। दक्षिण प्रांत के हबशियो मे वे बहुत ही प्रतिष्ठित समझे जाते थे।

पाठशाला खुलते ही, पहले दिन उसमे तीस विद्यार्थी भरती हुए जिनमे आधी स्त्रियाँ थी। वाशिंगटन केवल उन्ही विद्यार्थियों को अपनी पाठशाला में लेते थे जिनकी अवस्था पंद्रह वर्ष से अधिक होती थी और जो पहले से कुछ पढे लिखे होते थे। यदि यह नियम न होता तो विद्यार्थियों की संख्या और भी बढ़ जाती। अधिकांश विद्यार्थी सार्वजनिक पाठशालाओं के शिक्षक और चालीस वर्ष से अधिक अवस्था के थे। किसी किसी शिक्षक के साथ उसके पुराने विद्यार्थी भी थे जो गुरु की अपेक्षा अधिक योग्यता रखते थे। इन लोगों को इस बात का अभिमान था कि हमने भारी भारी

पुस्तकें पढ़ी हैं और बड़े बड़े विषयो की शिक्षा पाई है। उनमे से दो एक लैटिन और ग्रीक भी जानते थे और इस कारण वे अपने को बहुत योग्य समझते थे। इतने विद्यार्थियों मे केवल वाशिंगटन ही एक शिक्षक थे।

उन विद्यार्थियों को व्याकरण और गणित के कठिन नियम रटने का बहुत शौक था, पर दैनिक व्यवहारो मे उन नियमों का उपयोग करना वे नहीं जानते थे। प्रत्येक विद्यार्थी के नाम के बीच में एक स्वतत्र शब्द होता था। जब वाशिंगटन ने एक विद्यार्थी से पूछा कि जान जे० जांस में 'जे०' शब्द का क्या तात्पर्य है तब उसने उत्तर दिया कि यह मेरी पदवी या उपनाम का एक अंश है। बहुत से विद्यार्थी केवल इसी उद्देश्य से पढ़ना चाहते थे कि हम शिक्षक बनकर अधिक धन कमा सकेंगे। पर एक बात अवश्य थी। जब किसी विद्यार्थी को किसी विषय का वास्तविक स्वरूप बतला दिया जाता था तब वह उसे सीखने और ग्रहण करने के लिये बड़ी उत्सुकता दिखलाता था। वाशिगटन उन्हे पुष्ट और पूर्ण शिक्षा देना चाहते थे। जिस विषय मे पारगत होने का उन्हे अधिक अभिमान होता था, उसी में वे लोग बहुत कच्चे होते थे। नकशे मे वे सहारा का रेगिस्तान या चीन की राजधानी तो भली भाँति बतला सकते थे पर भोजन की मेज पर वे ठीक स्थान पर छुरी, काँटे और मास रोटी रखना नही जानते थे। एक विद्यार्थी घनमूल और व्याज लगाना सीखता था। वाशिगटन को उसे

यह समझाने में बड़ी कठिनता हुई थी कि उसके लिये पहले गुणन सीखना अधिक बुद्धिमत्ता का कार्य होगा।

पहले मास के अंत मे ही विद्यार्थियों की संख्या बढ़कर पचास हो गई। उनमें से कई विद्यार्थी तो वहाँ केवल दो तीन मास रहकर ही उच्च कक्षा मे प्रविष्ट होना और पहले ही वर्ष डिप्लोमा तक पाना चाहते थे। अब तक वाशिंगटन अकेले ही शिक्षक का कार्य्य करते थे। पाठशाला खुलने के छः सप्ताह बाद शिक्षा के काम में उन्हे सहायता देने के लिये मिस ओलीविया डेविडसन नाम की एक कुमारी आई। आगे चलकर वाशिंगटन ने इन्हीं से विवाह किया था। मिस डेविडसन का जन्म-स्थान ओहियो था और उसी राज्य के सार्वजनिक विद्यालय मे उनकी प्रारंभिक शिक्षा हुई थी। बाल्यावस्था में ही उन्होने सुन रखा था कि दक्षिण में शिक्षकों की बहुत आवश्यकता है। इसलिये वे मिसिसिपी राज्य मे चली गईं और वहां अध्यापिका का कार्य्य करने लगी। वहाँ उनके एक शिष्य को चेचक निकली। भय के कारण कोई उसकी सेवा शुश्रूषा न करता था। मिस डेविडसन ने अपनी पाठशाला बंद कर दी और दिन रात उस रोगी के पास रहकर बड़ी कठिनता से उसे अच्छा किया। एक बार जब वे छुट्टियों मे अपने घर पर थीं तब उन्होने सुना कि मेमफिस राज्य मे एक प्रकार का भयंकर ज्वर फैला है। उन्होने तुरंत वहाँ के मेयर को तार भेजकर सूचित किया कि मैं दाई का

काम करने के लिये तैयार हूँ। इसके उपरांत कुछ दिनों तक उन्होंने मैमफिस नगर मे अध्यापिका का भी काम किया था।

दक्षिण मे रहकर मिस डेविडसन ने भी यही अनुभव प्राप्त किया था कि वहाँ के लोगों को पुस्तक के अतिरिक्त कुछ और शिक्षा देने की भी आवश्यकता है। उसी अवसर पर उन्होंने हैंपटन की शिक्षा-प्रणाली का हाल सुना और बोस्टन नगर की श्रीमती हेमेनवे नाम की एक भद्र महिला की सहायता और कृपा से वे हैंपटन मे ग्रैजुएट हुईं और तदुपरांत उन्होने फरमिंघम के एक राजकीय नार्मल विद्यालय मे दो बरस तक अध्यापन का कार्य सीखा था। इस विद्यालय मे प्रविष्ट होने से पहले किसी ने उनसे कहा कि आपका रंग बहुत साफ है इसलिये यदि आप विद्यालय में अपने को हबशी न बतलावे, तो आप अधिक अच्छी तरह रह सकेंगी। इस पर उन्होंने उसे स्पष्ट उत्तर दे दिया कि चाहे जो हो, मैं अपनी जाति के संबंध में कभी किसी को धोखा नहीं दे सकती।

फरमिंघम की शिक्षा समाप्त करके मिस साहबा टस्केजी आई थीं। उनके शिक्षा संबंधी विचार बिलकुल नए और बहुत ही उच्च थे। इसके अतिरिक्त उनका नैतिक चरित्र और निःस्वार्थ भाव भी आदर्श था। टस्केजी विद्यालय की सफलता मे सबसे अधिक सहायता मिस डेविडसन से ही मिली थी। सबसे पहले वाशिंगटन ने उनसे विद्यालय के भविष्य के संबंध में परामर्श किया। उस समय विद्यार्थी पढ़ने और अपने

विचार सुधारने मे अच्छी उन्नति कर रहे थे। पर शीघ्र ही उन पर स्थायी प्रभाव डालने के लिये उन्हे किसी और प्रकार की शिक्षा देने की आवश्यकता भी प्रतीत होने लगी। विद्यार्थी प्राय: ऐसे ही थे जिन्हे घर पर कभी अपना शरीर स्वच्छ रखने की भी शिक्षा न मिली थी। विद्यार्थियों को नहाने धोने, मुँह तथा कपड़े साफ रखने, भोजन करने और अपने कमरे साफ रखने की शिक्षा भी देनी पड़ती थी। इसके अतिरिक्त दोनों शिक्षक अपने विद्यार्थियों को किसी प्रकार का शिल्प सिखलाना और उन्हे परिश्रमी और मितव्ययी भी बनाना चाहते थे, जिसमें विद्यालय छोड़ने पर वे भली भाँति अपना जीवन निर्वाह कर सकें।

उन लोगो ने देखा कि अधिकांश विद्यार्थी ऐसे प्रांतों के निवासी हैं जहाँ के लोगों का मुख्य आधार खेती वारी ही है। उन प्रदेशों के सौ मे से पचासी निवासी कृषि-कर्म्म से ही जीवन-निर्वाह करते थे। इसलिये वे उन्हें ऐसी शिक्षा देना चाहते थे कि जिसमे कृषि की ओर से उनकी रुचि हट न जाय, वे गाँव छोड़कर शहरों की ओर न भागें और केवल अपने बुद्धिबल से जीवन-निर्वाह करने की चेष्टा न करें। वे उन्हे शिक्षा देकर उनमे से अधिकांश को शिक्षक बनाना चाहते थे और उन्हे जमींदारियों मे भेजकर सर्वसाधारण को यह दिखलाना चाहते थे कि नवीन शक्तियों और विचारों का कृषि-कर्म्म मे किस प्रकार उपयोग हो सकता है और उनसे

मनुष्य के मानसिक, नैतिक और धार्म्मिक जीवन पर कैसा अच्छा प्रभाव पड़ सकता है।

इन सब विचारों और आवश्यकताओं ने वाशिंगटन और डेविडसन को बहुत अधिक चिंतित कर दिया। विद्यालय के लिये इन लोगो के पास उस पुराने छोटे गिरजे के अतिरिक्त और कोई स्थान नही था और विद्यार्थियों की सख्या दिन पर दिन बढ़ती जाती थी। नए आनेवाले विद्यार्थियों मे से अधिकाश का मुख्य उद्देश्य यही होता था कि वे पढ़ लिखकर शारीरिक परिश्रम करने से बच जायँ और केवल अपने बुद्धिबल से जीविका उपार्जन करने के योग्य हो जायँ। विद्यालय खुलने के तीन मास बाद वाशिंगटन ने सुना कि एक पुराना बाग बिकनेवाला है। वह बाग टस्केजी नगर से एक मील की दूरी पर था। वाशिंगटन ने जब जाकर वह बाग देखा तब उन्हे मालूम हुआ कि वह हमारी आवश्यकता और कार्य्य के लिये बहुत ही उपयुक्त है। यद्यपि उसका दाम बहुत ही कम, केवल पॉच सौ डालर था, पर उनके लिये यह रकम भी बहुत भारी थी। उनके पास धन कुछ भी न था। इसके अतिरिक्त उस प्रांत मे वे बिलकुल अजनबी थे और किसी से उनका लेनदेन का व्यवहार नहीं था। उस बाग के मालिक ने यहाँ तक स्वीकार कर लिया था कि ढाई सौ डालर मुझे तत्काल मिल जायँ और शेष ढाई सौ डालर एक वर्ष मे चुका दिए जायँ। पर कठिनता तो यह थी कि वाशिंगटन ढाई सौ डालर भी न दे सकते थे।

जब रुपयों का कोई प्रबंध न हो सका तब विवश होकर उन्होने हैंपटन विद्यालय के कोषाध्यक्ष अपने मित्र जनरल मार्शल को एक पत्र लिखा जिसमे उन्होंने वहाँ की सारी स्थिति का उल्लेख किया और अपनी जिम्मेदारी पर उनसे ढाई सौ डालर उधार माँगे। उत्तर मे, जनरल मार्शल ने उन्हें लिख भेजा कि विद्यालय के रुपए उधार देने का तो मुझे कोई अधिकार नहीं है, हाँ, मैं अपने पास से यह धन प्रसन्नतापूर्वक दे सकता हूँ। पर वाशिंगटन के लिये यह बात बड़ी ही विलक्षण और एकदम नई थी, क्योंकि उस समय तक कभी उनके पास एक सौ डालर भी इकट्ठा नही आया था। इसी लिये जनरल मार्शल का ऋण भी उन्हें बहुत भारी मालूम होता था। पर तो भी उन्होने ईश्वर पर दृढ़ विश्वास रखकर ढाई सौ डालर ऋण में ले ही लिए और वह बाग मोल लेकर शीघ्र ही उसमे अपना विद्यालय खोल दिया। वहाँ के पुराने रसोई-घर और एक दूसरे कमरे मे उन्होंने अपना विद्यालय रखा और अस्तबल और मुर्गीखाने की मरम्मत कराके उसे पाठालय (Recitation Room) बनाया।

दोपहर को विद्यालय मे छुट्टी हो जाने पर विद्यार्थियों से कमरे आदि साफ करने का काम लिया जाता था। जब विद्यालय के लिये कमरे साफ हो गए तब वाशिंगटन ने एक फसल बोने के योग्य स्थान साफ कराने का विचार किया। विद्यार्थियों ने भी बहुत प्रसन्नतापूर्वक उनके इच्छानुसार सब कार्य्य कर

दिए। उन विद्यार्थियों में से बहुत से पुराने अध्यापक और शिक्षक थे, इस कारण उनसे काम लेने के लिये वाशिंगटन को स्वयं भी कुदाल और फरसा लेकर काम करना पड़ता था। उन्हें काम करते देख उनके विद्यार्थी और भी अधिक उत्साह से उन्हे सहायता देने लग जाते थे। परिश्रम करके अंत मे उन लोगों ने वीस एकड़ भूमि साफ कर ही ली और उसमें एक फसल भी बो दी।

उधर मिस डेविडसन ऋण चुकाने का उद्योग कर रही थीं। उन्होंने घर घर घूमकर गोरों और हबशी गृहस्थों को नित्य कुछ रोटी, चपाती या मटर आदि देने पर राजी किया और एक विशेष अवसर पर इस प्रकार संग्रह की हुई चीजों को बेचने का प्रबंध किया। मिस डेविडसन जिसके पास सहायता माँगने जातीं वह उन्हें कुछ न कुछ अवश्य देता था। इस प्रकार कुछ थोड़ा सा धन संग्रह हो गया। साधारण गृहस्थो के अतिरिक्त बहुत से बुड्ढे हबशी, जिन्होंने अपने जीवन का अधिकांश दासत्व मे बिताया था, अनेक प्रकार से विद्यालय की सहायता करते थे। उनमें से कोई तो नकद धन देता था और कोई ओढ़ने के कपड़े या गन्ने तक भी प्रदान करता था। एक बार बहुत ही मैले कुचैले चीथड़े पहने सत्तर बरस की एक बुढ़िया वाशिंगटन के पास आई और कहने लगी—"मि० वाशिंगटन, ईश्वर जानता है, मैंने अपने जीवन के उत्तम दिन दासत्व में ही व्यतीत किए हैं। ईश्वर जानता है, मैं

बहुत ही अज्ञानी और निर्धन हूँ पर मैं मिस डेविडसन और आपके उद्योग का उद्देश्य अवश्य जानती हूँ। मैं जानती हूँ कि आप हवशी पुरुषों और स्त्रियों को सुयोग्य बनाने की चेष्टा करते हैं। मेरे पास धन बिलकुल नहीं है, इसलिये मैं चाहती हूँ कि मेरे बचाए हुए ये छः अंडे आप ले लें और इन्हें इन बालकों और बालिकाओं की शिक्षा में व्यय करें।"

यद्यपि टस्केजी विद्यालय आरंभ करने के उपरांत वाशिंगटन ने उसकी सहायता के लिये अंत तक बहुत से चंदे और उपहार पाए थे, पर इस बुढ़िया के इस तुच्छ उपहार से उनका हृदय सबसे अधिक गद्गद हुआ था।

६—घोर चिंता के दिन

अलबामा में रहकर बड़े दिनों मे वाशिंगटन को वहाँ के निवासियों की वास्तविक दशा देखने का और भी अधिक और अच्छा अवसर मिला। बड़े दिन आरंभ होने से एक दिन पहले ही बालक घर घर घूमकर बड़े दिनों का उपहार माँगते फिरते थे। उस दिन प्रातःकाल दो बजे से पाँच बजे तक के बीच में प्रायः पचास बालक विद्यालय में उपहार माँगने के लिये आए थे। दक्षिण अमेरिका के इस प्रांत मे यह प्रथा अब तक प्रचलित है।

दासत्व-काल में, समस्त दक्षिणी राज्यों मे, बड़े दिनों के अवसर पर हवशी दासों को एक सप्ताह की छुट्टी देने का

नियम था। उस अवसर पर स्त्रियाँ और पुरुष प्रायः मद्य पीते थे। बड़े दिन से एक दिन पहले सब हवशियों ने काम धंधा छोड़ दिया था और नव-वर्षारंभ से पहले उनसे कोई काम लेना बहुत ही कठिन था। जो लोग वर्ष भर में कभी मद्य-पान न करते थे, वे भी उस अवसर पर बहुत अधिकता से मद्य पीते थे। लोग मस्त होकर खूब आनंद मनाते थे और खूब शिकार खेलते थे। ऋतु की पवित्रता मानो सब लोग एकदम भूल ही जाते थे।

बड़े दिन की पहली छुट्टियो मे वाशिंगटन नगर के बाहर एक बड़ी जमींदारी पर गए। ऐसी पवित्र और प्रिय ऋतु में दरिद्र और अज्ञान मनुष्यों को चैन करने के उद्योग मे लगे देखकर उन्हे बहुत दया आती थी। एक स्थान पर उन्होंने पाँच छः ऐसे आदमियो को देखा जिनके पास केवल दस सेंट मूल्य की अदरक की चपातियाँ थीं। एक परिवार मे केवल थोड़े से गन्ने ही थे। एक स्थान पर एक पादरी महाशय अपनी स्त्री सहित बैठे सस्ती ह्विसकी पी रहे थे। एक स्थान पर कुछ लोग बैठे हुए थोड़े से विज्ञापन के कार्डों को बड़े कुतूहल से देख रहे थे। एक परिवार में एक नई पिस्तौल खरीदी गई थी। अधिकांश स्थानों मे उत्सव का तो कोई चिह्न दिखाई न देता था, हाँ, लोग काम छोड़कर केवल इधर उधर व्यर्थ घूमते हुए अवश्य दिखाई देते थे। रात के समय वे लोग प्रायः एक प्रकार का जंगली नाच नाचते थे और मद्य पीकर पिस्तौल

और छुरे लेकर दंगा फसाद करते थे। उसी अवसर पर वाशिंगटन को एक बुड्ढा हवशी मिला था जो उस प्रांत के उपदेशकों में से था। उसने बाबा आदम के अनुभव से वाशिंगटन को यह समझाने की बहुत अधिक चेष्टा की कि परिश्रम पर ईश्वर का शाप है और मनुष्य के लिये परिश्रम करना बड़ा भारी पाप है। इसी कारण वह मनुष्य यथासंभव बहुत ही कम काम करता था। उस सप्ताह काम करने के पाप से बिलकुल बचे रहने के कारण वह बहुत ही प्रसन्न मालूम होता था।

अपने विद्यालय मे वाशिंगटन और डेविडसन ने विद्यार्थियों को बड़े दिन का ठीक अभिप्राय और उपयोग बतलाने की बहुत अधिक चेष्टा की। इस कार्य्य में पीछे उन्हे बहुत कुछ सफलता भी हुई और उनके विद्यार्थियों ने भी और स्थानों पर जाकर लोगों को इस अवसर का सदुपयोग करना सिखलाया था। अब उस अवसर पर उनके विद्यालय के विद्यार्थी औरों की और विशेषत: दीन दुखियों की सहायता करते हैं। एक बार उनके विद्यार्थियों ने छुट्टी के दिनों मे पचहत्तर वर्ष की एक बुढ़िया के लिये एक कोठरी बना दी थी। एक दूसरे अवसर पर रात के समय गिरजा मे वाशिंगटन ने कहा था कि एक दीन विद्यार्थी कोट न होने के कारण जाड़े से बहुत कष्ट पा रहा है। दूसरे दिन प्रात:काल उनके पास दो कोट पहुँच गए।

ऊपर कहा जा चुका है कि विद्यालय के साथ उस प्रांत के गोरे निवासियों की पहले से ही सहानुभूति थी। वाशिंगटन सदा इस बात का उद्योग करते थे कि हमारा विद्यालय सर्व-प्रिय हो और लोग उसे पराया न समझें। इसी कारण नई भूमि खरीदने मे भी उन्हे बहुत कुछ सहायता मिली थी। उसके संचालकों का मुख्य उद्देश्य सब प्रकार के लोगों की सेवा और सहायता करना था और इसी लिये सब लोगों की उस पर बहुत प्रीति और श्रद्धा थी। यही कारण है कि केवल टस्केजी और अलबामा ही नहीं बल्कि समस्त दक्षिण मे उस विद्यालय के बहुत अधिक गोरे सहायक हैं। अपने सहका-रियों को वे सदा यही सम्मति देते थे कि वे गोरे और काले सब वर्णों के लोगों को अपना पृष्ठपोषक और मित्र बना लें।

मोल ली हुई भूमि के संबंध का ऋण चुकाने के लिये कई मास तक लगातार उद्योग होता रहा। पहले तीन मास में जनरल मार्शल का ऋण चुकाने के लिये यथेष्ट धन संग्रह हो गया और उसके उपरांत दो मास मे उन्होंने शेष ढाई सौ डालर एकत्र करने के अतिरिक्त सौ एकड़ भूमि और भी प्राप्त कर ली। इतना कार्य करके उसके संचालक बहुत संतुष्ट हो गए। सबसे अधिक संतोष की बात यह थी कि इस धन के दाता गोरे और काले दोनों ही थे। धन एकत्र कर चुकने के उपरात उन लोगों ने खेती बारी बढ़ाने का उद्योग आरंभ किया। इससे दो लाभ संभावित थे। एक तो यह कि

विद्यालय के लिये कुछ निश्चित आय हो जाती और दूसरे यह कि विद्यार्थियों को कृषि-कर्म्म की शिक्षा मिलती। टस्केजी विद्यालय के सभी शिल्प आदि, लोगों की वास्तविक आवश्यकताओ का ध्यान रखते हुए, स्वाभाविक और उचित क्रम से आरंभ हुए हैं। सबसे पहले कृषि का आरंभ इसलिये हुआ था कि उन लोगों को खाद्य पदार्थों की बहुत आवश्यकता थी। विद्यालय मे बहुत से विद्यार्थी ऐसे भी थे जो अपने भोजन आदि का व्यय न दे सकने के कारण एक बार मे कुछ ही सप्ताह ठहर सकते थे। इस कारण ऐसे विद्यार्थियों को धनोपार्जन के योग्य, और नौ मास तक विद्यालय मे रहकर शिक्षा प्राप्त करने में समर्थ, बनाने के लिये शिल्पविभाग खोलने की आवश्यकता हुई थी।

सबसे पहले विद्यालय को जो पशु मिला वह टस्केजी के एक गोरे निवासी का अंधा बुड्ढा घोड़ा था। पर इस समय वहाँ दो सौ से अधिक घोड़े, खच्चर, गौ और बैल, प्रायः सात सौ सूअर और बहुत सी भेड़-बकरियाँ हैं। जब भूमि का दाम चुका दिया गया, खेती आरंभ हो गई और कमरो की मरम्मत हो गई, तब विद्यार्थियों की संख्या भी बहुत अधिक बढ़ने लगी और अंत मे वहाँ इतने अधिक विद्यार्थी हो गए कि विद्यालय के लिये एक नया बड़ा भवन बनाने की आवश्यकता पड़ी। बहुत कुछ विचार करके अंत में छः हजार डालर की लागत का एक भवन बनाना निश्चित हुआ। यद्यपि यह

कार्य्य बहुत भारी मालूम होता था तथापि वाशिंगटन ने यह बात भली भाँति समझ ली थी कि जब तक विद्यार्थियों की रहन सहन पर पूरी दृष्टि न रखी जायगी तब तक उन्हे पूरी सफलता न प्राप्त होगी। उस अवसर पर एक ऐसी घटना हो गई जिससे उन्हें आश्चर्य के साथ ही साथ बहुत संतोष भी हुआ था। जब नगर-निवासियों को यह बात मालूम हुई कि विद्यालय के लिये एक नए बड़े भवन के बनाने का विचार हो रहा है तब एक आटे की कल का मालिक, एक दक्षिणी गोरा, वाशिंगटन के पास आया और उनसे कहने लगा कि यदि आप रुपए हाथ मे आने पर मूल्य चुका देने का वादा करें तो मैं आपको भवन के लिये जितनी लकड़ी आवश्यक हो, दे सकता हूँ। वाशिंगटन ने उसी समय उससे स्पष्ट कह दिया कि इस समय हमारे पास एक पैसा भी नहीं है। तो भी उस गोरे ने बहुत सी लकड़ी वहाँ पहुँचा देने की इच्छा प्रकट की। पीछे जब वाशिंगटन के हाथ मे कुछ धन आ गया तब उन्होंने उससे लकड़ी मँगवा ली।

अब फिर मिस डेविडसन आस पास के स्थानों से छोटी छोटी रकमे संग्रह करने लगीं। वहाँ के हबशी नया भवन बनने की बात सुनकर बहुत प्रसन्न होते थे। एक दिन जब धन-संग्रह के लिये सभा हो रही थी तब वहाँ बारह मील से चलकर एक बुड्ढा हबशी आया जो अपने साथ बैलगाड़ी पर एक बड़ा सूअर लाया था। भरी सभा मे खड़े होकर उसने

कहा—"मेरे पास धन तो बिलकुल नहीं है, पर विद्यालय का भवन बनने के व्यय के लिये मैं यह सूअर लाया हूँ। आशा है, मेरे और भाई, जिन्हे अपना और अपनी जाति का अभिमान होगा, दूसरी सभा में एक एक सूअर लावेंगे।" इसके अतिरिक्त बहुत से लोगों ने कई दिन तक काम करके भवन बनाने मे सहायता दी थी।

जब टस्केजी-निवासियों से यथासाध्य यथेष्ट सहायता मिल चुकी तब मिस डेविडसन ने विशेष धन-संग्रह करने के लिये उत्तर की ओर जाना निश्चित किया। कई सप्ताहो तक वे लोगों से मिलती जुलती और गिरजों, पाठशालाओं तथा अन्य संस्थाओं मे वक्तृताएँ देती रहीं। इस कार्य्य मे उन्हे अधिक कठिनता प्रतीत हुई। इस प्रकार यद्यपि विद्यालय की अधिक प्रसिद्धि नहीं हुई तो भी उत्तर प्रांत के लोगों का उन पर बहुत विश्वास जम गया। एक बार मिस डेविडसन, एक प्रतिष्ठित महिला के साथ, उत्तर प्रांत में नाव पर कही जा रही थीं। उस महिला से भी उन्होंने विद्यालय का जिक्र किया था। उत्तर-प्रांत-निवासियों मे से सबसे पहले उसी महिला ने विद्यालय के सहायतार्थ धन प्रदान किया था। मिस डेविडसन की बातों का उस पर इतना अधिक प्रभाव पड़ा था कि उसने नाव पर से उतरने और मिस का साथ छोड़ने से पहले ही उन्हे पचास डालर का एक चेक दे दिया था। विवाह से पहले और उसके उपरांत मिस डेविडसन

इसी प्रकार उत्तर प्रांत के निवासियों से मिलती जुलती और धन-संग्रह करती रहीं। साथ ही वे टस्केजी विद्यालय मे प्रधान अध्यापिका का कार्य्य भी करती रहीं। इसके अतिरिक्त वे टस्केजी मे लोगों के घर जाकर पढातीं और रविवार का स्कूल भी चलाती रहीं। यद्यपि उनमे शारीरिक बल अधिक नहीं था, तो भी वे अपनी सारी शक्ति विद्यालय की उन्नति मे लगाकर बहुत प्रसन्न होती थीं। धन-संग्रह करने के लिये नगर मे घर घर घूमने के कारण वे प्राय. इतनी थक जाती थीं कि रात को अपने स्थान पर पहुँचकर उनमे अपने कपड़े तक उतारने की शक्ति न रह जाती थी। एक बार वे बोस्टन मे एक महिला से मिली थीं। उस महिला ने पीछे वाशिंगटन से कहा था कि जिस समय मिस डेविडसन मुझसे मिलने के लिये आईं उस समय मैं कुछ काम में फँसी थी, इसलिये मैंने उन्हे एक कमरे में ठहरने को कहा। जब थोड़ी देर बाद मैं उस कमरे मे पहुँची तब मैंने देखा कि बहुत अधिक थक जाने के कारण वे सो गई थीं।

सबसे पहले मिस्टर ए० एच० पोर्टर नामक एक सज्जन के नाम पर, जिन्होंने विद्यालय को अच्छा धन दिया था, पोर्टर हाल नामक एक भवन बना। उस भवन के बनने के उपरांत विद्यालय की धन की आवश्यकता बहुत बढ़ गई। एक बार मि० वाशिंगटन ने एक कर्जदार को चार सौ डालर देने का वचन दिया था, पर उस दिन प्रातःकाल उनके पास एक

डालर भी न था। उस दिन दस बजे विद्यालय मे जो डाक आई उसमें मिस डेविडसन के भेजे हुए पूरे चार सौ डालर के चेक मिले। यह धन बोस्टन की दो महिलाओं ने भेजा था। इसी प्रकार की और भी अनेक घटनाएँ हुई थीं। इसके दो वर्ष उपरांत जब कि टस्केजी-विद्यालय का कार्य्य बहुत अधिक बढ़ गया और जब कि उसके अधिकारियों को धन की बहुत अधिक आवश्यकता थी, तब उन्ही दोनों महिलाओं ने छः सौ डालर और भेजे थे। इसके उपरांत लगातार चौदह वर्षों तक यही दोनों स्त्रियाँ बराबर प्रति वर्ष छः सौ डालर विद्यालय के सहायतार्थ भेजती रहीं।

पहला भवन बन जाने के उपरांत जब दूसरा भवन बनना निश्चित हो गया तब विद्यार्थियों ने अपना पाठ समाप्त करने के उपरांत नित्य भूमि खोदना आरंभ कर दिया। पर उस समय तक कुछ विद्यार्थियों की यह धारणा नही गई थी कि हाथ से काम करना अयोग्य और अनुचित है। उस अवसर पर एक विद्यार्थी ने कहा भी था कि हम लोग यहाँ पढ़ने के लिये आए हैं, परिश्रम करने के लिये नहीं। पर हाँ, धीरे धीरे यह धारणा मिटती जाती थी। कुछ सप्ताह तक कठिन परिश्रम करने के उपरात नींव तैयार हो गई और नींव का पत्थर रखने के लिये दिन भी निश्चित हो गया।

दक्षिण के उस भाग में, जो किसी समय दासत्व-प्रथा का केंद्रस्थल था, बडी धूमधाम से उस विद्यालय की नींव रखी

गई। दासत्व-प्रथा को बंद हुए अभी केवल सोलह वर्ष ही हुए थे। यदि सोलह वर्ष पूर्व कोई मनुष्य हबशियों को पुस्तकों द्वारा शिक्षा देता तो वह राज्य अथवा समाज से अवश्य भारी दंड पाता। इन सब बातों का ध्यान रखते हुए, वसंत ऋतु का वह दिन—जब कि नीव रखी गई थी—बहुत ही अपूर्व और महत्त्व-पूर्ण मालूम होता था। उस दिन का सा दृश्य संसार के बहुत ही कम नगरों के भाग्य में होगा। उस प्रांत के शिक्षा-विभाग के सुपरिंटेंडेट आनरेबुल वाडी टामसन ने मुख्य वक्तृता दी थी। उस अवसर पर वहाँ बहुत से शिक्षक, विद्यार्थी, उनके माता-पिता और मित्र, उस प्रांत के गोरे अधिकारी, अनेक हबशी स्त्रियाँ और पुरुष, तथा अन्य ऐसे प्रतिष्ठित गोरे उपस्थित थे जो कुछ ही वर्ष पूर्व उन हबशियों को अपनी संपत्ति समझते थे। दोनों ही जातियों के लोग नीव की शिला के पास अपना कुछ न कुछ स्मृति-चिह्न रखने के लिये बहुत ही उत्सुक दिखाई देते थे।

पर भवन बन चुकने से पूर्व धनाभाव के कारण विद्यालय के संचालकों को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा था। नित्य उनके पास अनेक बिल पहुँचते थे जिनका रुपया न चुका सकने के कारण वे लोग बहुत ही दुःखी रहते थे। उनकी कठिनाइयों का ठीक ठीक अनुमान वही मनुष्य कर सकता है जो कभी उनकी सी दशा मे पड़ा हो। टस्केजी पहुँचने के उपरांत एक वर्ष के अंदर अनेक राते ऐसी बीती

थीं जो कि वाशिंगटन ने धन की चिंता के कारण बड़े ही कष्ट से जाग जागकर बिताई थीं। कदाचित् उनके और उनकी समस्त जाति के लिये वह समय विकट परीक्षा का था। वाशिंगटन समझते थे कि यदि इस कार्य्य में मुझे सफलता न हुई तो उससे समस्त जाति को भारी हानि पहुँचेगी। वे यह भी जानते थे कि बहुमत मेरे विरुद्ध है। यदि यही कार्य्य कोई गोरा करता तो अवश्य ही उसे बहुत कुछ सफलता की आशा होती, पर हवशियों का इस कार्य्य मे सफलता प्राप्त कर लेना बड़ा भारी आश्चर्य्य ही था। इन्हीं सब कारणों और विचारो के बोझ ने विद्यालय के संचालकों को बुरी तरह दबा रखा था।

इस कष्ट और चिंता के समय वाशिंगटन टस्केजी नगर के जिस गोरे या हवशी के पास गए उसने यथासाध्य उन्हे कुछ न कुछ सहायता अवश्य दी। बीसियों बार ऐसा हुआ कि सैकड़ों डालर के बिल आए और उनका रुपया चुकाने के लिये वाशिंगटन को नगर के दस पॉच गोरों से छोटी छोटी रकमे उधार लेनी पड़ीं। आरंभ से ही वे सबसे अधिक ध्यान इसी बात का रखते थे कि विद्यालय की प्रतिष्ठा और बात बनी रहे और अंत तक सदा उन्हे इस उद्योग में सफलता होती गई। इस संबंध मे एक बार मि० कैंबल से उन्हे बहुत अच्छा उपदेश मिला था। उन्होंने पितृवत् स्नेह से कहा था—"वाशिंगटन! तुम सदा इस बात का ध्यान रखना कि जिस मनुष्य

की बात बनी रहती है उसे पूँजी की कभी कमी नहीं होती !" वाशिंगटन ने इसी उपदेश को अपना मूल मंत्र बना लिया और सदा उसी के अनुसार कार्य्य किया, ये मि० कँवल वही थे जिन्होंने जनरल आर्मस्ट्रांग पर जोर देकर वाशिंगटन को बुलवाया था।

एक बार धन की बहुत अधिक आवश्यकता आ पड़ने और उसका कोई प्रबंध न होने पर वाशिंगटन ने अपनी सारी दशा जनरल आर्मस्ट्रांग को लिख भेजी थी। उन्होंने अपना सारा बचाया हुआ धन तुरंत उनके पास भेज दिया। इसी प्रकार जनरल महाशय ने और भी अनेक बार विद्यालय की सहायता की थी। पर इन बातों को वाशिंगटन ने आत्म-चरित लिखने से पूर्व कभी किसी पर प्रकट नहीं किया था।

विद्यालय के प्रथम वर्ष की समाप्ति पर सन् १८८२ की ग्रीष्म ऋतु में वाशिंगटन का विवाह हैंपटन-विद्यालय की ग्रैजुएट मिस फेनी एन० स्मिथ से हुआ था। तभी से वे स्वतंत्र मकान लेकर रहने लगे। उस समय विद्यालय में चार शिक्षक हो गए थे, जो उन्हीं के साथ उनके मकान मे रहते थे। उनकी स्त्री ने भी विद्यालय की उन्नति मे बहुत कुछ सहायता दी थी। पर अभाग्यवश मई सन् १८८४ मे श्रीमती वाशिंगटन का देहांत हो गया और वह विद्यालय को पूर्ण उन्नत और पुष्ट दशा में न देख सकी। इससे पूर्व पोर्शिया एम० वाशिंगटन नाम की एक कन्या भी उन्हे हुई थी।

१०—अत्यंत कठिन कार्य्य

टस्केजी-विद्यालय का आरंभ करने के समय ही वाशिंगटन का दृढ़ विचार था कि विद्यार्थियों को खेती और गृहस्थी के कामो के अतिरिक्त मकान बनाने के काम की भी शिक्षा दी जाय। इसमे उनके कई उद्देश्य थे। एक तो वे विद्यार्थियों को नए और बढ़िया ढग के मकान बनाने की शिक्षा देना चाहते थे और दूसरे वे इस शिक्षा से विद्यालय का भवन बहुत सुंदर बनवाकर लाभ उठाना चाहते थे। इन सबसे अधिक मुख्य उद्देश्य उनका यह था कि विद्यार्थियों को परिश्रम की उपयुक्तता और महत्ता मालूम हो जाय और उन्हे उसमे मिलने-वाले आनंद का अनुभव हो जाय। इसके अतिरिक्त वे उन्हें पुराने ढंग की शिक्षा न देकर यह सिखलाना चाहते थे कि वायु, जल, वाष्प, विद्युत् आदि नैसर्गिक शक्तियों से मनुष्य अपने परिश्रम मे किस प्रकार सहायता ले सकता है।

पहले पहल जब वाशिंगटन ने विद्यार्थियों से विद्यालय-भवन बनाने का विचार किया तब बहुत से लोगों ने उनका विरोध किया। वे इस विरोध की परवा न करके अपने विचार पर दृढ़तापूर्वक अड़े रहे। अपने विचार का विरोध करनेवालों से उन्होंने कह दिया कि यद्यपि पहला भवन उतना सुंदर और सर्वांगपूर्ण नहीं बनेगा जितना कि बाहरी अनुभवी कारीगरों के हाथ से बनता, तथापि विद्यार्थियो के

हाथ से भवन बनवाने मे उन्हे सभ्यता और आत्म-निर्भरता की जो शिक्षा मिलेगी उससे विद्यालय की सुंदरता और सर्वांगपूर्णतावाली त्रुटि पूरी हो जायगी। इसके अतिरिक्त और भी अनेक लोगो से, जिन्हें उनके इस विचार की उपयुक्तता में संदेह था, उन्होंने कहा था कि अधिकांश विद्यार्थी दरिद्र और खेतिहर हैं और यदि उन्हे एकाएक बहुत बढ़िया इमारतों मे रखा जायगा तो वे बहुत प्रसन्न होगे। पर इस प्रकार उनसे काम लेने से वे अपने लिये स्वयं ही अच्छे भवन बनाना सीख जायँगे और आगे चलकर इस विद्या मे अधिक उन्नति कर सकेंगे। वे समझते थे कि सभव है कि इसमें हमारी ही भूल हो, पर तो भी उन्हे दृढ़ विश्वास था कि इन भूलो से आगे चलकर बहुत कुछ शिक्षा मिलेगी।

टस्केजी-विद्यालय को स्थापित हुए तीस वर्ष के लगभग हो गए और इस बीच मे सदा विद्यार्थियों से ही इमारतें बनवाई गई हैं। इस समय विद्यालय में छोटे बड़े सब मिलाकर चालीस भवन हैं जिनमे से चार के अतिरिक्त शेष सभी विद्यार्थियो के बनाए हुए हैं। इस समय दक्षिण मे सैकड़ो ऐसे आदमी हैं जिन्होंने यहाँ भवन बनने के समय शिल्पकला की शिक्षा पाई थी। उन्हों लोगो ने आगे चलकर और विद्यार्थियो को वह शिक्षा दी और अब वहाँ के शिक्षक और विद्यार्थी वास्तुविद्या में इतने निपुण हो गए हैं कि वे बिना विद्यालय-क्षेत्र से बाहर गए और बिना किसी बाहरी कारीगर

की सहायता लिए ही सब आकार और प्रकार की इमारतों के नकशे बनाकर, उन्हें तैयार कर सकते और उनमें बिजली के प्रकाश आदि तक का प्रबंध कर सकते हैं। यही कारण है कि विद्यार्थियों का अपने विद्यालय के साथ बहुत कुछ ममत्व हो जाता है। अनेक अवसरों पर जब कि किसी नए विद्यार्थी ने विद्यालय की दीवारों पर पेंसिल या चाकू से निशान करके उन्हें खराब करना चाहा है, तो किसी पुराने विद्यार्थी ने उसे ऐसा करने से रोकते हुए कहा है—"ऐसा मत करो। यह हमारी इमारत है। मैंने इसके बनाने मे सहायता दी है।"

विद्यालय के प्रारभिक काल मे उसके संचालको को ईंटें बनाने के काम मे बड़ी कठिनाई झेलनी पड़ी थी। जब उनका खेती बारी का काम भली भाँति चल निकला तब उन्होंने ईंटे बनाने का कार्य्य आरंभ किया। उन्हे निज की इमारतों के लिये ही ईंटों की बहुत आवश्यकता हुआ करती थी। इसके अतिरिक्त एक और कारण से उन्हें ईंटों का कारखाना खोलना पड़ा था। उस प्रांत में ईंटों का कोई भट्ठा ही नहीं था, इसलिये साधारणतः नगर मे भी ईंटों की बहुत माँग थी। यद्यपि न तो उनके पास धन था और न उन्हें इस कार्य्य का कोई अनुभव था, पर तो भी उसमे उन्हें अच्छी सफलता हुई। ईंटें बनाने का काम गंदा और कठिन होता है इसलिये पहले पहल विद्यार्थियो से वह काम लेना बहुत कठिन था। जब उन्हें ईंटें बनाने के काम में लगाया गया तब

वे बहुत घबराए और उन्होंने शारीरिक परिश्रम से बहुत घृणा दिखलाई। बात यह थी कि इस काम से उन्हे घंटों तक घुटने घुटने भर मिट्टी और कीचड में खड़े रहना पड़ता था, इसलिये उनमें से अनेक विद्यार्थी ऐसे भी निकल आए जो इसी कार्य्य से घबराकर भाग गए। कई जगहे देख भालकर अंत मे एक स्थान पर मिट्टी के लिये गड्ढा खोदा गया। वाशिंगटन पहले समझते थे कि ईंटे बनाने का काम बहुत सरल है, पर उस अवसर के अनुभव से उन्हे मालूम हो गया कि यह कार्य्य, विशेषत: ईंटें पकाना, बहुत ही कठिन है। बड़े परिश्रम से उन्होंने पचीस हजार ईंटें तैयार करके भट्ठे मे पकाने के लिये रखी। पहली बार उन्हे सफलता नहीं हुई और उन्होने दोबारा भट्ठा चढ़ाया। पर दूसरी बार भी वे कृत-कार्य्य नहीं हुए। इससे विद्यार्थी भी हतोत्साह हो गए और पुनः उस कार्य मे तत्पर न होते थे। तीसरी बार हैंपटन में इस विषय की शिक्षा पाए हुए अनेक अध्यापकों ने बड़े परिश्रम और उद्योग से फिर भट्ठा चढ़ाया। भट्ठा फूंकने के लिये एक सप्ताह का समय आवश्यक होता था। जब सप्ताह बीत चला और लोगों को यह आशा हुई कि शीघ्र ही बहुत सी ईंटे तैयार मिल जायँगी तो एक दिन आधी रात के समय पजावा गिर गया और उनके सारे परिश्रम पर पानी फिर गया!

अब वाशिंगटन के पास चौथी बार भट्ठा चढ़ाने के लिये धन बिलकुल न बचा, और अधिकांश शिक्षकों ने उन्हें यह

विचार परित्याग कर देने की सम्मति दी। उसी अवसर पर उन्हें अपनी एक पुरानी घड़ी का ध्यान आया। उस घड़ी को लेकर वे निकट ही के मांटगोमरी नामक एक नगर में गए और वहाँ एक दूकानदार के पास उसे रेहन रखकर पंद्रह डालर लाए। इस वार उनकी ईंटे भी भली भाँति पक गईं। पीछे जब उनके पास धन आया तब तक उस घड़ी के रेहन की मियाद बीत गई और वे उसे छुड़ा न सके। पर उस घड़ी के निकल जाने का उन्हें कभी कोई दुःख नहीं हुआ। आज-कल टस्केजी-विद्यालय के शिल्प-विभाग में ईंटों का भट्ठा एक मुख्य अंश है और उसमे प्रति वर्ष अधिकता से बढ़िया ईंटे तैयार होती हैं। इसके अतिरिक्त वहाँ के अनेक विद्यार्थी भिन्न-भिन्न स्थानो मे सफलतापूर्वक ईंटें बनाने का काम करते हैं।

ईंटों के काम से वाशिगटन ने गोरों और हबशियो के संबंध के विषय मे एक नई बात सीखी। उनके विद्यालय की बनी ईंटें बहुत बढ़िया होती थीं इसलिये नगर के अनेक गोरे यह भी समझने लगे कि हबशियों को शिक्षा व्यर्थ नहीं हुई बल्कि उलटे उससे समाज के वैभव और सुख की वृद्धि हो रही है। जब दोनों जातियों मे क्रय-विक्रय और लेन-देन होने लगा तब उनमे परस्पर बहुत अच्छा संबंध भी स्थापित हो गया जिससे विद्यालय के कार्य्य मे वाशिगटन को अधिक सुगमता होने लगी। दूसरी बात यह हुई कि उनके ईंटे बनाने-

वाले विद्यार्थी जहाँ गए हैं वहाँ उन्होंने समाज का बहुत कुछ उपकार करके उसे अपना अनुगृहीत और ऋणी बनाया है। इस कार्य से लोग टस्केजी-विद्यालय की उपयोगिता भी भली भाँति समझ गए हैं।

वाशिंगटन का यह पक्का अनुभव था कि मनुष्य की प्रकृति सदा गुण और योग्यता का अच्छा आदर करती है और उसे गुणी और योग्य मनुष्य की जाति और वर्ण का कुछ विचार नहीं रहता। यही नहीं, बल्कि गुण और योग्यता के कारण ही प्रायः दो जातियों के बीच का वैमनस्य या मन-मुटाव बहुत कुछ दूर हो जाता है।

औद्योगिक शिक्षा के इसी सिद्धांत पर टस्केजी-विद्यालय में अनेक प्रकार की गाड़ियाँ बनती हैं। इस समय विद्यालय और उसके खेतों के काम के लिये बीसियों गाड़ियाँ हैं जो सब की सब वहीं के विद्यार्थियों की बनाई हुई हैं। इसके अतिरिक्त उनकी बनाई हुई गाड़ियाँ बाजार में भी बिकती हैं। इस व्यापार का भी लोगों पर बहुत ही अच्छा प्रभाव पड़ा है और यह कार्य्य सीखे हुए विद्यार्थियों से सभी स्थानों पर समाज का बहुत कुछ उपकार होता है।

जो मनुष्य दूसरों की आवश्यकताएँ पूरी कर सकता है वह, चाहे किसी जाति का हो, अपना काम चला ही ले जाता है। यदि कोई मनुष्य किसी भाषा में पारंगत होकर किसी दूसरे समाज में जाता है तो वहाँ उसका उतना आदर नहीं

होता। पर यदि वही मनुष्य कोई ऐसा शिल्प जानता हो जिसकी सहायता से वह उस समाज के लोगों का कोई अभाव पूरा कर सके तो उसका विशेष आदर होता है।

पहले पहल ईंटें तैयार होने के उपरांत वाशिंगटन ने विद्यार्थियों को वह विद्या सिखलाने के लिये और भी अधिक ज़ोर दिया। उस समय तक आसपास के प्रांतों में यह भी प्रसिद्ध हो गया था कि टस्केजी-विद्यालय के प्रत्येक विद्यार्थी को, विना उसकी आर्थिक अवस्था का विचार किए, कोई न कोई शिल्प अवश्य सिखलाया जाता है। इस पर अनेक विद्यार्थियों के माता-पिता पत्र आदि भेजकर इस बात का विरोध करने लगे, और उनमे से कुछ तो इसके विरोध के लिये स्वयं ही चलकर विद्यालय मे पहुँचने लगे। अनेक विद्यार्थियों के माता-पिता किसी न किसी रूप में विद्यालय के अधिकारियो से यह प्रार्थना करते थे कि हमारे वालकों को पुस्तकों के अतिरिक्त और कुछ भी पढ़ाया या सिखलाया न जाय। बड़ी बड़ी पुस्तको और उनके बड़े बड़े नामो से ही विद्यार्थी और उनके माता-पिता अधिक प्रसन्न होते थे।

वाशिंगटन ने लोगों के इस प्रकार के विरोध पर कुछ भी ध्यान न दिया और उद्देश्य की सफलता के लिये वे भिन्न भिन्न राज्यों में घूमकर वालको के अभिभावको को औद्योगिक शिक्षा की महत्ता और उपयोगिता समझाने लगे। इसके अतिरिक्त वे विद्यार्थियों से भी वरावर इस संवंध मे वाते किया करते

थे। यद्यपि आरंभ मे औद्योगिक शिक्षा सर्वप्रिय नहीं हुई तो भी विद्यार्थियों की संख्या दिन पर दिन यहाँ तक बढ़ती गई कि दूसरे वर्ष के मध्य मे ही अलबामा के भिन्न भिन्न भागो तथा दूसरे राज्यों से आए हुए विद्यार्थी प्रायः डेढ़ सौ हो गए।

सन् १८८२ की ग्रीष्म ऋतु मे अपने साथ मिस डेविडसन को लेकर नए भवन के लिये धन संग्रह करने के अभिप्राय से वाशिंगटन उत्तर की ओर गए। रास्ते में वे न्यूयार्क नगर मे अपने एक पुराने पादरी मित्र से सिफारिशी चिट्ठी लेने के लिये ठहरे। उस मित्र ने उन्हे केवल चिट्ठी देना ही अस्वीकार नहीं किया बल्कि उन्हे चुपचाप घर लौट जाने की सम्मति दी, क्योंकि उसे दृढ़ विश्वास था कि उत्तर मे उन्हे अपने मार्ग-व्यय से अधिक धन न मिलेगा। वाशिंगटन ने उसे धन्यवाद देकर अपना रास्ता लिया। वहाँ से चलकर वे नार्थंपटन नगर मे पहुँचे। उन्हें स्वप्न मे भी यह आशा न थी कि कोई होटल-वाला हमें अपने यहाँ ठहरावेगा। इसलिये आधा दिन वे केवल किसी हबशी को खोजने के लिये इधर उधर घूमते रहे, जिसके यहाँ वे ठहर और भोजन कर सकते। पर पीछे उन्हें यह जानकर बहुत आश्चर्य्य हुआ कि यदि मैं चाहता तो हर एक होटल मे ठहर सकता था।

इस उत्तर-यात्रा मे उन्हें बहुत सा धन मिला था, और इसी लिये नई इमारत बनकर तैयार होने से पहले एक दिन उन्हें पोर्टर हाल के गिरजे मे ईश्वर को धन्यवाद देने और

उपासना तथा प्रार्थना करने के लिये विशेष दिन निश्चित करना पड़ा था। उस अवसर पर उपदेश देने के लिये भी उन्हे बेड-फोर्ड नामक एक बहुत ही सुयोग्य अँगरेज पादरी मिल गए। यद्यपि गोरों मे तो अभीष्ट-सिद्धि हो जाने पर इस प्रकार ईश्वर को धन्यवाद देने के लिये उत्सव करने की प्रथा अवश्य थी, पर हवशियों के लिये यह बिलकुल ही नई बात थी। इस-लिये उस दिन वहाँ का दृश्य भी बहुत ही अपूर्व था।

मि० बेडफोर्ड ने विद्यालय का ट्रस्टी होना भी स्वीकार कर लिया और तब से अब तक वे उसी हैसियत मे विद्यालय की सहायता कर रहे हैं। उन्हे दिन रात विद्यालय की उन्नति की चिंता लगी रहती है और वे उसकी सेवा और सहायता करके बहुत ही प्रसन्न होते हैं। ऐसे अवसरों पर, जब कि और लोग कोई काम करने से हिचकते या पीछे हटते हैं, मि० बेडफोर्ड बड़ी ही प्रसन्नता से आगे बढ़कर वह कार्य्य कर डालते हैं। वाशिंगटन के हृदय मे भी उनके लिये बहुत कुछ श्रद्धा और भक्ति है।

उसी अवसर पर हैंपटन-विद्यालय से पास होकर एक और सज्जन वहाँ आए जिन्होंने विद्यालय की उन्नति मे बहुत बड़ी सहायता दी। उनका नाम मिस्टर वारेन लोगन था। वे सत्ताईस वर्ष से विद्यालय के कोपाध्यक्ष हैं और वाशिंगटन की अनुपस्थिति मे प्रिंसिपल का कार्य्य भी करते थे। उनकी परोपकारिता और उच्च विचारों से विद्यालय को बड़ी सहा-

यता मिली है। अनेक अवसरों पर, जब कि धनाभाव के कारण विद्यालय को अनेक कठिनाइयाँ सहनी पड़ी हैं, मि० लोगन सदा दृढ़ रहे हैं और कभी हतोत्साह या निराश नहीं हुए।

पहला भवन बनकर तैयार होने से पहले ही विद्यालय मे विद्यार्थियों के निवास आदि का प्रबंध भी हो गया। दिन पर दिन दूर दूर से बहु-संख्यक विद्यार्थी आते थे, इसलिये उनके निवास आदि का प्रबंध बहुत ही आवश्यक था। नए भवन मे रसोई और भोजन आदि के लिये कोई स्थान नहीं बना था, इसलिये उन्होंने भवन के नीचे की भूमि खोदकर इस कार्य के लिये स्थान निकालने का विचार किया। विद्यार्थियों ने भूमि खोदने मे बहुत सहायता दी जिससे शीघ्र ही रसोई और भोजन आदि के लिये कुछ स्थान निकल आया। अब एक और विकट समस्या आ उपस्थित हुई। भोजन का सामान खरीदने के लिये धन बिलकुल नहीं था। इस पर नगर के कुछ व्यापारी वाशिंगटन को उधार खाद्य पदार्थ देने के लिये तैयार हो गए। पर बिना मिट्टी के तेलवाले चूल्हों और रिकावियो आदि के भोजन पकाना और खाना बहुत ही कठिन था। इसलिये विवश होकर उन्हे पुराने ढंग के चूल्हों से काम लेना पड़ा। बढ़इयों के काम की कुछ बेचें वहाँ पड़ी हुई थी; उन्हीं से टेबुलो का काम लिया गया और किसी प्रकार यह कठिनता भी दूर हुई।

आरंभ में रसोईघर का प्रबंध भी बहुत गड़बड़ रहता था। न तो भोजन के पदार्थ ही ठीक बनते थे और न भोजन का कोई निश्चित समय ही था। एक दिन प्रातःकाल वाशिंगटन ने भोजनागार के द्वार पर खड़े होकर सुना कि भीतर कुछ विद्यार्थी शिकायत कर रहे हैं। उनकी वह शिकायत भी ठीक ही थी, क्योंकि उन्हे जलपान बिलकुल न मिला था। जलपान न मिलने के कारण एक लडकी ने जाकर कुएँ से पानी खींचना और पीना चाहा, पर वहाँ रस्सी भी टूटी हुई थो। वहाँ से लौटकर उसने बहुत ही निराश होकर कहा—"इस विद्यालय मे तो पीने के लिये पानी भी नहीं मिलता।" उसके इस कथन से वाशिंगटन के हृदय को बहुत चोट पहुँची थी।

एक बार विद्यालय के ट्रस्टी मि० बेडफोर्ड निरीक्षण के लिये आए थे। उन्हे भोजनागार के ऊपर सोने के लिये स्थान दिया गया। एक दिन बहुत तड़के दो विद्यार्थियों मे झगड़ा होने के कारण उनकी नींद खुल गई। झगड़ा इस बात का था कि उस दिन दोनों मे से कहवे का प्याला कौन ले। अंत में एक ने सिद्ध कर दिया कि मुझे तीन दिन से प्याला नहीं मिला और उसने प्याला ले लिया।

बड़े परिश्रम और संताप से वाशिंगटन ने इन दोनों कठिनाइयों और अभावों को दूर किया। उस समय पीछे जब उन्हें उन पुरानी कठिनाइयों और अभावों का ध्यान आता

था तब वे बहुत ही प्रसन्न होते थे, क्योंकि वे भली भाँति समझते थे कि यदि हमारा आरंभ ही सुख और चैन से होता तो हमारे दिमाग विगड़ जाते और हम लोग अकर्म्मण्य हो जाते। उनका सिद्धांत है कि प्रत्येक कार्य का आरंभ, मनुष्य को अपने ही परिश्रम और अध्यवसाय से करना चाहिए। पीछे पुराने विद्यार्थी विद्यालय में आकर जब देखते थे कि सुंदर हवादार बड़े बड़े कमरों में बहुत से विद्यार्थी मिलकर बढ़िया बढ़िया भोजन करते हैं और सब कार्य्य नियमपूर्वक और ठीक समय पर होते हैं, तब प्रायः वाशिंगटन से कहा करते थे कि हम लोगों को इस बात की बहुत प्रसन्नता है कि हमने अपनी उन्नति बिलकुल स्वाभाविक नियम और क्रम से की है।

११—अन्य कठिनाइयाँ

कुछ दिनों के उपरांत, हैंपटन-विद्यालय के कोषाध्यक्ष और टस्केजी-विद्यालय को पहले पहल ढाई सौ डालर ऋण देनेवाले जनरल मार्शल विद्यालय में आए। उन्होंने वहाँ एक सप्ताह तक रहकर भली भाँति सब कार्य्यों का निरीक्षण किया। वहाँ के प्रबंध और कार्य्य-क्रम आदि से वे बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने बहुत ही उत्तम और उत्साह-वर्धक सम्मति लिखकर हैंपटन भेजी। इसके उपरांत वहाँ से, हैंपटन-

विद्यालय मे, पहले पहल वाशिंगटन से झाड़ू दिलवाकर उनकी परीक्षा लेनेवाली, मिस मैकी आईं और तदनंतर स्वय जनरल आर्मस्ट्रांग भी पधारे। उस समय तक टस्केजी-विद्यालय मे अध्यापकों की संख्या बहुत बढ़ गई थी जिनमे से अधिकांश हैंपटन के ग्रैजुएट ही थे। उन लोगो ने इन अभ्यागतों का बहुत अच्छा स्वागत किया। अभ्यागत भी स्कूल की इतनी अधिक उन्नति देखकर बहुत प्रसन्न हुए। कई कई मील से बहुत से हबशी जनरल आर्मस्ट्रांग को देखने के लिये आए थे। उनके अतिरिक्त बहुत से दक्षिणी गोरों ने भी उनका अच्छा स्वागत किया था।

सिविल वार मे जनरल आर्मस्ट्रांग ने दक्षिणी गोरों से युद्ध किया था, इसलिये वाशिंगटन समझते थे कि वे उन गोरों से चिढ़ते होगे। पर उनके टस्केजी आने पर वाशिगटन का यह भ्रम दूर हो गया और उन्होंने समझ लिया कि आर्म-स्ट्रांग बड़े उच्च विचार के महात्मा हैं। जिस ढंग से वे उन गोरो से मिलते और बातचीत करते थे उससे स्पष्ट मालूम होता था कि वे हबशियों और गोरों, दोनो के कल्याण के समान रूप से इच्छुक हैं। किसी भी अवसर पर उन्होने किसी गोरे के विषय मे कोई अनुचित या अयोग्य बात नहीं कही। इस अवसर पर वाशिंगटन ने उनके व्यवहार से बहुत अच्छी शिक्षा ग्रहण की। उन्होने समझ लिया कि महात्मा लोग परस्पर सदा प्रेम बढ़ाने का ही उद्योग करते हैं और इसके

विरुद्ध आचरण करनेवाले केवल क्षुद्र ही होते हैं। उन्होंने यह भी सिद्धांत निकाला कि जो मनुष्य दुर्बलो की सहायता करता है वह स्वयं सबल होता है और जो अभागों को दबाता है वह स्वयं निर्बल होता है। तभी से उन्होंने निश्चय कर लिया कि अब मैं कभी किसी जाति के मनुष्य के साथ घृणा करके अपने आपको नीच न बनाऊँगा। और ईश्वर की कृपा से उनका यह निश्चय बिलकुल पूरा उतरा। दक्षिणी गोरों की सेवा करके भी उन्हे ठीक उतनी प्रसन्नता होती थी जितनी अपने जाति-भाई की सेवा करने मे। जाति-द्वेष रखनेवालो पर उन्हे बहुत दया आती थी।

भली भाँति विचार करके वाशिंगटन ने निश्चय किया था कि दक्षिण अमेरिका के जो गोरे इस बात के उद्योग मे लगे रहते हैं कि राज-कार्य आदि मे हबशियो की सम्मति का कोई उपयोग न हो, वे केवल हबशियो की ही हानि नहीं करते बल्कि स्वयं अपनी भी हानि करते हैं। हबशियो की हानि तो अस्थायी ही होती है पर गोरों की नीतिमत्ता की स्थायी हानि होती है। उन्होने अनुभव करके यह बात जानी थी कि जो गोरा किसी अवसर पर हबशियों की शक्ति तोड़ने के लिये कोई अनुचित प्रयत्न करता है वह शीघ्र ही दूसरे अवसरो पर अपने जाति-भाइयो के साथ भी वैसा ही दुष्ट व्यवहार करने लग जाता है। जो गोरा आरंभ मे हबशियों को धोखा देता है, वह अंत मे गोरों को भी अवश्य धोखा

देता है। इन सब बातों से यह स्पष्ट सिद्ध है कि दक्षिण अमेरिका से इस अज्ञान के उठाने मे सारे राष्ट्र की सहायता बहुत आवश्यक है।

दूसरी बात यह है कि जनरल आर्मस्ट्रांग के शिक्षा-संबंधी विचारो का दिन पर दिन गोरों और हबशियों पर बहुत ही अच्छा प्रभाव पड़ता है। आजकल प्रायः सभी दक्षिणी राज्यो मे बालकों और बालिकाओं को शिल्प-कला की शिक्षा देने का बहुत कुछ उद्योग किया जाता है और ऐसे विचारो के मूल जनरल आर्मस्ट्रांग ही हैं।

जब टस्केजी-विद्यालय मे विद्यार्थियों के निवास आदि का प्रबंध हो गया तब और भी अधिक संख्या मे वहाँ विद्यार्थी आने लगे। धनाभाव होने पर भी कई सप्ताहो तक संचालकों को विद्यार्थियों के भोजन के अतिरिक्त बड़ी कठिनता से उनके बिस्तर आदि का भी प्रबंध करना पड़ा था। स्थान न होने के कारण उन्हें विद्यालय के पास ही कुछ कोठरियाँ किराए पर लेनी पड़ी थीं। वे कोठरियाँ बहुत बुरी दशा मे थीं जिनके कारण जाड़े मे विद्यार्थियो को बहुत कष्ट होता था। विद्यालय के संचालक प्रत्येक विद्यार्थी से आठ डालर मासिक लेते थे और उसके भोजन, निवास और कपड़े धोने का प्रबंध कर देते थे। इसके अतिरिक्त विद्यार्थी लोग विद्यालय का जो कार्य करते थे उसका पुरस्कार इन आठ डालरो मे से काट दिया जाता था। पढ़ाई की फीस पचास डालर वार्षिक

होती थी। और आजकल की भाँति उस समय भी जो विद्यार्थी यह रकम दे सकते थे उनसे वसूल कर ली जाती थी।

केवल पढ़ाई की फीस ही नगद मिलती थी और इतने थोड़े धन से विद्यार्थियो के भोजन आदि का प्रबंध न हो सकता था। दूसरे वर्ष शरद् ऋतु मे विद्यार्थियों को पूरा ओढ़ना बिछौना भी न मिल सका। कुछ समय तक तो थोड़े से विद्यार्थियों के लिये कंवल चटाई और बिस्तर का ही प्रबंध हो सका और शेष को वह भी न मिला। जिस दिन अधिक जाड़ा पड़ता उस दिन विद्यार्थियो की चिंता के कारण रात के समय वाशिंगटन को निद्रा भी न आती थी। अनेक बार उन्हे आधी रात के समय वालको को धैर्य दिलाने के लिये उनकी झोपड़ो मे जाना पड़ता था। वहाँ वे कई विद्यार्थियो को एक ही कंवल ओढ़कर आग के चारों ओर बैठा हुआ पाते थे। रात रात भर उन लोगों को लेटने का साहस भी न होता था। लेकिन इतना होने पर भी कोई विद्यार्थी किसी प्रकार की शिकायत न करता था। वे लोग भली भाति जानते थे कि विद्यालय के संचालक यथासाध्य हमारे सुख के लिये कोई बात उठा नही रखते। इसी लिये वे सदा सब कार्य्यों में शिक्षकों की सहायता करने के लिये भी तैयार रहते थे।

अमेरिकावाले प्राय: कहा करते हैं कि यदि किसी हबशी को कोई उच्च पद या अधिकार मिल जाय तो फिर उसके

उनकी परिचित दो भद्र स्त्रियाँ बैठी थी। संभवतः वे दक्षिण के व्यवहारों और नियमों से अपरिचित थी इसी लिये उन्होंने बहुत आग्रह करके उन्हे अपने पास बैठाया। थोड़ी ही देर बाद वाशिंगटन के अनजान में उन्होने नौकर को तीन आदमियों का भोजन परोसने की आज्ञा दी। उस गाड़ो मे दक्षिणी गोरे भरे हुए थे और उन सबकी दृष्टि इन्हीं तीनों आदमियो पर थी। वाशिंगटन ने भोजन करने से बचने के लिये अनेक उपाय किए, पर उन महिलाओ ने बहुत जोर देकर उन्हे अपने साथ भोजन करने के लिये विवश कर ही लिया। उनमे से एक स्त्री ने स्वयं उठकर उनके लिये एक विशेष प्रकार की चाय बनाई। भोजनोपरांत वहाँ से उठकर जब वे दूसरे कमरे में सिगरेट पीने के लिये गए तब वहाँ जार्जिया नगर के प्रायः सभी गोरे यात्रियों ने उनका बहुत आदर सत्कार किया और अपना अपना परिचय देकर उन्हे दक्षिण की उन्नति का उद्योग करने के लिये बहुत धन्यवाद दिया।

आरंभ से ही वाशिंगटन ने सदा इस बात का उद्योग किया था कि विद्यार्थी लोग विद्यालय को उनकी अथवा दूसरे अधिकारियों की संपत्ति न समझकर स्वयं अपनी समझें और सदा ट्रस्टियो और शिक्षकों की भाँति उसकी उन्नति की चिंता मे लगे रहे। इसके अतिरिक्त लोगो को वे यही जतलाने की चेष्टा करते थे कि हम विद्यालय के बड़े अधिकारी नहीं बल्कि केवल मित्र और परामर्शदाता हैं। प्रति वर्ष दो तीन

बार पत्र भेजकर वे विद्यार्थियों से विद्यालय के कार्य्यों की आलोचना करने के लिये कहते थे। यदि विद्यार्थी उन्हें आलोचना संबंधी पत्र न भेजते तो वे स्वयं उनसे गिरजा मे मिलते और विद्यालय के विषय मे बातें करते थे। विद्यालय के भविष्य-संबंधी विचारो में भी विद्यार्थी उन्हें बहुत सहायता दिया करते थे। अनेक अवसरो पर उन्हे विद्यार्थियों के वास्तविक अभिप्राय और विचारों का ठीक ठीक पता लग जाता था। किसी कार्य का उत्तरदायित्व दूसरे पर रखकर उसे यह जतला देना कि हम तुम्हारा विश्वास करते हैं, बहुत ही लाभदायक होता है। उनका विश्वास था कि यदि स्वामी और सेवक मे परस्पर सद्भाव और सद्व्यवहार हो, स्वामी अपने सेवकों को यह समझा दे कि दोनों का उद्देश्य एक ही है तो हड़ताल आदि अनेक कठिनाइयाँ दूर हो सकती हैं। यह एक साधारण नियम है कि जिस मनुष्य पर विश्वास किया जाता है वह भी अपने ऊपर विश्वास करता है। जब एक बार आप किसी को यह विश्वास करा दें कि आप निःस्वार्थ रूप से उसके शुभ की कामना करते हैं, तो फिर आप जहाँ तक चाहे, उसे अपना अनुगामी बना सकते हैं।

विद्यार्थियो से भवन बनवाने के अतिरिक्त वाशिंगटन उनसे मेज, कुरसियाँ तथा दूसरे सामान भी बनवाना चाहते थे। उस समय विद्यार्थियों को भविष्य में चारपाइयों और चटाइयों आदि की आशा में खाली जमीन पर सोना पड़ता

था। विद्यार्थियों ने चारपाइयाँ बनानी आरंभ की। पर वे लोग बढ़ई का काम कुछ भी नहीं जानते थे, इसलिये उनकी बनाई हुई चारपाइयाँ बहुत ही कमजोर और भद्दी होती थीं। जब कभी वाशिंगटन किसी विद्यार्थी के कमरे में जाते तो वहाँ वे एक दो टूटी हुई चारपाइयाँ अवश्य पाते थे। चटाइयाँ बनाने की समस्या भी बहुत ही कठिन थी। इसलिये सस्ते कपड़ों के टुकड़े मोल लेकर उनके थैले सी लिए गए और उनमे एक प्रकार की पुआल भर दी गई और चटाइयों के बदले उनका व्यवहार होने लगा। पर अब विद्यालय मे कुछ निश्चित बालिकाओं को चटाइयाँ बनाने की शिक्षा नियमित रूप से दी जाती है और वहाँ की बनी हुई चटाइयाँ बहुत ही सुंदर और मजबूत होती हैं। पहले पहल शयनागार या भोजनागार मे कुरसियों का भी कोई प्रबंध नही था। कुर-सियों के बदले भद्दी तिपाइयाँ काम मे लाई जाती थीं। उस समय विद्यार्थियों को केवल एक बिस्तर, कुछ तिपाइयाँ और कभी कभी एक भद्दा टेबुल मिलता था। अब भी ये सब सामान विद्यार्थियो को ही बनाने पडते हैं, पर अब सब चीजें सुंदर और सुदृढ़ बनती हैं और विद्यार्थियो को अधिक संख्या में मिलती हैं। सब जगह स्वच्छता का भी यथेष्ट ध्यान रखा जाता है।

बुरुश से दाँत साफ करने पर भी वहाँ बहुत जोर दिया जाता है। प्रत्येक विद्यार्थी के लिये नित्य बुरुश से दाँत साफ करना

अनिवार्य्य है। पुराने विद्यार्थियों से जो लोग यह बात सुनते हैं वे जब विद्यालय मे शिक्षा प्राप्त करने आते हैं तब अपने साथ कम से कम दॉत साफ करने का ब्रुश अवश्य लाते हैं। इसके अतिरिक्त शरीर के शेष अवयवो की स्वच्छता पर भी बहुत ध्यान दिया जाता है। प्रत्येक विद्यार्थी के लिये नित्य प्रति स्नान करना भी आवश्यक होता है। वहॉ कोई विद्यार्थी फटे या पैवंद लगे कपड़े नहीं पहनने पाता। तात्पर्य यह कि वहां विद्यार्थियों को सभी आवश्यक बातों की शिक्षा दी जाती है।

१२—धन-संग्रह

टस्केजी-विद्यालय मे जब बालको के निवास आदि का प्रबंध हो चुका तब पोर्टर हाल के एक खंड में बालिकाओ के निवास का भी प्रबंध किया गया। विद्यार्थी तो भवन के बाहर खुले स्थानों में भी रह सकते थे, पर बालिकाएॅ उस प्रकार नही रखी जा सकती थीं। शीघ्र ही बालकों और बालिकाओं के लिए स्थान की बहुत अधिक आवश्यकता प्रतीत होने लगी और एक और नया बड़ा भवन बनवाना निश्चित हो गया। उसका नकशा बनने पर मालूम हुआ कि उसके बनने मे दस हजार डालर लगेंगे। यद्यपि उस समय कार्य प्रारंभ करने के लिये अधिकारियों के पास धन बिलकुल न था, पर तो भी उन्होने उस नए भवन का पहले से ही नामकरण कर दिया। उस

राज्य के नाम पर भवन का नाम अलबामा हाल रखा गया। अब फिर मिस डेविडसन आस-पास के गोरों और हवशियों से धन-संग्रह करने का उद्योग करने लगीं। सब लोगों ने यथा-साध्य विद्यालय को सहायता भी दी। विद्यार्थियों ने भी पहले की भाँति जमीन खोदकर नीव की तैयारी आरंभ कर दी।

नए भवन के लिये वाशिगटन को धन की बहुत अधिक चिंता थी। उसी अवसर पर उन्हे जनरल आर्मस्ट्रांग का एक तार मिला जिसमे लिखा था कि क्या आप एक मास तक उत्तर प्रांत मे मेरे साथ प्रवास कर सकते हैं? यदि कर सकते हों, तो शीघ्र ही हैंपटन चले आवे। तदनुसार वाशिंगटन तुरंत हैंपटन पहुँचे। वहाँ पहुँचने पर उन्हे मालूम हुआ कि जन-रल ने अपने साथ चार गवैयों को लेकर उत्तर प्रांत के भिन्न भिन्न स्थानों मे भ्रमण करना निश्चित किया है। इसके अतिरिक्त, उनका यह भी विचार था कि प्रत्येक स्थान मे सभाएँ हों और उनमे जनरल महाशय और वाशिंगटन दोनों वक्तृताएँ दें। जनरल महाशय के मुँह से यह सुनकर वाशिगटन के आश्चर्य का ठिकाना न रहा कि ये सभाएँ हैंपटन-विद्यालय के लिये नही बल्कि टस्केजी-विद्यालय के लिये होंगी और उनका सारा व्यय हैंपटन-विद्यालय देगा। महात्मा आर्मस्ट्राग के अनेक सुकृत्यों का यह एक साधारण उदाहरण था।

इस प्रकार जनरल आर्मस्ट्रांग ने उत्तर मे घूम-घूमकर वहाँ के भले आदमियों से वाशिगटन का परिचय कराया और

अलबामा हाल के लिये धन-संग्रह किया। यदि कोई दुर्बल और संकुचित हृदय का मनुष्य होता तो वह यही समझता कि यह सारा धन माने. हैंपटन-विद्यालय के कोश से ही दिया गया है। पर महात्मा आर्मस्ट्रांग के हृदय मे ऐसे तुच्छ विचारो के लिये जरा भी स्थान न था। वे समझते थे कि उत्तर निवासियो का यह दान किसी एक विद्यालय की उन्नति के लिये नही वलिक समस्त हवशी जाति की उन्नति और कल्याण के लिये है। वे यह भी समझते थे कि हैंटपन-विद्यालय को यथेष्ट शक्तिशाली वनाने के लिये यह वात बहुत आवश्यक है कि वह समस्त दक्षिण की उन्नति के प्रयत्न का केंद्र वनाया जाय।

उत्तर की वक्तृताओ के संवंध मे जनरल ने वाशिंगटन को यह उपदेश दे रखा था—"श्रोताओ को प्रत्येक शब्द के साथ एक एक विचार या कल्पना दो।" अर्थात् तुम्हारे प्रत्येक शब्द से उनके हृदय में एक विचार उत्पन्न हो। वास्तव मे यह उपदेश बहुत ही महत्त्वपूर्ण है और प्रत्येक वक्ता के ध्यान रखने योग्य है। वाशिंगटन सदा इसी उपदेश के अनुसार कार्य करते रहे।

न्यूयार्क, वोस्टन, फिलाडेलफिया आदि सभी बड़े वड़े नगरों मे सभाएँ हुईं जिनमे जनरल आर्मस्ट्राग ने टस्केजी-विद्यालय को धन देने के लिये लोगो से प्रार्थना की। इन सभाओं का मुख्य उद्देश्य अलबामा हाल के लिये धन-संग्रह

करना था। इसके अतिरिक्त उनमें सर्वसाधारण को विद्यालय का परिचय भी दिया जाता था। इन दोनों कार्य्यों मे सफलता भी यथेष्ट हुई थी।

इस यात्रा के उपरात धन-संग्रह के लिये वाशिंगटन अकेले उत्तर की ओर जाने लगे। विद्यालय की आवश्यकताएँ दिन पर दिन बढ़ती जाती थी और उनकी पूर्त्ति के लिये धन की भी उतनी ही आवश्यकता होती थी। इसी कारण अंतिम पंद्रह वर्षों से वाशिंगटन का अधिकाश समय धन-संग्रह के लिये प्रवास करते ही बीतता था। इस बीच मे उन्होने बहुत कुछ उपयोगी अनुभव भी प्राप्त किया था। परोपकारी कार्य्यों के लिये धन-संग्रह करनेवाले लोग प्रायः उनसे पूछा करते थे कि आप धन संग्रह मे किन किन उपायो या नियमो का अवलंबन करते हैं। इस संबंध मे वाशिंगटन के दो नियम मुख्य थे। पहला तो यह कि साधारण लोगों और संस्थाओं को अपने कार्य्य का परिचय देने मे कोई त्रुटि न करना और दूसरे परिणाम के लिये अधीर न होना। दूसरा नियम बहुत ही कठिन है। यद्यपि वाशिंगटन महाशय अपने अनुभव से यह बात भली भाँति समझ चुके थे कि अधीर होने से कोई फल नहीं होता और यदि वही शक्ति कार्य मे लगाई जाय तो उसका बहुत अच्छा फल हो सकता है; पर तो भी इसमे संदेह नहीं कि ऐसी दशा में जब कि अपने पास धन बिलकुल न हो और महाजनों के बिल पर बिल आते हो, तो उस समय धैर्य्य

रखना कुछ कम कठिन काम नहीं होता। अनेक बड़े आदमियों और धनवानों से मिलकर वाशिंगटन ने यह भी अनुभव प्राप्त किया था कि बड़े बड़े कार्य्य वे ही लोग कर सकते हैं जो अपने शरीर और मन को अपने वश मे रखते हैं, जो कभी क्षुब्ध नहीं होते, जिनका आत्मसंयम किसी प्रसंग मे भी नष्ट नहीं होता और जो सदा शांत, सहनशील और नम्र बने रहते हैं। इस प्रकार के मनुष्यों मे सबसे अच्छे और आदर्श पुरुष प्रेसिडेंट विलियम मैकिनले हैं।

वाशिंगटन की सम्मति थी कि किसी कार्य्य मे सफलता प्राप्त करने का मूल मंत्र, उस कार्य्य के आगे अपने आपको भूल जाना है। अर्थात् कोई बड़ा कार्य्य करते समय मनुष्य को नितांत तल्लीन हो जाना चाहिए। मनुष्य जितना ही अधिक किसी कार्य्य मे लीन होकर अपने आपको भूल जाता है, उसे उतनी ही अधिक सफलता होती है। कुछ लोग धनवानों को केवल इसी लिये दोष देते हैं कि वे धनवान् हैं अथवा वे कुछ दान ही नहीं करते। वाशिंगटन ऐसे लोगों के बहुत विरोधी थे। उनका मत था कि ऐसे धनवानों को दोष देनेवाले लोग यह बात बिलकुल नहीं जानते कि यदि वे धनवान् अपने व्यापार आदि मे से बहुत सा धन निकालकर परोपकार आदि में लगा दें तो उससे कितने अधिक लोग दरिद्र हो जायँगे और कितनों की बहुत अधिक हानि होगी। इसके अतिरिक्त धनवानों के पास जितने अधिक लोग सहायता

मॉगने जाते हैं उनका उन्हे अनुभव भी नहीं होता। अनेक धनवानों के पास दिन मे वीस वीस आदमी सहायता मॉगने आते हैं। अनेक ऐसे दाता भी होते हैं जो कभी अपना नाम प्रकाशित नहीं करते। बहुत से लोग ऐसे भी होते हैं जिन्हे लोग कंजूस होने के कारण बहुत बुरा भला कहते हैं, पर वे ही लोग बहुत बड़े बड़े गुप्त दान दिया करते हैं। ऐसे लोगो के उदाहरण में वाशिगटन महाशय न्यूयार्क की उन दो भद्र महिलाओं के नाम लेते थे जिन्होने आठ वर्षों में टस्केजी विद्यालय के तीन बड़े बड़े भवन बनाने मे बहुत अधिक सहायता दी थी और जिनके नाम कदाचित् ही कभी प्रकाशित किए जाते थे।

यद्यपि वाशिगटन महाशय को टस्केजी-विद्यालय के लिये लाखो रुपए संग्रह करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था तथापि उनके संग्रह करने के प्रकार को कोई "भिक्षा" नही कह सकता। वे स्वयं प्राय: लोगों से कहते थे कि न तो मैं "भिक्षुक" हूँ और न "भिक्षा" माँगता हूँ। उनका दृढ़ विश्वास था कि किसी धनवान् से लगातार धन मॉगते रहने से ही प्राप्ति नही होती। जो लोग धन उपार्जन करना जानते हैं वे उसका व्यय करना भी खूब जानते हैं। उनका कथन था कि केवल धन मॉगने की अपेक्षा अपने किए हुए कार्य्यों का परिचय कराना ही अधिक प्रभावशाली और लाभदायक होता है। दाता लोग इसी बात पर अधिक ध्यान देते हैं।

यद्यपि घर घर माँगने जाने में बहुत अधिक परिश्रम और त्रास होता है तथापि उसका प्रतिफल अवश्य मिलता है। इस कार्य्य में मानवी स्वभाव के निरीक्षण करने का बहुत अच्छा अवसर मिलता है। इसके सिवा मनुष्य को बहुत बड़े बड़े आदमियों से मिलने का भी सुयोग प्राप्त होता है। इस प्रकार किसी देश का स्थूल रूप से निरीक्षण करने से मनुष्य को मालूम हो जाता है कि सबसे अधिक परोपकारी और सर्व-मान्य वे ही लोग होते हैं जो संसार का कल्याण करनेवाली संस्थाओं की सहायता करते हैं।

एक बार वाशिंगटन महाशय बोस्टन नगर की एक धनाढ्य महिला से मिलने गए। भेंट होने से पहले ही उसके पति ने आकर उनसे रुखाई से पूछा कि तुम्हे क्या चाहिए ? जब वे उसे अपना अभिप्राय जतलाने लगे तब वह इतना अधिक तेज और रूखा हो गया कि वाशिंगटन को बिना उस महिला के उत्तर की प्रतीक्षा किए ही लौट आना पड़ा। थोड़ी ही दूर पर वे एक दूसरे मकान मे गए जहाँ उनका बहुत अच्छा स्वागत हुआ। उस मकान के स्वामी ने उन्हें एक अच्छी रकम का चेक देते हुए कहा—"वाशिंगटन महाशय ! आपने मुझे एक अच्छे कार्य्य मे सहायता देने का अवसर दिया है, इसके लिये मैं आपका बहुत अनुगृहीत हूँ। आपके कार्य्यों के लिये हम लोग आपके बहुत ऋणी हैं।" वाशिंगटन महाशय का अनुभव था कि पहले प्रकार के, अर्थात् रुखाई का व्यवहार करनेवाले,

मनुष्यो की संख्या घट रही है और दूसरे प्रकार के, अर्थात् सुजनता का व्यवहार करनेवाले, मनुष्य दिन पर दिन बढ़ रहे हैं। अर्थात् दिन पर दिन धनवान् लोग यह समझते जाते हैं कि इस प्रकार सहायता माँगनेवाले लोग भिक्षुक नही बल्कि उन्ही का काम करनेवाले हैं। बोस्टन नगर मे उन्हे उदार और सज्जन मनुष्य बहुत अधिकता से मिले थे। उनका कथन था कि दाताओं की संख्या दिन पर दिन बढती जाती है।

उत्तर अमेरिका मे उन्हे कई कई दिन तक इधर उधर घूमते रहने पर भी कही से एक पैसा भी न मिलता था। जिन लोगों से उन्हे बहुत कुछ सहायता मिलने की आशा होती थी, उनसे कुछ भी न मिलता था, और जिन लोगो से कुछ भी न मिलने की आशा होती थी, वे ही कभी कभी भारी रकमे दे दिया करते थे। एक बार उन्होने सुना कि नगर से बाहर दो मील पर देहात मे एक ऐसे सज्जन रहते हैं जो विद्यालय की अवस्था जानने पर उन्हे अच्छी सहायता दे सकते हैं। एक दिन कड़कड़ाते जाड़े और पाले मे दो मील पैदल चलकर वे उनके पास गए। कुछ कठिनता से उनसे भेंट हुई। उन्होने सब बातें सुनी तो जी लगाकर, पर दिया कुछ भी नही। यद्यपि वाशिंगटन ने समझ लिया कि एक पहर व्यर्थ नष्ट हुआ तो भी उन्होने अपना कर्त्तव्य न छोड़ा। यदि वे उस मनुष्य के पास न जाते तो उन्हे अपना कर्त्तव्य-पालन न करने का बहुत दुःख होता। इस घटना के दो वर्ष पीछे वाशिं-

गटन को टस्केजी मे उसी मनुष्य का एक पत्र मिला जिसमे लिखा था—"आपके कार्य की उन्नति के लिये, इस पत्र के साथ मैं न्यूयार्क की, दस हजार डालर की, एक हुंडी भेजता हूँ। मैंने अपने दानपत्र मे यह पत्र आपके विद्यालय को लिख दिया था, पर अब मैं उसे अपने जीवन-काल में दे देना ही उचित समझता हूँ। मैं प्रसन्नता से आपको दो वर्ष पूर्ववाली भेंट का स्मरण दिलाता हूँ।"

वाशिंगटन महाशय को जितना अधिक संतोष यह हुंडी पाकर हुआ था, उतना कदाचित् और कभी नहीं हुआ। विद्यालय को अब तक जितने दान मिले थे, उन सबसे यह दान बड़ा था। साथ ही यह धन ऐसे अवसर पर आया था जब कि बहुत दिनों से विद्यालय को कहीं से कुछ भी न मिला था। धनाभाव के कारण उस समय अधिकारी लोग बहुत चिंतित थे। वाशिंगटन महाशय का कथन है—"किसी ऐसी बड़ी संस्था के कार्य्य-संचालन में—जिसमे धन की आवश्यकताएँ तो बहुत अधिक हों, पर धन-प्राप्ति का कोई मार्ग दिखाई न देता हो—मनुष्य जितना अधिक घबरा जाता है उतना अधिक किसी दूसरी अवस्था मे पड़कर नहीं घबरा सकता।"

वाशिंगटन पर दोहरा उत्तरदायित्व था और इसी लिये उनकी चिंता भी अधिक गहन थी। यदि टस्केजी-विद्यालय गोरों द्वारा संचालित होकर अंत मे बैठ जाता तो उससे केवल हबशियों की शिक्षा की हानि होती। पर वाशिंगटन समझते

थे कि यदि हवशियों द्वारा संचालित होकर यह विद्यालय बैठ जायगा, तो उससे केवल शिक्षा संबंधी हानि ही नहीं होगी बल्कि भविष्य मे हबशियों की इस योग्यता पर से ही लोगों का विश्वास उठ जायगा। दस हजार की इस हुंडी ने वाशिंगटन को चिंता के बोझ से वहुत कुछ हलका कर दिया था।

आरंभ से ही वाशिंगटन सदा अपने अध्यापकों को यही समझाया करते थे कि विद्यालय की आंतरिक अवस्था जितनी ही निर्मल और सुंदर होगी, उसे बाहर से उतनी ही अधिक सहायता मिलेगी।

वाशिंगटन पहली बार जव रेल की सड़क बनानेवाले हंटिंगटन नामक एक सज्जन से मिले तब उसने उन्हे विद्यालय के लिये केवल दो डालर दिए थे। उसी हंटिंगटन ने अपनी मृत्यु से कुछ ही मास पूर्व उन्हे उसी कार्य्य के लिये पचास हजार डालर दिए! इसके अतिरिक्त उसने और उसकी स्त्री ने और भी कई वार विद्यालय की धन द्वारा सहायता की थी। कुछ लोग कहते हैं कि ये पचास हजार डालर टस्केजी-विद्यालय को केवल सौभाग्यवश मिल गए थे। पर वाशिंगटन का कथन था कि यह धन कठिन परिश्रम का फल था। बिना परिश्रम के कभी कुछ नहीं मिलता। पहली बार जब उन्हे हंटिगटन से दो डालर मिले तव से वे बराबर उसे यह जतलाने की चेष्टा करते थे कि उनका विद्यालय अधिक दान का पात्र है। लगभग बारह वर्षों तक वे इसी उद्योग में लगे रहे।

ज्यो ज्यों हंटिंगटन की दृष्टि मे विद्यालय की उपयोगिता वढ़ती गई त्यों त्यो वे उसकी अधिक सहायता करते गए। धन द्वारा सहायता देने के अतिरिक्त वे समय समय पर वाशिगटन को विद्यालय-परिचालन के विषय मे भी वहुत अच्छी सम्मति दिया करते थे।

एक वार पदवीदान के अवसर पर वोस्टन के पादरी डाक्टर डोनल्ड विद्यालय मे वक्तृता देने के लिये निमंत्रित किए गए। उस समय वहाँ वड़े वड़े हाल या कमरे न थे, इसलिये उस अवसर के लिये एक साधारण मंडप वनाया गया। ज्योंही डाक्टर डोनल्ड वक्तृता देने के लिये खड़े हुए त्योंही वर्षा होने लगी। विवश होकर पादरी महाशय को रुक जाना पड़ा और तव एक मनुष्य उन पर छाता लगाकर खड़ा हुआ। थोड़ी देर वाद वर्षा समाप्त होने पर डाक्टर डोनल्ड ने अपनी वक्तृता समाप्त की। इसके उपरांत डाक्टर महाशय ने साधारणतः कहा कि यदि यहाँ एक गिरजा वन जाय तो वहुत अच्छा हो। दूसरे ही दिन वाशिगटन को इटली-प्रवासिनी दो महिलाओं का एक पत्र मिला जिसमे लिखा था कि हम लोगों ने इस गिरजे के लिये आवश्यक धन देना निश्चित किया है।

इसके कुछ ही दिनों वाद अमेरिका के सुप्रसिद्ध दानी मि० एंड्रु कारनेजी ने टस्केजी-विद्यालय के पुस्तकालय के नए भवन के लिये वीस हजार डालर भेजे। विद्यालय का पहला

पुस्तकालय एक बहुत ही छोटे और संकीर्ण स्थान में था। मि० कारनेजी से यह सहायता पाने के लिये वाशिगटन को लगातार दस वर्षों तक परिश्रम करना पड़ा था। पुस्तकालय के भवन के संबंध मे वाशिगटन ने अंतिम पत्र मि० कारनेजी को १५ दिसंबर सन् १९०० को भेजा था। उस पत्र मे लिखा था—

"प्रिय महाशय,

कई दिन पूर्व जब मैं आपके मकान पर आपसे मिलने गया था तब आपने मुझसे पुस्तकालय-भवन के संबंध में लिखित प्रार्थनापत्र भेजने के लिये कहा था। तदनुसार मैं आज यह पत्र आपकी सेवा में भेजता हूँ।

इस समय हमारे विद्यालय में ११०० विद्यार्थी और ८६ अधिकारी और शिक्षक सपरिवार रहते हैं। विद्यालय के आसपास और भी २०० हबशी रहते हैं। ये सब लोग पुस्तकालय-भवन का उपयोग करेंगे।

हमारे पास १२०० से अधिक ग्रंथ, सामयिक पत्र, और मित्रों के दिए उपहार आदि हैं, पर हमारे पास न तो इस समय उनके रखने के लिये और न वाचनालय के लिये ही कोई उपयुक्त स्थान है।

हमारे विद्यालय के ग्रैजुएट दक्षिण के सभी भागों में कार्य्य करने के लिये जाते हैं और इस पुस्तकालय से जो ज्ञान प्राप्त किया जायगा वह समस्त हबशी जाति की उन्नति मे सहायक होगा।

हमारे आवश्यकतानुसार भवन बीस हजार डालर मे बन जायगा। ईंटें बनाने और गढ़ने, लकड़ियाँ गढ़ने और लोहारी आदि का भवन संबंधी कुल कार्य विद्यार्थियों द्वारा ही होगा। आपके धन से केवल भवन ही नहीं बनेगा, बल्कि भवन बनने से बहुत से विद्यार्थियों को इमारत के काम की शिक्षा मिलेगी और उनके कार्य्य के पुरस्कार-स्वरूप उन्हे जो धन मिलेगा, उसकी सहायता से वे विद्यालय मे रहकर शिक्षा प्राप्त कर सकेंगे। मुझे आशा नहीं है कि इतने धन से किसी दूसरी जाति की इतनी अधिक उन्नति हो सकेगी।

यदि आप कुछ और अधिक विवरण जानना चाहेगे तो मैं आपको वह भी प्रसन्नतापूर्वक बतला दूँगा।

भवदीय

बुकर टी० वाशिंगटन,

प्रिंसिपल।"

इस पत्र के उत्तर मे मि० कारनेजी ने लिख भेजा कि मैं इस कार्य के लिये बीस हजार डालर तक देने के लिये बड़ी प्रसन्नता से तैयार हूँ। वाशिंगटन का विश्वास था कि यदि व्यवहार बहुत साफ रखा जाय तो धनवानों और बड़े आदमियों की उससे शीघ्र ही सहानुभूति हो जाती है।

यद्यपि टस्केजी-विद्यालय को बहुत बडी बड़ी रकमे मिली हैं, तो भी उसका अधिकाश कार्य साधारण स्थिति के लोगों के छोटे छोटे दानों से ही हुआ है। साधारणतः सभी परोप-

कारी कार्य्य छोटे छोटे दानों पर ही अवलंबित रहते हैं। एक एक पाई एकत्र करके ही अमेरिका की अनेक ईसाई सभाओं ने गत चालीस वर्षों में हवशियों की इतनी अधिक काया पलट कर दी है। साधारणत: शिक्षा प्राप्त करने के उपरांत जो ग्रैजुएट विद्यालय से निकलते हैं, वे २५ सेंट से १० डालर तक प्रति वर्ष विद्यालय की सहायता के लिये भेजा करते हैं।

विद्यालय के तीसरे वर्ष मे उसकी आय के तीन और मार्ग निकल आए और उन मार्गों से विद्यालय को अब तक आय होती है। एक तो अलबामा सरकार ने अपनी सहायता दो हजार डालर से बढ़ाकर तीन हजार डालर प्रति वर्ष कर दी और आगे चलकर वह सहायता पाँच हजार डालर तक पहुँच गई। इस वृद्धि में वहाँ की व्यवस्थापक सभा के सभ्य माननीय मिस्टर फास्टर ने बहुत उद्योग किया था। दूसरे जान स्लेटर फंड से उन्हे एक हजार डालर प्रति वर्ष मिलने लगे। इसके अतिरिक्त पीबाडी नामक एक दूसरे फंड से भी उन्हें पाँच सौ डालर मिलने लगे। •इस समय पहले फंड से विद्यालय को ग्यारह हजार और दूसरे फंड से पंद्रह सौ डालर प्रति वर्ष मिलते हैं।

१३—पाँच मिनट की वक्तृता के लिये दो हजार मील की यात्रा

जब विद्यालय मे विद्यार्थियों के निवास आदि का प्रबंध हो गया तब बहुत से ऐसे विद्यार्थियों ने भी विद्यालय मे प्रविष्ट होने की प्रार्थना की जो योग्य और सत्पात्र होने पर भी किसी प्रकार की फीस देने में नितात असमर्थ थे। इस प्रकार के प्रार्थी स्त्री और पुरुष दोनों ही थे। सन् १८८४ मे इन लोगों के लिये एक रात्रि-पाठशाला स्थापित की गई। इस पाठशाला का संगठन हैंपटन की रात्रि-पाठशाला के ढंग पर हुआ था। आरंभ मे उसमे केवल बारह विद्यार्थी थे। यह निश्चय हुआ कि वे लोग दिन मे दस घंटे शिल्प-विभाग में काम करें और संध्या को दो घंटे पाठशाला में पढ़ें। शिल्प-विभाग से उन्हे उनके भोजनादि के व्यय से कुछ अधिक पुरस्कार मिलता था और उसमे से जो कुछ बच रहता था, वह विद्यालय मे इसलिये जमा किया जाता था कि आगे चलकर जब वे लोग दिन के विद्यालय मे प्रविष्ट हो तब उस जमा किए हुए धन से उनका व्यय चलाया जाय। इस समय इस रात्रि-पाठशाला मे साढ़े चार सौ से अधिक विद्यार्थी पढ़ते हैं।

इस रात्रि-पाठशाला में विद्यार्थियों की योग्यता और शक्ति की बहुत अच्छी परीक्षा हो जाती है। इसी लिये वाशिंगटन उन्हें बहुत ही विश्वसनीय समझते थे। जो पुरुष या स्त्री विद्या-

भ्यास के लोभ से दिन के समय लगातार ईंटों के भट्ठे या धोबीखाने मे काम करें, अवश्य ही उसके उच्च शिक्षा के अधिकारी होने मे कोई संदेह नहीं है। रात्रि-पाठशाला से निकलकर विद्यार्थी जब दिन की पाठशाला मे प्रविष्ट होता है तब उसे सप्ताह मे चार दिन पढ़ना और दो दिन काम करना पड़ता है। इसके अतिरिक्त ग्रीष्म ऋतु मे भी उसे लगातार तीन मास तक काम करना पड़ता है। बड़े बड़े धनवानों के लड़कों को भी वहाँ शारीरिक परिश्रम अवश्य ही करना पड़ता है। विद्यालय से तैयार होकर निकलनेवाले बहुत अच्छे अच्छे ग्रैजुएटों में से अधिकाश ने रात्रि-पाठशाला से ही अपनी शिक्षा आरंभ की थी। विद्यालय मे धार्म्मिक शिक्षा पर भी यथेष्ट ध्यान दिया जाता है। यह शिक्षा ईसाई धर्म्म की होती है।

सन् १८८५ मे मिस ओलीविया डेविडसन के साथ वाशिगटन महाशय का विवाह हुआ। विवाह के बाद भी श्रीमती डेविडसन पहले की भाँति विद्यालय की उन्नति और उसके लिये धन-संग्रह मे लगी रहीं। सन् १८८६ मे उनका देहांत हो गया। इस बीच मे उन्हे बेकर टेलियाफेरो और अरनेस्ट डेविडसन नामक दो पुत्र हुए थे। बड़े पुत्र बेकर ने ईंटो के काम की बहुत अच्छी शिक्षा पाई है।

लोग प्रायः वाशिंगटन से पूछा करते थे कि आपने सर्व-साधारण मे वक्तृता देने का आरंभ किस प्रकार किया। इसके उत्तर मे उनका कथन था कि सार्वजनिक भाषण मे मैंने

अपने जीवन का बहुत ही थोड़ा अंश लगाया है। बात यह है कि वे सदा कोरी बातें करने की अपेक्षा वास्तविक कार्य करना अधिक पसंद करते थे। जनरल आर्मस्ट्रांग के साथ जब वे उत्तर की ओर धन-संग्रह करने गए थे तब वहाँ जातीय शिक्षा-समिति (National Educational Association) के सभापति माननीय टामस डब्ल्यू विकनेल ने एक सभा मे इनकी वक्तृता सुनी थी। उसके कुछ ही समय उपरांत विकनेल महाशय ने उन्हें उक्त एसोसिएशन के दूसरे अधिवेशन मे व्याख्यान देने के लिये निमंत्रित किया। यह अधिवेशन मेडिसन नामक नगर मे होनेवाला था। वाशिंगटन ने यह निमंत्रण स्वीकार कर लिया। यही मानो उनके सार्वजनिक भाषण का आरंभ हुआ।

एसोसिएशन मे उनकी वक्तृता के समय प्राय. चार हजार आदमी उपस्थित थे। उनमें से बहुत से लोग अलबामा और टस्केजी के भी थे। उनमे से कुछ लोगों ने पीछे से उनसे यह भी कहा था कि हम लोग समझते थे कि वहाँ आप दक्षिण अमेरिका के लोगों को कुछ कटु वाक्य सुनावेंगे, पर वह बात नही हुई। उलटे दक्षिण अमेरिकावालो ने जो अच्छे अच्छे कार्य्य किए थे, उनके लिये उनकी प्रशंसा की गई थी। वाशिंगटन ने पहले पहल इसी अवसर पर अपनी सारी जाति के विषय मे अपने विचार प्रकट किए थे। उनकी वक्तृता से सभी श्रोता बहुत प्रसन्न हुए थे।

जिस समय वाशिंगटन पहले पहल टस्केजी आए थे, उसी समय उन्होंने निश्चय कर लिया था कि हम इसे अपना निवास-स्थान बनावेंगे और यहाँ के लोगों के अच्छे कार्यों की प्रशंसा और बुरे काय्यों की निंदा, यहाँ के गोरों की भाँति करेंगे। उन्होंने यह भी निश्चय किया था कि उत्तर मे जाकर हम कोई ऐसी बात न कहेंगे, जिसे दक्षिण मे कहने के लिये तैयार न हों। साथ ही वे भली भाँति यह भी समझते थे कि किसी मनुष्य के बुरे आचार-विचार उसे कटुवाक्य सुनाकर नहीं बदले जा सकते, बल्कि इस कार्य्य के लिये केवल दोषों की ओर ध्यान आकर्षित करने की अपेक्षा उसके उत्तम काय्यों की प्रशंसा करने की अधिक आवश्यकता होती है। अपने इस सिद्धांत का पालन करते हुए भी वे समय समय पर उचित रीति से दक्षिणवालो के दोषों की ओर उनका ध्यान आकर्षित कराया करते थे। उनकी समझ में दक्षिणवाले उचित आलोचना पर ध्यान देने के लिये सदा तैयार रहते थे।

अपनी मेडिसनवाली वक्तृता में उन्होने कहा था कि सब जातियों को सदा उचित उपायों से सुहृद्भाव स्थापित करने की चेष्टा करनी चाहिए और वोट देने के समय हबशियों को उन लोगों का ध्यान छोड़ देना चाहिए जो उनसे हजारो मील दूर हैं और जिनके साथ उनका कोई संबंध नहीं है और सदा उस समाज के लाभों का ध्यान रखना चाहिए जिसमे वे लोग रहते हैं। हबशियों का सारा भविष्य केवल इसी प्रश्न पर

निर्भर है कि उन्हे अपने परिश्रम, योग्यता और आचरण से अपने आपको समाज का बहुत ही उपयुक्त और आवश्यक अंग बना लेना चाहिए या नही। जो मनुष्य औरो की अपेक्षा कुछ अधिक अच्छा कार्य्य करता है वह मानो इस प्रश्न की मीमांसा कर लेता है और जो हवशी दूसरो की आवश्यकताएँ जितनी ही अधिक मात्रा मे पूरी कर सकता है, वह उतनी ही अधिक प्रतिष्ठा प्राप्त करता है।

अपने इस कथन की सत्यता प्रमाणित करने के लिये उन्होंने एक घटना का उल्लेख भी किया था। उनके विद्यालय के एक ग्रैजुएट ने वैज्ञानिक ज्ञान और कृषि के नवीन सिद्धांतों की सहायता से एक एकड़ भूमि से ३२६ मन मीठे आलू उत्पन्न किए थे, पर और लोग एक एकड़ मे केवल ४९ मन आलू ही उत्पन्न कर सकते थे। उसके पड़ोसी गोरे खेतिहर उसका आदर करने लगे और उसके पास नए सिद्धांत सीखने के लिये आने लगे। उनके आदर-सत्कार का मुख्य कारण यही था कि उस ग्रैजुएट ने अपने ज्ञान और परिश्रम से अपने समाज का सुख और वैभव बढ़ाया था। अपनी वक्तृता मे उन्होंने यह बात भी भली भाँति समझा दी थी कि हमारी शिक्षा-पद्धति का केवल इतना ही फल नहीं होगा बल्कि आगे चलकर हमारे पुत्र पौत्र आदि और भी अधिक उत्तम कार्य्य कर सकेंगे। उनके विचारों का साराश प्राय: यही था और उनके ये सिद्धांत भी अत तक ज्यों के त्यों बने रहे।

पहले जब वाशिंगटन महाशय किसी मनुष्य को हबशियों के प्रति कोई कटु वाक्य कहते हुए सुनते या उन्हें किसी प्रकार दबाने का उद्योग करते हुए देखते तो मन ही मन बहुत अप्रसन्न होते थे। पर पीछे उनका वह भाव बदल गया था। तब उन्हें ऐसे मनुष्यों पर उलटे दया आती थी। वे समझते थे कि ऐसी भूल मनुष्य उसी समय करता है जब उसे स्वयं किसी प्रकार की उन्नति करने का अवसर नहीं मिलता। उस पर उन्हें दया इसलिये आती थी कि वह संसार की उन्नति मे बाधा डालने की चेष्टा करता था। वे यह भी समझते थे कि समय पाकर संसार की उन्नति से अपनी सकीर्ण अवस्था के कारण वह स्वयं ही लज्जित होगा। मानव जाति का ज्ञान, सुधार, कला-कौशल, स्वतंत्रता, पारस्परिक सहानुभूति और प्रेम संबंधी उन्नति को रोकने की चेष्टा करना मानो किसी चलती हुई रेलगाड़ी को रोकने के लिये स्वयं उसके आगे लेट जाना है।

इस विचारपूर्ण और प्रभावशाली वक्तृता के कारण वाशिंगटन ने उत्तर मे अच्छी प्रसिद्धि प्राप्त कर ली और इसके उपरांत समय समय पर भिन्न भिन्न स्थानों से वक्तृता देने के लिये उन्हें अनेक निमंत्रण आने लगे। उस समय वे दक्षिण के गोरे प्रतिनिधियों पर भी अपने विचार प्रकट करने के लिये उत्सुक हो रहे थे। संयोगवश सन् १८९३ में जब एटलांटा मे मिशनरियों की बड़ी भारी सभा हुई तब उनकी इच्छा पूर्ण होने का अवसर भी उन्हे मिल गया। पर उसी अवसर पर उन्हें

वोस्टन मे भी कई वक्तृताएँ देनी थी, जिनके कारण एटलांटा में उनका भाषण होना असंभव मालूम होने लगा। अपने निश्चित स्थानो और तिथियों की सूची देखने से उन्हे ज्ञात हुआ कि एक ट्रेन से हम एटलांटा में वक्तृता देने के समय से आध घंटे पहले पहुँच सकते हैं और बोस्टन लौटने से पहले वहाँ केवल एक घंटे ठहर सकते हैं। एटलांटा से उन्हे जो निमंत्रण आया था उसमें उनकी वक्तृता के लिये केवल पाँच मिनट का समय रखा गया था। अब उनके सामने प्रश्न केवल यही था कि केवल पाँच मिनट की वक्तृता के लिये इतना वड़ा प्रयास करके हम उतनी ही अधिक उपयुक्त वक्तृता दे सकेंगे या नहीं।

वाशिगटन ने सोचा कि उस अवसर पर बहुत बड़े बड़े लोग एकत्र होगे और उन लोगो को टस्केजी-विद्यालय के कार्य्यों से परिचित कराने तथा गोरों और हवशियो के पारस्परिक संवंध के विपय में कुछ कहने का ऐसा अच्छा अवसर शीघ्र न मिलेगा। इसलिये उन्होंने इतने थोड़े समय के लिये वहाँ जाना ही निश्चित किया। पाँच मिनट तक उन्होने वहाँ दो हजार उत्तरी और दक्षिणी गोरो के सामने वक्तृता दी। सबने वड़े ध्यान और उत्साह से उनकी बातें सुनीं। उनकी वक्तृता की वहाँ अच्छी चर्चा हुई और समाचार-पत्रों ने उसकी उत्तम आलोचना की। वाशिंगटन का उद्देश्य सफल हुआ।

अब दिन पर दिन लोगो में उनकी वक्तृता सुनने की चाह बढ़ने लगी और गोरे तथा हवशी सभी उसके लिये समान

रूप से उत्सुक होने लगे। टस्केजी-विद्यालय के कार्य्यों से वे जितना समय बचा सकते, उतने समय मे वे प्रसन्नतापूर्वक लोगों की इच्छा पूरी करते थे। उत्तर मे अधिकाश व्याख्यान विद्यालय के लिये धन-संग्रह करने के उद्देश्य से ही होते थे और हवशियों के सामने जो व्याख्यान दिए जाते थे उनमे उन्हें साधारण और धार्म्मिक शिक्षा के अतिरिक्त औद्योगिक शिक्षा का महत्त्व भी समझाया जाता था।

१८ सितंबर सन् १८९५ को एटलांटा में "एटलांटा स्टेट्स और इंटरनेशनल एक्सपोजिशन" नाम की एक बडी भारी प्रदर्शिनी खोली गई थी। उस अवसर पर वाशिंगटन महाशय ने जो वक्तृता दी थी, उसके कारण उनकी कीर्ति प्राय: सारे राष्ट्र में फैल गई। पहली बार एटलांटा मे उन्होंने पाँच मिनट की जो वक्तृता दी थी उसके कारण सर्वसाधारण मे उनका आदर-मान बहुत अधिक बढ़ गया था और इसलिये लोगों ने उन्हें दूसरी वक्तृता देने के लिये निमंत्रण दिया था। सन् १८९५ की वसंत ऋतु में उन्हे एटलांटा के मुख्य मुख्य नागरिकों का एक तार मिला जिसमे उन्हें उस कमेटी में सम्मिलित होने के लिये निमंत्रित किया गया था जो प्रदर्शिनी के वास्ते सरकारी सहायता माँगने के लिये वाशिंगटन की कांग्रेस की एक कमेटी के समक्ष जानेवाली थी। जिस कमेटी मे सम्मिलित होने के लिये वाशिंगटन निमंत्रित किए गए थे उसमे जार्जिया के पचीस बहुत प्रतिष्ठित और विद्वान् सज्जन

सम्मिलित थे, जिनमे से वाशिंगटन के अतिरिक्त केवल दो और सभ्य हवशी थे। कमेटी के सामने सबसे पहले मेयर तथा अन्य कई प्रतिष्ठित नागरिकों के भाषण हुए। तदुपरांत दोनों हवशी विशपो ने अपना वक्तव्य सुनाया और सबके अंत मे वाशिंगटन ने कुछ कहा। इससे पहले न तो वे कभी इस प्रकार की कमेटी के सामने कुछ बोले थे और न कभी राजनगर मे उनका भाषण हुआ था। उस अवसर पर भी उन्होंने यही कहा था कि यदि कांग्रेस वास्तव में दक्षिण से जाति-भेद का भाव दूर करना चाहती है तो उसे उचित है कि वह यथाशक्ति शीघ्र उनकी सांपत्तिक और मानसिक उन्नति के लिये यथोचित चेष्टा करे। उन्होंने यह भी कहा था कि एटलांटा की प्रदर्शिनी मे दोनों जातियों को, दासत्व-काल से अब तक की हुई अपनी अपनी उन्नति दिखलाने का सुयोग मिलेगा और साथ ही भविष्य मे और अधिक उन्नति करने के लिये उत्तेजना मिलेगी। यद्यपि केवल राजनैतिक आंदोलन से ही हवशियों का कल्याण नहीं हो सकता तो भी उनके राजनैतिक अधिकारो को नष्ट करने का कोई प्रयत्न नहीं होना चाहिए। इसके अतिरिक्त हवशियों को दरिद्र, परिश्रमी, मितव्ययी, बुद्धिमान् और शुद्धाचारी भी होना चाहिए, क्योंकि बिना इन बातों के कोई जाति स्थायी सफलता नहीं प्राप्त कर सकती। यदि इस कमेटी की प्रार्थना स्वीकार करके कांग्रेस धन की सहायता दे देगी तो अवश्य ही उससे दोनों जातियों का

वास्तविक और चिरस्थायी कल्याण होगा। सिविल वार के उपरांत उसे इस प्रकार का यह पहला ही सुअवसर मिला है।

वाशिंगटन का यह भाषण कोई पंद्रह या बीस मिनट तक हुआ था। उसकी समाप्ति पर जार्जियावाली तथा कांग्रेस कमेटी ने उन्हें अनेक हार्दिक धन्यवाद दिए थे। कमेटी ने एकमत होकर सरकार मे बहुत ही अनुकूल सम्मति लिख भेजी और शीघ्र ही धन-दान की भी स्वीकृति हो गई। साथ ही यह भी निश्चय हो गया कि एटलांटा प्रदर्शिनी को यथेष्ट सफलता प्राप्त होगी।

इस यात्रा से लौटकर प्रदर्शिनी के संचालकों ने निश्चय किया कि प्रदर्शिनी मे एक ऐसा बड़ा भवन बनवाना बहुत ही उपयुक्त होगा जिसमें यह दिखलाया जाय कि दासत्व-काल से अब तक हबशियों ने क्या उन्नति की है। यह भी निश्चय हुआ कि वह इमारत केवल हबशी कारीगरो से ही बनवाई जाय। यह निश्चय शीघ्र ही कार्य्य-रूप मे भी परिणत हो गया। हबशियो का भवन किसी बात मे शेष भवनों से कम नहीं था। प्रदर्शिनी के संचालक पहले चाहते थे कि इस कार्य्य का प्रबंध वाशिंगटन पर छोड़ा जाय, पर उस समय विद्यालय में कार्य्य की अधिकता होने के कारण उन्होने यह बात स्वीकृत न की। उनकी सम्मति से एक दूसरे सज्जन को यह कार्य्य सौंपा गया था और वाशिंगटन ने उन्हें यथेष्ट सहायता दी थी। हैंपटन तथा टस्केजी-विद्यालय की भेजी हुई चीजों पर लोगों का

ध्यान बहुत आकर्षित होता था। दक्षिणी गोरे इस विभाग की चीजें देखकर बहुत ही चकित और प्रसन्न हुए थे।

प्रदर्शिनी खुलने का दिन समीप आया और कार्य-क्रम निश्चित होने लगा। कुछ लोगों ने प्रस्ताव किया कि इस अवसर पर किसी हबशी से भी आरंभिक वक्तृता दिलवाई जाय, क्योंकि इससे दोनों जातियों मे सद्भाव की वृद्धि होगी। यद्यपि कुछ लोगो ने इसका विरोध किया, तो भी सुयोग्य डाइरेक्टरो ने एक हबशी को आरंभिक वक्तृता देने के लिये निमंत्रित करना निश्चित कर लिया। कई दिनों के वादविवाद के उपरात यह भी निश्चय हुआ कि यह वक्तृता वाशिंगटन महाशय दें। शीघ्र ही हमारे चरितनायक को इस संबंध का निमंत्रण भी मिल गया।

इस निमंत्रण के भारी उत्तरदायित्व का ठीक ठीक अनुमान वही कर सकता है जो स्वयं कभी उस स्थिति मे पड़ा हो। वाशिंगटन को अपनी पहले की दीन दशा का स्मरण हो आया। संभव था कि उस अवसर पर उनके पूर्व-स्वामियों में से भी कोई उपस्थित होता। एक हबशी के लिये ऐसे महत्त्व-पूर्ण जातीय अवसर पर दक्षिणी गोरे पुरुषों और स्त्रियों के साथ एक ही प्लेटफार्म पर खडे होकर वक्तृता देने का यह पहला ही अवसर था। वे यह भी जानते थे कि उस अवसर पर अनेक बड़े बड़े दक्षिणी तथा उत्तरी गोरे और उनके बहुत से स्वजातीय लोग भी उपस्थित होंगे।

उन्होंने अपने भारी उत्तरदायित्व को समझते हुए निश्चय किया कि इस अवसर पर मैं केवल वे ही बातें कहूँगा जिन्हे मैं हृदय से सत्य और ठीक समझूँगा। उन्हे इस बात की कोई सूचना नहीं मिली थी कि वे कौन सी बातें कहें और कौन सी छोड़ दें। वाशिंगटन के लिये यह बात कुछ कम गौरव की नहीं थी। यद्यपि प्रदर्शिनी के डाइरेक्टर यह बात भली भाँति जानते थे कि यदि वाशिंगटन चाहेंगे तो वे अपने एक ही वाक्य से प्रदर्शिनी की बहुत सी मर्यादा नष्ट कर देंगे, तथापि उन लोगों ने उनका विश्वास किया। यदि वाशिंगटन चाहते तो ऐसी अनुचित वक्तृता दे सकते थे कि जिसके कारण भविष्य मे कई वरसों तक कोई हवशी ऐसे अवसरो पर वक्तृता देने के योग्य ही न समझा जाता, पर नहीं, उन्होंने उत्तरी और दक्षिणी गोरों के संबंध में बहुत ही ठीक और उपयुक्त बातें कहना निश्चित किया।

उत्तर और दक्षिण के समाचारपत्रों मे वाशिंगटन की इस होनेवाली वक्तृता के संबंध मे खूब टीका-टिप्पणियाँ होने लगीं। बहुत से दक्षिणी गोरे पत्र वाशिंगटन की वक्तृता के विरोधी थे। कई हवशियों ने भी उन्हे कहने के लिये अनेक बातें सुझाई थीं। उस समय विद्यालय का वर्षारंभ होने के कारण उन्हें कार्य भी बहुत अधिक था, तो भी समय निकालकर उन्होंने जल्दी जल्दी अपना भाषण तैयार किया। यद्यपि उन्होंने बहुत अच्छा भाषण तैयार कर लिया था तो भी मन में

उन्हें एक प्रकार की धुकधुकी लगी हुई था। उन्होंने अपना भाषण अपनी स्त्री को सुनाया, उन्होंने उसे बहुत सराहा। प्रदर्शिनी खुलने से दो दिन पहले, विद्यालय के अनेक अध्यापकों के इच्छा प्रदर्शित करने पर उन्होंने अपना भाषण उन्हे भी पढ़ सुनाया। सब लोगों ने सुनकर उनके विचारों की बहुत प्रशंसा की जिससे वाशिंगटन के मन की धुकधुकी भी कुछ कम हुई।

१८ सितंबर को प्रदर्शिनी खुलने को थी, इसलिये १७ सितंबर को प्रातःकाल मि० वाशिंगटन अपनी स्त्री और तीनों संतानों सहित एटलांटा के लिये रवाना हुए। मार्ग में अनेक गोरे और हवशी उनकी ओर उँगलियाँ उठाते थे। एटलांटा में एक कमेटी ने उनका स्वागत किया। उस समय सारा नगर अनेक विदेशी राज्यो के प्रतिनिधियो और बड़ी बड़ी नागरिक और सामरिक संस्थाओं से ठसाठस भरा हुआ था। समाचार-पत्रो मे बड़ी धूमधाम से दूसरे दिन के कार्य-क्रम प्रकाशित हो रहे थे। इन सब बातो से वाशिंगटन के हृदय का बोझ और भी बढ़ गया। उस रात को उन्हे पूरी निद्रा भी न आई। दूसरे दिन प्रातःकाल उन्होंने फिर ध्यानपूर्वक अपनी वक्तृता पढ़ी और घुटनो के बल बैठकर अपने सदा के नियमानुसार ईश्वर से उद्योग मे सफलता के लिये प्रार्थना की।

वाशिंगटन का सदा यही उद्देश्य रहता था कि प्रत्येक मनुष्य के हृदय पर हमारी बातों का पूरा पूरा प्रभाव पड़े।

वक्तृता देते समय वे कभी इस बात की परवा नहीं करते थे कि समाचारपत्र या और लोग हमारे विषय मे क्या कहेगे। उस समय उनकी सारी सहानुभूति और शक्ति श्रोताओं की ओर जा लगती थी।

प्रातःकाल बहुत से लोग जलूस निकालकर उन्हे प्रदर्शिनी-स्थल तक ले जाने के लिये उनके निवासस्थान पर आए। इस जलूस में मुख्य हबशी नागरिक गाड़ियों पर सवार होकर सम्मिलित हुए थे। तीन घंटे में जलूस प्रदर्शिनी तक पहुँचा। रास्ते भर उस पर बहुत कड़ी धूप पड़ी थी। अधिक गरमी के कारण वाशिंगटन बहुत शिथिल हो गए और उन्हें अपनी सफलता मे संदेह होने लगा। सारा सभास्थल मनुष्यो से ठसाठस भरा हुआ था, इसके अतिरिक्त स्थानाभाव के कारण हजारों श्रोता बाहर खड़े हुए थे। उनके पहुँचने पर गोरों ने कम और हबशियों ने बहुत अधिक तालियाँ बजाईं। गोरे श्रोताओं में कुछ तो केवल विनोद के कारण और कुछ उनसे सहानुभूति रखने के कारण आए थे, पर उन्हे पहले से ही मालूम हो गया था कि उनमे अधिकांश ऐसे ही लोग थे जो मुझे केवल मूर्ख बनाने और मेरी हँसी उड़ाने के लिये वहाँ आए हैं। टस्केजी-विद्यालय के एक ट्रस्टी और वाशिंगटन के एक मित्र एटलांटा मे रहकर भी इसलिये उस अवसर पर जान बूझकर उपस्थित नहीं हुए थे, कि उन्हें इस बात का बड़ा भारी संदेह था कि न तो वाशिंगटन का वहाँ यथेष्ट सम्मान होगा और न उन्हे पूरी सफलता होगी।

१४—एटलांटा प्रदर्शिनी में व्याख्यान

गवर्नर बुलक ने आरंभ में एक छोटी सी वक्तृता देकर प्रदर्शिनी खोली। तदुपरांत दो एक प्रार्थनाएँ और मंगल-पाठ आदि होने पर प्रदर्शिनी के सभापति तथा महिलामंडल के सभापति की वक्तृताएँ हुईं। अंत में गवर्नर बुलक ने लोगों को मि० वाशिंगटन का परिचय दिया। अब वाशिंगटन वक्तृता देने के लिये खड़े हुए। सबने, विशेषतः हबशियों ने, खूब करतलध्वनि की। हजारों मनुष्यों की दृष्टि केवल वाशिं-गटन पर ही गड़ी हुई थी। उन्होंने अपना व्याख्यान इस प्रकार आरंभ किया—

"मान्यवर सभापति, डाइरेक्टर्स बोर्ड के सभ्य, तथा नाग-रिक महाशयो!

दक्षिण के निवासियों में एक तृतीयांश हबशी हैं। बिना इन लोगों का ध्यान रखे किसी प्रकार की सांपत्तिक, सामा-जिक या नैतिक उन्नति मे पूरी पूरी सफलता नही हो सकती। मेरी जाति के लोग खूब समझते हैं कि इस विशाल प्रदर्शिनी के संचालकों ने इसकी उन्नति के पग पग पर हबशियों के पराक्रम और महत्त्व का जितना आदर किया है, उतना और किसी ने कभी नही किया। हम लोगों की मुक्ति के उपरांत आज तक जितने कार्य हुए हैं उन सबकी अपेक्षा इस कार्य से दोनों जातियों की मित्रता बहुत अधिक दृढ़ हुई है।

यही नहीं बल्कि यह अवसर प्राप्त करने के कारण हम लोगों में औद्योगिक उन्नति का एक नया युग आरंभ होगा। अज्ञान और अनुभवहीन होकर भी हम लोगों ने मूल की ओर से नहीं वलिक शिखर की ओर से अपना कार्य्य आरंभ किया था। आरंभ मे हम लोग औद्योगिक परिश्रम करने की अपेक्षा कांग्रेस या राजसभा में स्थान पाने का अधिक प्रयत्न करते थे। कोई दूध का कारखाना जारी करने या फलों का बाग लगाने की अपेक्षा राजसभा या अन्य स्थानों मे वक्तृता देने के लिये हम लोग अधिक आकर्षित होते थे।

समुद्र में भूले भटके एक जहाज ने कई दिनों के उपरांत एक दूसरा जहाज देखा। भूले हुए जहाज के आरोही बहुत अधिक प्यास के कारण मर रहे थे। उन्होने इसी आशय का एक चिह्नपट अपने मस्तूल पर लगा रखा था। दूसरे जहाज ने उत्तर में कहा—'जिस स्थान पर तुम हो, वही बाल्टी लटकाओ।' उस जहाज ने पुनः इशारे से पानी माँगा और उसे फिर वही उत्तर मिला। तीसरी और चौथी बार फिर पानी माँगा गया और फिर वही उत्तर मिला। अंत में उस जहाज के कप्तान ने बाल्टी लटकाकर पानी खींचा और उसे अमेजन (अमेरिका की एक नदी) के मुहाने का सुंदर, स्वच्छ और पीने योग्य जल मिल गया। हमारे जो जाति-भाई अपने साथी दक्षिणी गोरों से मित्रता रखना अधिक महत्त्वपूर्ण नहीं समझते और विदेश में जाकर अपनी उन्नति करना चाहते हैं,

उनसे मैं यही कहूँगा कि 'जिस स्थान पर तुम हो, वहीं बाल्टी लटकाओ। अपने आसपास की जातियों के साथ मित्रता स्थापित करो।'

कृषि, शिल्प और व्यापार आदि मे अपनी बाल्टी लटकाओ। दक्षिणवाले और बातों के लिये चाहे भले ही दोषी हों, पर व्यापार में वे लोग हबशियों को उपयुक्त अवसर दिया करते हैं। यह प्रदर्शिनी इस बात का बहुत अच्छा प्रमाण है। दासत्व से छूटकर स्वतंत्र होने मे हम लोगों को इस बात का ध्यान नहीं रहा कि हममे से अधिकांश का जीवन केवल शिल्प और कला पर निर्भर है और हम लोग परिश्रम करके ही संपन्न हो सकते हैं। हम लोग यह बात भूल गए हैं कि केवल दिखौआ और तड़क भड़क का जीवन छोड़कर अपना जीवन-क्रम जितना ही वास्तविक और उपयुक्त रखेंगे उतना ही अधिक हमारा कल्याण होगा। जब तक कोई जाति कविता करने और खेत जोतने मे समान प्रतिष्ठा न समझेगी तब तक वह संपन्न नहीं हो सकती। हम लोगों को जीवन के शिखर से नहीं बल्कि मूल से अपना कार्य्य आरंभ करना चाहिए। अपने कष्टों के सामने हमे सुअवसरों को न दबने देना चाहिए।

जो गोरे दक्षिण की उन्नति के लिये विदेशियो को अपने में मिलाना चाहते हैं, उनसे भी मैं यही कहना चाहता हूँ कि 'जिस स्थान पर तुम हो, वहीं बाल्टी लटकाओ।' उन्हीं अस्सी लाख हबशियों मे अपनी बाल्टी लटकाओ जिनके स्वभाव

से तुम परिचित हो और जिनकी सत्यता तथा स्वामि-भक्ति की परीक्षा तुम ऐसे अवसर पर कर चुके हो जब कि वे अपने कपट-व्यवहार से तुम्हारा सर्वस्व नष्ट कर सकते थे। अपनी बाल्टी उन्हीं लोगों में लटकाओ जिन्होंने विना हड़ताल या उपद्रव किए खेत जोते हैं, जंगल साफ किए हैं, रेल की सड़कें बनाई हैं, नगर बसाए हैं, पृथ्वी के गर्भ से धनागार निकाले हैं और दक्षिण को इतना उन्नत बनने मे सहायता दी है। इसी प्रकार उन्हे सहायता और उत्तेजना दो और उन्हे मानसिक, शारीरिक और आत्मिक शिक्षा दो। वे लोग तुम्हारी बची हुई भूमि लेगे, तुम्हारे रद्दी खेतो को उपजाऊ बनावेगे और तुम्हारे कारखाने चलावेगे। इस प्रकार अतीत काल की भाँति भविष्य में भी आपको पूरा समाधान रहेगा कि आपके पार्श्ववर्त्ती संसार मे सबसे अधिक धीर, विश्वसनीय और राजनियमो का पालन करनेवाले लोग हैं। भूतकाल मे हम लोगों ने जिस प्रकार आपके बालकों का पालन करके, आपके रुग्ण माता-पिता की सेवा-शुश्रूषा करके और प्राय. उनकी मृत्यु पर आँसू बहाकर आप पर अपनी भक्ति प्रकट की है, उसी प्रकार भविष्य में भी हम लोग विदेशियों से कहीं अधिक भक्ति के साथ आपको सहारा देंगे, सदा आप पर अपना जीवन न्योछावर करने के लिये तैयार रहेगे और आवश्यकता पड़ने पर दोनों जातियों के हित के लिये अपने औद्योगिक, व्यापारिक और धार्मिक जीवन को आपमे

मिलाकर एक कर देंगे। सामाजिक कार्य्यों मे हाथ की उँगलियों की भाँति भिन्न भिन्न होने पर भी पारस्परिक उन्नति के कामों में हम लोग संपूर्ण हाथ की भाँति एक हो जायँगे।

जब तक हम सबकी वृद्धि और उन्नति न हो, तब तक हममे से कोई निर्भय या रक्षित नही रह सकता। यदि कही हबशियों की उन्नति रोकने का कोई उद्योग होता हो तो उस उद्योग को उन लोगो को उपयुक्त और बुद्धिमान् नागरिक बनाने की उत्तेजना मे परिणत कीजिए। इस प्रकार के उद्योगों से आपको हजार गुना अधिक लाभ होगा। इससे दोनों पक्षों का कल्याण होगा। मानवी अथवा दैवी नियमों से कभी छुटकारा नहीं हो सकता। कहा है—'सृष्टि के कभी न बदलनेवाले नियमों के अनुसार अन्याय करनेवाले भी बँधे हुए हैं और उसे सहनेवाले भी। जिस प्रकार पाप और (उसका फल) दुःख दोनो साथ हैं उसी प्रकार साथ साथ हम (अन्याय करने और सहनेवाले) लोग भी अपने भाग्य (मृत्यु) की ओर बढ़ते जा रहे हैं।'*

एक करोड़ साठ लाख हाथ या तो तुम्हें भार उठाने में सहायता देंगे और या तुम्हारी इच्छा के विरुद्ध तुम्हें बोझ सहित और नीचे ढकेलेंगे। हम लोग, दक्षिण की जनसंख्या

---

*The laws of changeless justice bind
Oppressor with oppressed,
And close as sin an suffering joined
We march to fate abreast

के एक तृतीयांश, या तो अपराधी और अज्ञान बने रहेंगे या उन्नत और बुद्धिमान् बन जायँगे। या तो हम लोग आपके व्यापार और वैभव मे वृद्धि करेंगे या मृतक बनकर आपकी उन्नति में बाधक होगे।

महाशयो! उन्नति संबंधी जितने कार्य्य हम लोगों ने इस प्रदर्शिनी मे कर दिखलाए हैं, उनसे अधिक की आशा आप लोग हमसे न रखें। तीस वर्ष पूर्व हमारी दशा बहुत ही हीन और शोचनीय थी और हमारे पास कुछ भी न था। तब से अब तक खेती के औजार, बग्घियाँ, भाप के इंजिन, समाचार-पत्र, पुस्तकें, मूर्त्तियाँ और चित्र आदि बनाने के कामों में हम लोगों ने जितनी उन्नति की है, उसमें हम लोगों को कम कठिनाइयाँ नहीं सहनी पड़ी हैं। यद्यपि अपनी स्वतंत्र चेष्टा से बनाई हुई चीजें प्रदर्शित करने का हमें गर्व है, तथापि हम लोग यह बात नहीं भूले हैं कि यदि दक्षिण के राज्य और उत्तर के अनेक परोपकारी महात्मा धन द्वारा उदारतापूर्वक हमारी सहायता न करते तो हमारे ये कार्य आपके अनुमान और आशा से बहुत कम होते।

हमारी जाति में जो लोग अधिक बुद्धिमान् हैं वे सामाजिक समानता के विषय मे आंदोलन करना बड़ी भारी मूर्खता समझते हैं और बनावटी ढंग की सहायता की अपेक्षा निरंतर दृढ़ प्रयत्न करके अपने अधिकार प्राप्त करना अधिक उत्तम समझते हैं। जो जाति संसार में बिकने के लिये कोई चीज बना

सकती है वह कभी अवहेला की दृष्टि से नही देखी जा सकती। यह बात बहुत ठीक है कि हम लोगो को सब प्रकार का राज-नैतिक अधिकार मिलना बहुत आवश्यक और ठीक है, पर यह बात और भी अधिक आवश्यक है कि हम लोग उन अधिकारों को भोग करने के योग्य बनें। किसी नाटक-घर मे जाकर एक डालर खर्च करने की अपेक्षा किसी कारखाने में काम करके एक डालर कमाना कहीं अधिक उत्तम है।

उपसंहार में मैं फिर यही दोहराना चाहता हूँ कि इस प्रदर्शिनी ने हम लोगों को जितनी अधिक आशा और उत्तेजना दिलाई है और गोरो से हमारा जितना संबंध बढ़ाया है, उतना किसी और दूसरे अवसर या कार्य ने नही बढ़ाया। तीस वर्ष पूर्व हम दोनों जातियों ने खाली हाथ प्रयत्न आरंभ किया था। इन तीस वर्षों मे दोनों जातियों ने जो उन्नति की है वह इस वेदी के समक्ष उपस्थित है। इस वेदी के सामने नम्रतापूर्वक झुक-कर मैं यह कहना चाहता हूँ कि दक्षिण के लोगों के सामने जो बड़ा और गूढ़ प्रश्न उपस्थित है, उसकी मीमांसा मे आप लोगों को हमारी जाति से सदा सहायता और सहानुभूति मिलती रहेगी। पर इस बात का आप सदा ध्यान रखें कि खेत, जंगल, खान, कारखाने आदि मे तैयार करके प्रदर्शिनी में रखा हुआ माल तो अवश्य ही आपको लाभ पहुँचावेगा, पर नियमानुसार सबके साथ न्याय करने के उद्देश्य से पर-स्पर का जातिद्वेष और भेदभाव नष्ट करने का जो फल या

लाभ होगा वह इन भौतिक पदार्थों से होनेवाले लाभों की अपेक्षा कहीं अधिक होगा। और इन सब बातों से हमारा प्रिय दक्षिण एक नया स्वर्ग और नया विश्व बन जायगा।"

वाशिंगटन की वक्तृता समाप्त होते ही गवर्नर बुलक तथा अन्य कई लोगों ने बढ़कर प्लेटफार्म पर उन्हे हाथो हाथ लिया। उन्हें इतनी अधिक हार्दिक बधाइयाँ मिलने लगीं कि उस स्थान से निकलना उन्हे कठिन हो गया। दूसरे दिन प्रातःकाल जब वे बाजार गए तब बहुत से लोगों ने उन्हें चारों ओर से घेर लिया और उनसे हाथ मिलाना चाहा। जिस गली कूचे मे वे जाते वहीं लोग उनसे मिलने और उनका आदर सम्मान करने लगते, यहाँ तक कि अंत मे विवश होकर उन्हें अपने डेरे पर लौट आना पड़ा। एक दिन और वहाँ रहकर वे टस्केजी लौट आए। एटलांटा से टस्केजी तक प्रायः सभी स्टेशनों पर उन्हे बहुत से लोग देखने और उनसे हाथ मिलाने के लिये आए थे।

प्राय सभी समाचारपत्रो में उनकी वह वक्तृता प्रकाशित हो गई और महीनों तक उस पर अनुकूल संपादकीय सम्मतियाँ निकलती रहीं। एक प्रसिद्ध पत्र के संपादक ने अपने एक सहयोगी को तार भेजा था—"दक्षिण में आज तक जितने व्याख्यान हुए हैं, उन सबमें प्रोफेसर वाशिंगटन का व्याख्यान परम उत्कृष्ट और स्मरणीय है। उनका स्वागत भी वैसा ही अपूर्व हुआ था। उनके व्याख्यान से बहुत सी नई बातों का ज्ञान हुआ।" एक दूसरे पत्र के संपादक ने लिखा था—

"वाशिंगटन की वक्तृता ने प्रदर्शिनी की और सब बातों को दबा दिया। उससे अनुपम उत्तेजना फैली है।"

चारो ओर से अनेक व्याख्यान करानेवाले और पत्र-संपादक उनसे वक्तृता देने और लेख लिखने के लिये आग्रह करने लगे। व्याख्यान करानेवाली एक संस्था तो उन्हे प्रति व्याख्यान के लिये दो सौ डालर और व्यय, अथवा कुछ निश्चित काल तक व्याख्यान देने के लिये पचास हजार डालर देने के लिये तैयार हो गई। पर उन सबको उन्होंने यही उत्तर दिया कि मैंने जीवन भर टस्केजी-विद्यालय की सेवा करने का संकल्प कर लिया है और मैं सदा केवल अपनी जाति और विद्यालय के लिये ही व्याख्यान दूँगा। व्यापार या आर्थिक लाभ की दृष्टि से मैं कभी यह कार्य नहीं कर सकता।

संयुक्त राज्य (United States) के सभापति आनरेबुल क्लीवलैंड के पास भी उन्होंने अपनी वक्तृता की एक प्रतिलिपि भेजी थी जिसे देखकर उन्होंने एक पत्र मे उनकी बहुत प्रशंसा की थी। जिस समय वे प्रदर्शिनी देखने के लिये आए थे, उस समय वाशिंगटन के प्रार्थना करने पर वे हबशियों के भवन मे गए थे और वहाँ एक घंटे तक सब चीजें देखते और सबसे हाथ मिलाते रहे। उनकी सरलता और महानुभावता का वाशिंगटन पर बहुत प्रभाव पड़ा था। तब से अंत तक वे उनसे कई बार मिले और सदा उनकी बहुत प्रशंसा करते थे। हबशियो के भवन मे वे दरिद्र और बुड्ढे हबशियों से मिलकर

श्रौर हाथ मिलाकर उतना ही प्रसन्न होते थे जितना करोड़-पतियों से मिलकर। उस समय हबशियों ने अपनी पुस्तकों या कागज के टुकड़ों पर उनसे हस्ताक्षर करा लिए थे। उन्होंने भी ये हस्ताक्षर इतनी सावधानता श्रौर धैर्य्य से किए थे, मानों वे किसी बहुत ही आवश्यकीय पत्र पर हस्ताक्षर कर रहे हों। उन्होने टस्केजी-विद्यालय को स्वयं भी आर्थिक सहायता दी है श्रौर अपने मित्रो से भी दिलवाई है।

ऐसे ही ऐसे महानुभावों से मिलकर वाशिंगटन ने सिद्धांत किया था कि केवल तुच्छ श्रौर छोटे मनुष्य ही स्वार्थी होते हैं, कभी अच्छी पुस्तकें नहीं पढ़ते, कभी परिश्रम नहीं करते श्रौर कभी दूसरों से नहीं मिलते। जिन लोगों की दृष्टि जाति-द्वेष के कारण संकुचित हो जाती है, उन्हे संसार के सर्वोत्कृष्ट पदार्थों या मनुष्यों का परिचय कभी नहीं हो सकता। जो लोग सबसे अधिक परोपकार करते हैं वे ही सबसे अधिक प्रसन्न रहते हैं श्रौर जो लोग सबसे कम परोपकार करते हैं वे सबसे अधिक दुखी रहते हैं। वे सदा सब अवसरों पर अपने सब विद्यार्थियों को यही उपदेश देते थे कि मनुष्य का जीवन वास्तविक परोपकार के लिये ही है श्रौर आवश्यकता पड़ने पर उसके लिये प्राण तक न्योछावर कर देने में किसी को संकोच न करना चाहिए।

एक बार एक समाचारपत्र के एक पादरी संपादक ने अपने पत्र मे प्रकाशित करने के लिये वाशिंगटन से हबशी धर्मो-

पदेशकों के संबंध में उनकी सम्मति माँगी थी। तदनुसार उन्होंने अपनी यथार्थ सम्मति लिख भेजी थी। उसे पढ़कर अनेक हवशी धर्मोपदेशक बहुत बिगड़े थे। एक वर्ष बाद तक सभी समितियाँ, सभाएँ और संस्थाएँ उन्हें उलटी-सीधी सुनाती रहीं और उनसे अपना कथन लौटा लेने या उसमें कुछ सुधार करने के लिये कहती रहीं। अनेक संस्थाओं ने तो अपनी ओर से यहाँ तक निश्चय कर दिया था कि लोग अपने बालकों को टस्केजी-विद्यालय में भी न भेजें। एक समिति ने लोगों को यही बात समझाने के लिये एक विशेष मनुष्य तक नियुक्त कर दिया था। उस मनुष्य ने और लोगों को तो अपने बालकों को टस्केजी-विद्यालय में भेजने के लिये अवश्य मना किया था, पर स्वयं अपने पुत्र को, जो उसी विद्यालय में पढ़ता था, वहाँ से न हटाया था!

इतना सब कुछ होने पर भी वाशिंगटन ने कभी अपनी सम्मति का खंडन नहीं किया। उनका कथन ठीक था और वे समझते थे कि समय पाकर और शांतिपूर्वक विचार करके लोग मेरे मत का समर्थन करने लगेंगे। शीघ्र ही जब बड़े बड़े पादरियों ने उपदेशकों की दशा का अनुसंधान आरंभ किया तो उन्हें वाशिंगटन के कथन की सत्यता प्रतीत होने लगी। एक बड़े पादरी ने तो यहाँ तक कहा था कि वाशिंगटन ने उपदेशकों की दुरवस्था का चित्र खींचने में उनके अनेक दोष छोड़ दिए हैं। अब लोग उपदेशकों की दशा

के सुधार की आवश्यकता समझने लग गए थे। वास्तव मे वाशिंगटन की सम्मति ने ही लोगों का ध्यान उस ओर आकर्षित किया था और उन दोषो को दूर करके उपदेशक के कार्य्य के लिये योग्यतर मनुष्यों को उस क्षेत्र में प्रविष्ट कराया था। जिन लोगों ने आरंभ में इस कार्य्य के लिये उनकी निंदा की थी वे ही पीछे से हृदय से उन्हे धन्यवाद देने लगे। उपदेशकों की दशा भी अब उत्तम और संतोषजनक हो गई है।

सितंबर सन् १८९५ के अंत मे बाल्टीमोर की जांस होपूकिंस यूनिवर्सिटी के सभापति डा० गिलमैन ने, जो एटलांटा प्रदर्शिनी के पुरस्कार देनेवाले जजों की समिति के सभापति भी थे, वाशिंगटन को एक पत्र भेजकर उनसे उक्त प्रदर्शिनी के शिक्षा-विभाग के पुरस्कार देने के लिये जज होने की प्रार्थना की थी। उत्तर में उन्होने भी जज होना स्वीकार कर लिया और एक मास तक एटलांटा मे रहकर वहाँ का कार्य्य किया। कुल जजों की संख्या साठ थी, जिनमे आधे गोरे और आधे हवशी थे। वाशिंगटन ही उन सबकी समिति के मंत्री बनाए गए थे। हवशियों के अतिरिक्त गोरो के विद्यालयों की प्रदर्शित की हुई चीजों का भी उन्होने बहुत ही निष्पक्ष भाव से निरीक्षण किया था और सब लोगों ने अपनी चीजें दिखलाते समय बहुत ही उत्तम और आदरपूर्ण व्यवहार किया था।

एटलांटा प्रदर्शिनी के कार्य्यों से वाशिंगटन ने जो अनुभव प्राप्त किया था उससे उनका अनुमान था कि वह समय अवश्य

आवेगा जब कि दक्षिणी हबशियों को उनकी योग्यता और अवस्था के अनुसार सब प्रकार के राजनैतिक अधिकार मिल जायँगे। ये अधिकार स्वयं दक्षिणी गोरे ही उन्हे देंगे और वही उन अधिकारो की रक्षा भी करेगे। दक्षिणी गोरो की यह पुरानी धारणा है कि विदेशी लोग हमारी इच्छा के विरुद्ध बलपूर्वक हमसे कोई कार्य्य करा रहे हैं। यह धारणा मिटते ही हबशियों को अधिकार मिलने लगेंगे। यह कार्य्य किसी अंश मे आरंभ भी हो गया है।

उनकी सम्मति मे यदि प्रदर्शिनी के कुछ मास पूर्व उत्तर अमेरिका या अन्य स्थानों से लोग इस बात का आंदोलन करते कि उसके प्रारंभिक कार्य्य-क्रम तथा पुरस्कार देनेवाले जजों में एक एक हबशी भी रखा जाय, तो इससे उनकी जाति का मान नही बढ़ सकता था। हाँ, प्रदर्शिनी के अधिकारियों ने हबशियों की योग्यता देखकर स्वयं ही उनसे वह कार्य्य लिया और उनका यथेष्ट आदर किया। बात यह है कि मानुषी प्रकृति में यह एक स्वाभाविक गुण होता है कि वह अंत मे जाति-द्वेष को भूलकर दूसरो की योग्यता स्वीकार करती है और उन्हे यथेष्ट रूप से पुरस्कृत करती है और इस गुण को नष्ट करना मनुष्य की शक्ति के बाहर है।

यद्यपि राजकीय अधिकार प्राप्त करना और सब प्रकार की उन्नतियों से कहीं अधिक उत्तम है, तथापि जब तक मनुष्य में पूरी योग्यता न आ जाय तब तक उसे उनके लिये बहुत

अधिक उत्कंठित न होना चाहिए। यह बात ठीक है कि जब तक मनुष्य प्रत्येक राज्यकार्य्य मे सम्मति आदि न दे तब तक वह स्वराज्य का पूरा उपयोग नहीं कर सकता, पर जब तक उसमें स्वयं सम्मति आदि देने की पूरी योग्यता न आ जाय तब तक उसे अपने योग्य और बुद्धिमान् सहवर्त्तियों से सहायता लेनी चाहिए। वाशिंगटन अनेक ऐसे हबशियों को जानते थे जिन्होने गोरों की सम्मति और सहायता से हज़ारों डालर की संपत्ति प्राप्त कर ली थी, पर तो भी वे हबशी सम्मति (Vote) देते समय कभी किसी गोरे से सलाह नहीं लेते थे। यह बात उनकी समझ मे बहुत ही अनुचित थी। उनका यह भी विचार था कि कोई राज्य ऐसा नियम नहीं बना सकता जिसके अनुसार कोई मूर्ख और दरिद्र गोरा तो सम्मति दे सके पर उसी की योग्यता का हबशी सम्मति देने के अधिकार से वंचित रहे; क्योंकि ऐसा नियम अन्यायपूर्ण होगा और उससे बहुत हानि होगी। ऐसे नियम का फल यह होगा कि हबशी तो शिक्षित और संपन्न बनने का उद्योग करेंगे और गोरों को दरिद्र और मूर्ख बने रहने मे उत्तेजना मिलेगी। इस समय दक्षिण अमेरिका में सम्मति देने के समय गोरे लोग वहाँ के हबशियों के साथ अनेक प्रकार का छल-कपट करके उन्हें सम्मति देने से वंचित रखने का उद्योग करते हैं। पर समय पाकर, जब लोगों का अज्ञान दूर होगा और दोनों जातियों में अधिक मित्रभाव स्थापित होगा तब

यह बात दूर हो जायगी। इस प्रकार धोखा देनेवाले गोरे आगे चलकर अपने ही जाति-भाइयों को धोखा देने और अनेक प्रकार के अपराध करने लग जाते हैं। उनकी सम्मति थी कि वह समय अवश्य आवेगा जब कि सारा दक्षिण अपने प्रत्येक निवासी को राजकीय कार्य्यों मे सम्मति देने के लिये उत्तेजित करेगा, और इसका फल भी बहुत ही उत्तम और संतोषजनक होगा। प्रायः सभी देशो मे या तो शिक्षितों से सम्मति ली जाती है या संपन्न लोगों से, अथवा ऐसे लोगों से जो शिक्षित और संपन्न दोनों हों। इस बात में किसी को कोई आपत्ति नही हो सकती। सम्मति देने की योग्यता की कसौटी चाहे जो हो, पर उसका उपयोग गोरो और कालों के साथ समान रूप मे और समान न्याय से होना चाहिए।

१५—प्रसिद्ध वक्तृताएँ

प्रदर्शिनी-स्थान पर वाशिंगटन की वक्तृता का श्रोताओं पर जैसा उत्कृष्ट प्रभाव पड़ा था, उसका ठीक ठीक अनुमान पाठक उस लेख से कर सकते हैं जो वहाँ के प्रसिद्ध सामरिक संवाद-दाता मि० जेम्स क्रीलमैन ने न्यूयार्क के "वर्ल्ड" नामक पत्र में प्रकाशित कराया था। उस लेख की मुख्य मुख्य बातें इस प्रकार थीं—

"प्रदर्शिनी खुलने के अवसर पर एक हबशी मूसा ने गोरे श्रोताओं के सामने जो वक्तृता दी थी वह दक्षिण के इतिहास मे बहुत ही मार्के की है।.........जिस समय अपूर्व तेजयुक्त प्रो० वाशिंगटन वक्तृता देने के लिये खड़े हुए, उस समय हेनरी ग्रेडी के उत्तराधिकारी क्लार्क होवले ने मुझसे कहा—'इस मनुष्य की वक्तृता अमेरिका मे नैतिक क्रांति उत्पन्न करनेवाली है।' इतने महत्त्वपूर्ण अवसर पर गोरे पुरुषों और स्त्रियों के समक्ष एक हबशी को वक्तृता देने का यह पहला ही अवसर मिला है। यह भाषण बगोले की भाँति था और सुननेवालों पर बिजली का असर करता था। ज्योंही श्रीमती टामसन बैठी त्योंही सब लोगो की दृष्टि वाशिंगटन की ओर गई। अब से वाशिंगटन को अमेरिका के हबशियों मे सर्वाग्रगण्य समझना चाहिए। जब तक बैंड बजता रहा तब तक सबकी दृष्टि उसी हबशी वक्ता पर गड़ी रही। (इस अवसर पर लेखक ने उनकी आकृति आदि का बहुत उत्तम वर्णन किया है।) वक्तृता में उनकी आवाज बहुत ही स्पष्ट और ऊँची थी। दस मिनट तक उनकी वक्तृता सुनते ही सब लोग जोश मे भर गए और रूमाल और टोपियाँ हिलाने लगे। जार्जिया की परम सुंदर स्त्रियाँ खड़ी होकर प्रसन्नता से तालियाँ बजाने लगीं, ऐसा मालूम होता था कि मानो वक्ता ने सब पर जादू कर दिया है।

"जब वाशिंगटन ने अपना हाथ ऊपर उठाकर और उँगलियाँ फैलाकर अपनी जाति की ओर से दक्षिणी गोरों से कहा—'सामाजिक कार्य्य मे हाथ की उँगलियों की भाँति भिन्न भिन्न होने पर भी पारस्परिक उन्नति के कामो में हम लोग हाथ की भाँति एक हो जायँगे।' और उनकी आवाज की लहर जाकर चारों ओर दीवारों से टकराई तब सब लोग उठकर खड़े हो गए और मारे आनंद के तालियाँ बजाने लगे।

"मैंने बड़े बड़े वक्ताओ के भाषण सुने हैं, पर मेरी समझ मे इस हबशी ने उन लोगों के सामने खड़े होकर, जो किसी समय उसकी जाति को परतत्र और पराधीन रखने के लिये लड़े थे, जिस उत्तमता से अपने विचार और पक्ष का समर्थन किया था उतनी उत्तमता से शायद स्वयं ग्लैडस्टन भी न कर सकते। एक दरिद्र हबशी की आँखों से, जो बड़े ध्यान से उनकी वक्तृता सुन रहा था, आँसू बहने लगे। और भी अनेक हबशियों की वही दशा हुई, पर कदाचित् वे लोग स्वयं अपनी इस दशा का कोई कारण नहीं जानते थे। वक्तृता की समाप्ति पर गवर्नर बुलक ने दौड़कर वक्ता को दोनों हाथों से पकड़ लिया। लोगों ने फिर तालियाँ बजाकर अपनी प्रसन्नता प्रकट की और दोनों महाशय कई मिनटों तक हाथ मे हाथ दिए एक दूसरे को देखते हुए खड़े रह गए।"

इसमे संदेह नही कि एटलांटा प्रदर्शिनी की वक्तृता के कारण समस्त देश मे वाशिंगटन की योग्यता का झंडा फह-

राने लगा। चारो ओर से वक्तृता देने के लिये उन्हें अनेक निमंत्रण मिलते थे। वाशिंगटन भी यथावकाश उपयुक्त अवसरों पर जाकर वक्तृताएँ दिया करते थे। वे सदा ऐसे ही अवसरों पर वक्तृता दिया करते थे, जहाँ उन्हें अपनी वक्तृता से अपनी जाति का कुछ उपकार होने की आशा होती थी। उनका कथन था कि मैं स्वयं यह नहीं समझता कि लोग क्यों मेरा भाषण सुनने के लिये इतने अधिक उत्सुक होते हैं। जब वे वक्तृता-स्थल के बाहर खड़े होकर लोगों को उत्साह-पूर्वक अपनी वक्तृता सुनने के लिये आते हुए देखते थे तो बहुत ही लज्जित होते थे। एक बार मैडिसन की किसी साहित्यिक सभा में उनकी वक्तृता होने को थी। निश्चित समय से एक घंटा पूर्व ही बड़ा भारी तूफान आया और कई घंटों तक रहा। उन्होंने समझा था कि श्रोता नहीं आवेंगे और मुझे वक्तृता न देनी पड़ेगी। पर जब वे अंदर गए तो उन्हें सारा स्थान श्रोताओं से भरा हुआ मिला।

वक्तृता देने से पहले वाशिंगटन प्रायः घबरा जाया करते थे। कभी कभी उनकी घबराहट इतनी अधिक बढ़ जाती थी कि उन्हें भविष्य में कभी वक्तृता न देने का दृढ़ निश्चय कर लेना पड़ता था। इसके अतिरिक्त वक्तृता समाप्त करने पर उन्हें जान पड़ता था कि मैंने अपनी वक्तृता का कोई बहुत ही उत्तम और आवश्यक अंग छोड़ दिया है और इसके लिये उन्हें बहुत अधिक दुःख होता था।

वक्तृता देने से पहले और उसे आरंभ करने के समय तो उन्हें घबराहट अवश्य होती थी, पर दस मिनट तक कुछ कह चुकने के बाद उन्हें ऐसा जान पड़ने लगता था कि मानो मैंने अपने श्रोताओं पर पूरा अधिकार जमा लिया है और उनकी सहानुभूति प्राप्त कर ली है। वास्तव मे वक्ता को जब यह मालूम हो जाता है कि श्रोताओं पर मेरा पूरा अधिकार हो गया है तब उसे बहुत अधिक प्रसन्नता होती है। उस समय वक्ता और श्रोता परस्पर सहानुभूति और एकता के सूत्र में बँध जाते हैं। यदि हजार श्रोताओं में से एक भी ऐसा होता जिसे उनके साथ सहानुभूति न होती अथवा जो उनके विचारो से सहमत न होता तो वे उसे तुरंत पहचान लेते थे और उसकी ओर प्रवृत्त होकर कोई मजेदार चुटकुला छोड़ते थे। पर वह चुटकुला भी तत्त्व की बात से खाली नहीं होता था; क्योंकि जिस बात मे कोई तत्त्व नहीं होता वह बिलकुल व्यर्थ और प्रभाव-रहित होती है। उनका विश्वास था कि जब तक कोई निश्चित और आवश्यक उद्देश्य न हो तब तक नाम मात्र के लिये बोलते रहना बड़ा भारी अन्याय है। जब मनुष्य वास्तव मे परोपकार की दृष्टि से कुछ कहना चाहता है तब उसे वक्तृत्व के कृत्रिम नियमों के पालन या सहायता की कोई आवश्यकता नहीं होती, विराम और आवाज का उतार चढ़ाव आदि आवश्यक होने पर भी वे सब वक्तृता के प्राण नहीं हो सकते। वाशिंगटन जिस समय वक्तृता देने

लगते थे, उस समय वे भाषा-संबंधी नियमों और अलंकारों का कुछ भी ध्यान नहीं रखते थे और अपने श्रोताओ को भी उनका विस्मरण करा देना चाहते थे।

यदि उनकी वक्तृता के समय उनके श्रोताओं में से कोई उठकर चला जाता तो वे बहुत विचलित हो जाते थे। इसी लिये वे ऐसी रोचक वक्तृता देते थे कि जिसमे किसी की वहाँ से उठने की इच्छा ही न हो। प्राय: श्रोता लोग साधारण उपदेशों की अपेक्षा तत्त्व की बातें सुनना अधिक पसंद करते हैं। यदि लोगों को रोचक रीति पर तत्त्व की बातें बतलाई जायँ तो वे शीघ्र ही उसका ठीक परिणाम भी निकाल लेते हैं। दृढ, बुद्धिमान् और व्यवहार-चतुर व्यापारियों के समक्ष वे वक्तृता देना अधिक पसंद करते थे और ऐसे लोग उन्हे बोस्टन, न्यूयार्क, और शिकागो में अधिकता से मिलते थे। दक्षिणी गोरों और हबशियों के सामने वक्तृता देना भी वे पसंद करते थे। वे बड़े उत्साह और ध्यान से वक्तृता सुनते थे। वे लोग बीच बीच मे जब "तथास्तु" कहते थे तब वक्ता का उत्साह और भी बढ़ जाता था। टस्केजी-विद्यालय के लिये किसी किसी अवसर पर वाशिंगटन को एक दिन में चार चार व्याख्यान तक देने पड़ते थे।

पिछले चार पाँच वर्षों में वाशिंगटन और उनकी स्त्री को स्लेटर फंड से हबशियों की बस्ती मे घूम घूमकर सभाएँ करने के लिये प्रति वर्ष कुछ निश्चित धन मिलता था और प्रति

वर्ष वे इस कार्य्य में भी कई सप्ताह लगाते थे। इस यात्रा मे प्रातःकाल के समय वे उपदेशकों और अध्यापको आदि के सामने वक्तृता देते थे और दोपहर के समय उनकी स्त्री केवल महिलाओं मे व्याख्यान देती थीं। संध्या समय किसी सार्वजनिक सभा मे फिर वाशिंगटन का भाषण होता था। इन सभाओं मे हवशियो के अतिरिक्त बहुत से गोरे भी आते थे। एक बार एक स्थान पर उनके श्रोताओ की संख्या तीन हजार थी, जिसमे आठ सौ श्रोता गोरे थे।

ऐसे अवसरों पर वाशिंगटन और उनकी पत्नी को अपनी जाति की वास्तविक स्थिति जानने का बहुत ही अच्छा अवसर मिलता था। इसके अतिरिक्त सभाओं में उन्हे गोरों और हवशियो के पारस्परिक व्यवहार और संबंध का भी बहुत अच्छा पता लग जाता था। इस प्रकार की कई सभाओ के उपरांत उन्हे अपनी जाति के सुधार की बहुत कुछ आशा होने लगती थी। यह बात भी वे भली भाँति जानते थे कि ऐसे अवसरों पर लोग प्रायः दिखौआ उत्साह प्रकट किया करते हैं, इसलिये वे प्रत्येक बात की तह तक पहुँचकर उसका ठीक पता लगाने का भी पूरा पूरा उद्योग करते थे। बीस बरस तक दक्षिण मे रहकर और वहाँ के निवासियो की वास्तविक स्थिति का पता लगाकर वाशिंगटन ने भली भाँति समझ लिया था कि हमारी जाति अपनी सांपत्तिक, नैतिक और शिक्षा-संबंधी उन्नति धीरे धीरे, पर निस्संदेह, कर रही है।

सन् १८९७ के आरंभ मे बोस्टन्-निवासियों ने राबर्ट गोल्ड शा का स्मारक खोलने के अवसर पर वाशिंगटन को निमंत्रित किया था। यह समारंभ बोस्टन के म्यूज़िक हाल मे हुआ था। उस समय वहाँ बहुत बड़े बड़े विद्वान् और प्रतिष्ठित लोग एकत्र हुए थे। उनमे से बहुत से लोग पुरानी दासत्व-प्रथा के विरोधी थे। मेसेच्युसेट्स नामक राज्य के गवर्नर स्वर्गीय आनरेबुल राजर वालकाट ने सभापति का आसन ग्रहण किया था। उनके साथ मंच पर सैकड़ों अधिकारी और बड़े बड़े लोग बैठे हुए थे। प्रेसिडेट वालकाट ने सब लोगों को वाशिंगटन का परिचय देते हुए कहा था—"गत जून मास में वाशिंगटन महाशय ने हरवर्ड विश्व-विद्यालय की एम० ए० पदवी प्राप्त की है। इस देश के प्राचीनतम विश्व-विद्यालय की यह आनरेरी डिग्री प्राप्त करनेवाले वाशिंगटन पहले ही हबशी हैं, और उनके इस सम्मान का मुख्य कारण उनका बुद्धिमत्तापूर्ण नेतृत्व है।" जिस समय वाशिंगटन उठकर वक्तृता देने के लिये खड़े हुए उस समय श्रोताओ की शांति भंग हो गई और सबमें उत्साह और आवेश भर गया। सारा श्रोतृ-समाज उनका अभिनंदन करने और तालियाँ बजाने के लिये कई बार उठा। उनकी वक्तृता सुनते सुनते सैनिकों और नागरिकों की आँखों मे प्रेमाश्रु भर आए। प्लेटफार्म पर उनके पास ही एक पलटन खड़ी हुई थी, जिसमें अनेक सिपाही ऐसे थे जिन्होंने बहुत घायल हो जाने पर भी हाथ से जातीय झंडा

न छोड़ा था। जिस समय वाशिंगटन ने उन लोगों की ओर मुड़कर कहा—

"५४ वी पलटन के बचे हुए वीरो और कटे हुए पैरों और हाथों से इस स्थान को अपने आगमन से सुशोभित करनेवाले सैनिको! तुम्हारे लिये, तुम्हारा सेनापति मृत नहीं, जीवित है। यदि बोस्टनवाले उसका कोई स्मारक न बनाते और इतिहास मे उसका कोई उल्लेख न होता, तो भी स्वयं तुम और वह देशभक्त जाति जिसके तुम प्रतिनिधि हो, दोनों ही राबर्ट गोल्ड शा के अक्षय्य स्मारक का काम देते।" उस समय सारे श्रोता उत्साह-सागर में लहराने लगे। मेसेच्युसेट्स के गवर्नर, राजर वालकाट ने तुरंत उठकर प्रसन्नतापूर्वक कहा—"बुकर टी॰ वाशिंगटन के लिये तीन बार जय-जयकार हो।"

उस अवसर पर प्लेटफार्म पर वीर सरजेंट कारनी भी उपस्थित थे। यद्यपि उनकी रेजिमेट के अधिकांश सैनिक या तो मारे जा चुके थे और या भाग गए थे, तथापि अंत समय तक वे वीर कारनी हाथ मे अमेरिकन झंडा लिए हुए वागनर के किले पर दृढ़तापूर्वक खड़े रहे। प्लेटफार्म पर भी उनके हाथ मे वही झंडा था। जिस समय वाशिंगटन उनकी ओर मुड़े तो वे मानो किसी दैवी शक्ति से प्रेरित होकर आप ही आप हाथ में झंडा लिए उठ खड़े हुए! यद्यपि अनेक अवसरों पर वाशिंगटन ने अपनी वक्तृता का बहुत ही अच्छा

प्रभाव होते हुए देखा था, तो भी सरजेंट के उठ खड़े होने का उन पर विलक्षण प्रभाव पड़ा था। उस अवसर पर सारे श्रोता कई मिनट के लिये मारे आनंद के अपने आप को भूल गए थे।

स्पेन के साथ अमेरिका का युद्ध समाप्त हो जाने पर, शांति-स्थापन के उपलक्ष मे, अमेरिका के सभी बड़े बड़े नगरों मे उत्सव हुए थे। इसी प्रकार का एक उत्सव शिकागो में भी होनेवाला था। वहाँ की स्वागतकारिणी समिति के सभापति और शिकागो विश्व-विद्यालय के प्रेसिडेंट विलियम हारपर ने वाशिंगटन महाशय को उक्त अवसर पर वक्तृता देने के लिये निमत्रित किया था। तदनुसार वहाँ उनकी दो वक्तृताएँ हुई थीं। उनकी पहली वक्तृता आडिटोरियम मे रविवार १६ अक्तूबर को हुई थी। उस अवसर पर वाशिंगटन के श्रोताओं की संख्या सदा से बहुत अधिक थी। तो भी स्थानाभाव के कारण बहुत से लोग उनकी वक्तृता सुनने से वंचित रह गए थे। उन लोगों के लिये संध्या समय नगर मे दो स्थानों पर उन्हे और भी वक्तृताएँ देनी पड़ी थी।

आडिटोरियम मे श्रोताओं की संख्या सोलह हजार थी और प्राय: इतने ही श्रोता हाल के चारों ओर खड़े हुए भीतर पहुँचने का उद्योग कर रहे थे। उस दिन बिना पुलिस की सहायता के किसी का भीतर पहुँचना असंभव था। प्रेसिडेट मैकिनले, उनके प्राय: सभी प्रधान और परराष्ट्रीय मंत्री

श्रौर बड़े बड़े सैनिक श्रौर नाविक अधिकारी, जिनमे से बहुतों ने उस युद्ध मे वीरतापूर्वक बहुत से कार्य्य किए थे, वहाँ उपस्थित थे। वाशिंगटन के अतिरिक्त वहाँ श्रौर भी चार पाँच बड़े वक्ताओं के भाषण हुए थे। वाशिंगटन ने अपनी वक्तृता मे कहा था कि हवशी लोग नष्ट होने की अपेक्षा दासत्व ही अधिक पसंद करते हैं। जिस समय हवशियों को दासत्व में रखने श्रौर गोरों को स्वतंत्र रखने के लिये घोर संग्राम हो रहा था, उस समय क्रिसपस अटक्स ने जिस वीरतापूर्वक अपने प्राण दिए थे, उसका उन्होंने बहुत अच्छा वर्णन किया था। न्यू-ओर्लियंस मे हवशियों ने जेक्सन के साथ जैसा व्यवहार किया था, उसका भी उन्होने उल्लेख किया था। जिस समय दक्षिणी गोरे दासत्व-प्रथा प्रचलित रखने के लिये युद्ध कर रहे थे, उस समय हवशियों ने जिस स्वामि-निष्ठा से उनके परिवार की रक्षा की थी, उसका भी उन्होंने बहुत ही हृदय-विदारक चित्र खींचा। पोर्ट हडसन तथा वागनर श्रौर पिला के किलों में हवशियों ने जो वीरता दिखलाई थी उसका भी उन्होंने वर्णन किया। क्यूबा के दासो को स्वतंत्र करने के लिये हवशियों ने एल-काने श्रौर सॉटियोगी नामक स्थानों पर जिस वीरता-पूर्वक छापा मारा था, उसकी भी उन्होंने अच्छी प्रशंसा की। इन सब बातों मे वक्ता ने यही दिखलाया कि उनकी जाति के लोगों ने सदा उचित श्रौर युक्त कार्य्य किया। तदुपरांत उन्होने गोरे अमे-

रिकनो से प्रार्थना की—"स्पेनिश-अमेरिकन युद्ध-संबंधी हबशियों के वीरता-पूर्ण कृत्य उत्तरी और दक्षिणी सैनिकों के मुँह से सुनकर और दासत्व-प्रथा बंद करनेवालों और दासों के पुराने स्वामियों से उनकी बाते' जानकर आप लोग स्वयं ही इस बात का निर्णय करे कि जो जाति इस प्रकार देश के लिये अपने प्राण न्योछावर करने के लिये प्रस्तुत रहती है उसे अपने देश के लिये जीवित रहने का सर्वोत्कृष्ट अवसर देना चाहिए या नहीं ?" तदुपरांत स्पेनिश-अमेरिकन युद्ध मे प्रेसिडेंट महाशय ने हबशियों को योग देने का अवसर देकर उनका जो सम्मान किया था, उसके लिये वाशिंगटन ने कृतज्ञता स्वीकार करते हुए उन्हे धन्यवाद दिया। सारा श्रोतृ-समाज आनंद और उत्साह से परिपूर्ण हो गया। वे लोग बार बार खड़े होकर अपनी परम प्रसन्नता प्रकट करने के लिये रूमाल, टोपियाँ और छड़ियाँ ऊपर उठा उठाकर हिलाने लगे। सभापति महाशय उनका धन्यवाद ग्रहण करने के लिये अपने स्थान से उठ खड़े हुए। उस समय पुनः श्रोताओं ने जो उत्साह और आनंद प्रकट किया, उसका वर्णन नही हो सकता।

शिकागो के इस व्याख्यान का एक विशिष्ट अंश दक्षिणी गोरो की समझ में भली भाँति नही आया था। इसलिये वहाँ के समाचारपत्र अनेक प्रकार से उसकी तीव्र टीका-टिप्पणियाँ करने लगे, यहाँ तक कि एक समाचार-पत्र के संपादक ने उनसे उनका वास्तविक अभिप्राय भी पूछ माँगा।

उत्तर में उन्होंने लिख भेजा कि उत्तरी श्रोताओं के सामने मैं वे बातें नहीं कहना चाहता जो मैं दक्षिणी श्रोताओं के सामने न कह सकूँ। उन्होने यह भी लिखा था कि यदि मेरी सत्रह वर्ष की सेवाओं से दक्षिण के निवासी मेरा ठीक ठीक अभिप्राय नही समझ सके तो मेरे मौखिक कथन मात्र से कोई बात भली भाँति स्पष्ट नहीं हो सकती; व्यापारिक और नागरिक जाति-द्वेष नष्ट करने के लिये जो बातें मैंने एटलांटा प्रदर्शिनी मे कही थीं वे ही यहाँ भी कही हैं। अपनी जाति की सामाजिक स्थिति के संबंध में मैं कभी कुछ नहीं कहता। साथ ही मैंने एटलांटावाली अपनी वक्तृता का भी कुछ अंश उद्धृत कर दिया था। इस उत्तर से संपादक महाशय का समाधान हो गया और लोगो ने उस प्रश्न पर टिप्पणी करना भी छोड़ दिया।

संसार मे ऐसे लोगो की कमी नही है जो सदा दूसरों का समय नष्ट करने के लिये तैयार रहते हों। एक दिन बोस्टन के एक होटल मे प्रातःकाल वाशिंगटन को समाचार मिला कि कोई आदमी उनसे मिलने आया है। जब वे जल्दी जल्दी कपड़े पहनकर नीचे उतरे तो एक गरीब आदमी ने आगे बढ़कर बड़े शांत भाव से उनसे कहा—"कल संध्या समय मैंने आपको एक सभा मे बोलते हुए सुना था। मुझे आपके बोलने का ढङ्ग बहुत पसंद आया इसलिये मैं आपकी कुछ बातें सुनने के लिये फिर यहाँ आया हूँ।"

लोग प्रायः वाशिंगटन से पूछा करते थे कि आप टस्केजी से बाहर और बहुत दूर रहकर भी विद्यालय का प्रबंध किस प्रकार करते हैं। बात यह है कि वे इस सिद्धांत को नहीं मानते थे—"जो काम तुम स्वयं कर सकते हो वह दूसरों से मत कराओ।" उनका सिद्धांत था—"जो काम दूसरे लोग भली भाँति कर सकते हों, वह तुम स्वयं मत करो।"

टस्केजी-विद्यालय संबंधी यह बात बहुत ही संतोषजनक है कि वहाँ का कोई काम किसी एक मनुष्य की अनुपस्थिति के कारण नहीं रुक सकता। इस समय वहाँ के कार्य-कर्त्ताओं की संख्या छियासी है। उनमे से बहुत से अध्यापक ऐसे हैं जो विद्यालय पर बहुत अधिक प्रेम रखते हैं। वहाँ के वर्त्तमान कोषाध्यक्ष मि० लोगन गत बीस वर्षों से विद्यालय मे काम करते हैं। वाशिंगटन के उपरांत सब कामो की देख-भाल वे ही करते हैं। इस काम में श्रीमती वाशिंगटन भी उन्हे यथेष्ट सहायता देती हैं। पहले वाशिंगटन के सेक्रेटरी मि० स्काट नित्य प्रति आवश्यक बातो की सूचना उन्हे दिया करते थे। विद्यालय के सब कामों का प्रबंध करने के लिये एक कार्यकारिणी समिति है जिसका अधिवेशन सप्ताह में दो बार होता है। इस समिति में विद्यालय के नौ विभागों के नौ मुख्य अधिकारी सम्मिलित हैं। इसके अतिरिक्त छः सज्जनों की एक और समिति है जिसका अधिवेशन प्रति सप्ताह होता है और जिसका काम साप्ताहिक व्यय पर विचार

करना है। प्रति मास अथवा और पहले सब अध्यापकों की एक साधारण सभा भी होती है। इन सबके अतिरिक्त अनेक विभागों के शिक्षकों और अधिकारियों की भी कई पृथक् पृथक् समितियाँ हैं।

जब वाशिंगटन बाहर रहते थे तब नित्य प्रति उन्हें विद्यालय के कार्यों की रिपोर्ट मिला करती थी; यहाँ तक कि विद्यार्थियों की अनुपस्थिति और उसके कारण का विवरण भी उन्हे नियमित रूप से मिला करता था। विद्यालय की दैनिक आय, गोशाला से आए हुए दूध और मक्खन, तथा विद्यार्थियों और शिक्षकों को मिलनेवाले भोजन आदि का पूरा पूरा विवरण भी उन रिपोर्टों में रहता था, यहाँ तक कि बाजार से आए हुए मांस और साग तरकारी आदि का पूरा ब्योरा भी उनमें रहता था। इतने कड़े प्रबंध का फल यह होता था कि कोई मनुष्य किसी काम में आलस्य नहीं कर सकता था।

वाशिंगटन प्रति दिन प्रातःकाल अपने सब आवश्यक कार्य्यों का क्रम निश्चित कर लेते थे और जहाँ तक संभव होता था, सब काम शीघ्र समाप्त करके नए कामों के लिये बहुत सा समय निकाल लेते थे। दफ्तर से उठने के पहले वे पत्र-व्यवहार तथा अन्य सब आवश्यक कार्य समाप्त कर देते थे और दूसरे दिन के लिये कुछ भी नहीं छोड़ते थे। जिस मनुष्य के सब कार्य्य, भली भाँति उसके अधीन होते हैं वह सदा प्रसन्न, सुखी और संतुष्ट रहता है। वाशिंगटन का अनुभव था

कि ऐसे मनुष्यो का स्वास्थ्य भी सदा बहुत अच्छा रहता है। उनका विश्वास था कि जब मनुष्य अपने कार्य से प्रेम करने लग जाता है तब उसमे एक विशेष प्रकार की अमूल्य शक्ति आ जाती है।

प्रातःकाल दैनिक आवश्यक कार्य्य आरंभ करने के समय वे दिन मे आनेवाली विपत्तियो और कठिनाइयो के लिये भी तैयार हो जाते थे। वे सदा यह सुनने के लिये तैयार रहते थे कि विद्यालय का कोई भवन गिर पड़ा अथवा जल गया, या किसी समाचारपत्र या सार्वजनिक सभा मे किसी ने उनके कामो की कड़ी आलोचना की अथवा उनको दो चार खरी खोटी सुनाई हैं।

गत बीस वर्षों मे वाशिंगटन ने केवल एक बार अपने कार्य्य से अवकाश ग्रहण किया था और वह भी स्वेच्छा से नहीं। आठ नौ वर्ष पूर्व उनके मित्रों ने उन्हे धन देकर सपत्नीक यूरोप जाने के लिये विवश किया था।

वाशिंगटन का सिद्धांत था कि प्रत्येक मनुष्य सदा अपने शरीर को वश मे रख सकता है। उनका यह भी मत था कि यदि मनुष्य को अपनी तबियत कुछ भारी मालूम हो और वह तुरंत उसका उपाय कर ले तो वह अनेक बडे बड़े रोगों से बच सकता है। जिस दिन उन्हे भली भाँति नींद नहीं आती थी उस दिन वे समझ लेते थे कि कुछ गड़बड़ अवश्य है। यदि उन्हें किसी अंग मे शिथिलता मालूम होती थी तो

वे किसी चिकित्सक के पास चले जाते थे। हर समय और हर स्थान पर सो सकने की शक्ति भी बहुत लाभदायक होती है। वे जब चाहते तब पंद्रह बीस मिनट के लिये भी सो सकते थे और इस प्रकार अपनी सारी थकावट मिटा सकते थे। कोई विकट प्रश्न आ पड़ने पर वे दूसरे दिन के लिये, अथवा उस समय तक के लिये छोड़ देते थे जब तक कि वे उस विषय में अपनी स्त्री और मित्रो की सम्मति न ले लेते थे।

वाशिंगटन को समाचारपत्र पढ़ने का बहुत शौक था। अच्छी अच्छी पुस्तकें पढ़ने का समय उन्हे रेल मे ही मिलता था। उपन्यास उन्हें अच्छे नही लगते थे। जिन उपन्यासों की लोग प्रशंसा करते हैं उन्हे भी वे बड़ी कठिनता से पढ़ते थे। जीवनचरित उन्हें बहुत पसंद थे। अब्राहम लिंकन के विषय मे जितनी पुस्तकें आदि प्रकाशित हुई थीं, प्रायः सभी उन्होंने देख डाली थीं। साहित्य मे यही मानो उनके प्रधान गुरु थे।

साल मे छः महीने वाशिंगटन को टस्केजी से बाहर रहना पड़ता था। यद्यपि इससे विद्यालय की अनेक हानियाँ होती थीं, तथापि कुछ लाभ भी अवश्य होते थे। कार्य मे परिवर्त्तन होने के कारण एक प्रकार का विश्राम भी मिलता है। रेल की लंबी यात्रा वे बहुत पसंद करते थे और उसमे उन्हें सुख भी मिलता था। कभी कभी लोग रेल में उनसे मिलकर पूछा करते थे—"क्या आप ही बुकर टी० वाशिंगटन हैं? मैं

आपसे परिचय करना चाहता हूँ।" विद्यालय से अनुपस्थित रहने के समय वे उसके संबंध की छोटी और साधारण बातों से अनभिज्ञ रह जाते थे; पर उस समय उन्हे उसकी उन्नति के बड़े और आवश्यक उपाय सोचने का बहुत अच्छा अवसर मिलता था। विदेशों मे घूमकर वे भिन्न भिन्न स्थानो की शिक्षा-पद्धति का निरीक्षण करते और बड़े बड़े शिक्षकों से मिलते थे।

सबसे उत्तम विश्राम उन्हे उस समय मिलता था जब कि टस्केजी मे रात के भोजन के उपरांत वे अपनी स्त्री और बच्चों सहित अपने कमरे मे बैठते और कहानियाँ कहते और सुनते थे। रविवार के दिन वे सपरिवार वायु-सेवन करने और प्रकृति की शोभा निरखने के लिये जंगलो में चले जाते थे। उस अवसर पर वे स्वर्ग-सुख का अनुभव करते थे। अपने उद्यान में भी उन्हें अच्छी विश्रांति और प्रसन्नता मिलती थी। कृत्रिम वस्तुओं की अपेक्षा प्राकृतिक विषयों पर उनका प्रेम बहुत अधिक था। जब कभी उन्हें घंटे आध घंटे जमीन खोदने, बीज बोने या पौधे रोपने का अवसर मिलता था तब उन्हे ऐसा बोध होता था कि संसार के बड़े बड़े कार्य करने की शक्ति मुझमें आ रही है। जिस मनुष्य को प्रकृति से प्रेम नहीं होता था उसकी दशा पर उन्हे बहुत दया आती थी।

विद्यालय के अतिरिक्त वे स्वतंत्र रूप से भी अपने यहाँ बढ़िया बढ़िया सूअर और मुरगे रखते थे। सूअर पालने का

उन्हे वहुत शौक था। खेल आदि की उन्हे अधिक परवाह नही रहती थी। उन्होने फुटबाल कभी नहीं देखा। वे ताश के पत्ते भी नही पहचान सकते थे। कभी कभी वे अपने दो लड़कों के साथ पुराने ढंग का एक प्रकार का गोटियों का खेल खेला करते थे। इसके अतिरिक्त उन्हे और कोई खेल नही आता था।

१६—युरोप-यात्रा

सन् १८६३ मे वाशिंगटन का विवाह मिसिसिपी-निवासिनी, और फिस्क युनिवर्सिटी की ग्रैजुएट मिस मारग्रेट जेम्स मरे के साथ हुआ। उस समय मिस मारग्रेट टस्केजी-विद्यालय की लेडी प्रिंसिपल थीं। इन सह-धर्म्मिणी से भी वाशिंगटन को सदा विद्यालय के कामो मे अमूल्य सहायता मिला करती थी। श्रीमती वाशिगटन ने टस्केजी मे एक मातृ-सभा स्थापित की है। उन्होंने स्त्रियों की एक सभा को भी जन्म दिया है जिसका अधिवेशन मास में दो वार हुआ करता है। इसके अतिरिक्त वे दक्षिण की हवशी स्त्रियों के क्लब की तथा हवशी स्त्रियों के राष्ट्रीय क्लब की कार्यकारिणी समिति की अध्यक्ष हैं।

वाशिंगटन महाशय की तीन संतानें हैं। उनमे से सबसे वड़ी एक कन्या है जिसका नाम पोर्शिया है और जिसने

कपड़े सीना भली भाँति सीख लिया है। वह बाजा बजाना भी बहुत अच्छी तरह जानती है। विद्यालय मे पढ़ने के अतिरिक्त उसने अभी से वहाँ अध्यापन का कार्य्य भी आरंभ कर दिया है। उनके मझले लडके बेकट टेलियाफेरो ने बाल्यावस्था से ही ईंटें बनाने का काम सीखा है और अब वह उस कार्य्य में बहुत निपुण हो गया है। एक बार जब वाशिंगटन महाशय विदेश मे थे तब उसने उन्हे एक पत्र में लिखा था—"प्रिय पिताजी! आपने यहाँ से चलते समय कहा था कि तुम प्रति दिन अपना आधा समय अपने काम में लगाया करो। पर मुझे अपना काम इतना पसंद है कि मैं अपना सारा समय उसी में लगाना चाहता हूँ। इसके अतिरिक्त जहाँ तक हो सकता है, मैं धन कमाने का भी उद्योग करता हूँ। क्योंकि आगे चलकर जब मैं दूसरे विद्यालय मे पढ़ने जाऊँगा तब वहाँ मुझे अपने व्यय-निर्वाह के लिये धन की आवश्यकता होगी।" उनके सबसे छोटे पुत्र का नाम आरनेस्ट डेविडसन वाशिंगटन है। वह अभी से चिकित्सक बनने की इच्छा प्रकट करता है। विद्यालय में साधारण शिक्षा पाने के अतिरिक्त वह अपना कुछ समय वहाँ के चिकित्सक के कार्य्यालय मे भी लगाता है। उसने अभी से वहाँ का बहुत सा काम सीख भी लिया है।

वाशिंगटन महाशय को अपनी गृहस्थी बहुत प्रिय थी। वे घर मे रहना बहुत पसंद करते थे। विशेषत: दिन भर का कार्य्य समाप्त करके संध्या का समय अपने घर में बिताने में

उन्हें जितनी प्रसन्नता होती थी उतनी और किसी काम मे नहीं होती थी। उनकी वास्तविक प्रसन्नता का दूसरा स्थान प्रार्थनामंदिर था जहाँ नित्य रात को ठीक साढ़े आठ बजे सब विद्यार्थी और अध्यापक सपरिवार एकत्र होते हैं। उस समय उन लोगों की संख्या ग्यारह बारह सौ के लगभग होती है। उस समय उन लोगों का जीवन अधिक उपयुक्त और उच्च बनाने का उन्हे बहुत अच्छा अवसर मिलता था।

सन् १८९९ की वसंत ऋतु मे बोस्टन नगर की कुछ भद्र महिलाओं ने टस्केजी-विद्यालय की सहायता के लिये एक सभा की थी जिसमे अनेक गोरे और हबशी सम्मिलित हुए थे। सभा मे सम्मिलित होनेवाले कुछ सज्जनों ने अनुमान से जान लिया कि वाशिंगटन महाशय का शरीर बहुत शिथिल हो चला है। सभा भंग होने के थोड़ी देर बाद एक भद्र महिला ने उनसे पूछा—क्या आप कभी युरोप गए हैं? उत्तर में उन्होंने कहा—नहीं। उसने पूछा—क्या वहाँ जाने का आपका विचार है? उन्होने कहा—नहीं, यह बात मेरी शक्ति के बाहर है। उस समय के उपरांत वाशिंगटन को इन बातों का कुछ भी ध्यान न रहा। पर कई दिनों बाद उन्हे सूचना मिली कि बोस्टन-निवासी कुछ मित्रो ने उन्हे और उनकी स्त्री को तीन चार मास के लिये युरोप भेजने के विचार से कुछ धन-संग्रह किया है। यही नहीं, बल्कि उन मित्रो ने उन्हे इस यात्रा के लिये बहुत जोर भी दिया। इससे एक वर्ष

पूर्व मि० गैरिसन नामक उनके एक मित्र ने उनसे विश्राम करने के लिये युरोप जाने का वचन ले लिया था और स्वयं व्यय के लिये धन-संग्रह करने का भार भी ले लिया था। पर वाशिंगटन महाशय के मन मे यह बात बैठती न थी। इसी लिये उन्होंने उस ओर अधिक ध्यान नही दिया था। पर उस वर्ष मि० गैरिसन ने उक्त कई भद्र महिलाओं से मिलकर उनकी युरोप्-यात्रा के विषय मे सब बातें निश्चित कर ली थीं, यहाँ तक कि उनके जाने का मार्ग और स्टीमर भी निश्चित हो चुका था।

ये सब बातें बहुत जल्दी हो गईं और वाशिंगटन युरोप जाने के लिये विवश किए गए। गत अठारह वर्षों से उन्होंने विद्यालय के लिये अविश्रांत परिश्रम किया था और भविष्य मे भी अपना शेष जीवन उसी प्रकार परिश्रम करके बिताने का उनका दृढ़ विचार था। दिन पर दिन विद्यालय का कार्य्य बहुत बढ़ता जाता था और सब काम प्रायः उन्ही पर निर्भर रहते थे। इसलिये उन्होंने अपने मित्रो को उस कृपा और सज्जनता के लिये धन्यवाद देते हुए कहा कि मेरे यहाँ से चले जाने पर विद्यालय की आर्थिक दशा बहुत हीन हो जायगी, इसलिये मैं युरोप जाने मे असमर्थ हूँ। इसके उत्तर मे उनसे कहा गया कि हम लोगों ने यथेष्ट धन संग्रह कर लिया है, आपकी अनुपस्थिति में विद्यालय को धन का कष्ट नहीं होगा और वह बराबर जारी रहेगा। अब वाशिंगटन महाशय को

बचने के लिये और कोई स्थान न मिल सका और विवश होकर उन्हें अपने मित्रों का अनुरोध पालन करने के लिये तैयार होना पड़ा।

इतना सब कुछ होने पर भी वाशिंगटन महाशय को युरोप-यात्रा का विचार स्वप्नवत् मालूम होता था। उनका जन्म घोर दासत्व में हुआ था और प्रारंभिक जीवन अज्ञानता और दरिद्रता में बीता था। वे प्रायः यही समझते थे कि संसार के सुख केवल गोरों के लिये ही हैं, हबशियों के लिये नहीं। युरोप और उसके बड़े बड़े नगरों को वे प्रायः स्वर्ग-तुल्य ही समझते थे। इसलिये उन्हें इस बात का दृढ़ विश्वास ही न होता था कि मैं युरोप-यात्रा करूँगा। इसके अतिरिक्त इस संबंध में दो और विचार उन्हें विकल कर रहे थे। वे समझते थे कि लोग जब मेरी इस यात्रा का समाचार सुनेंगे तब बिना वास्तविक स्थिति का परिचय पाए ही कहने लगेंगे कि अब वाशिंगटन को दिमाग हो गया है और वे बनने लगे हैं। बाल्यावस्था में वे अपने उन स्वजातियों के विषय में वे ही बातें सुना करते थे, जो संसार में किसी प्रकार की सफलता प्राप्त कर लेते थे। इसके अतिरिक्त वे यह भी समझते थे कि अपना कार्य्य छोड़ने पर संभवतः मैं प्रसन्न न रह सकूँगा। ऐसी दशा में, जब कि कार्य्य की अधिकता थी और दूसरे लोग उसमें दृढ़ता-पूर्वक लगे हुए थे, वे स्वयं काम छोड़कर जाने को स्वार्थपूर्ण और अनुचित समझते थे। उन्होंने जब

से ज्ञान प्राप्त किया था, तब से वे सदा काम ही करते रहे थे, इसलिये वे यह भी न समझ सकते थे कि बिलकुल खाली रहकर मैं तीन चार मास किस प्रकार बिता सकूँगा। वास्तव में वे कार्य्य से अवकाश ग्रहण करना जानते ही न थे।

यद्यपि उनकी स्त्री को भी ये ही सब कठिनाइयाँ थीं तो भी वे युरोप जाना चाहती थीं। उनकी उत्सुकता का मुख्य कारण यह था कि वे अपने पति को कुछ विश्राम दिलाना चाहती थीं। उस समय वहाँ अनके महत्त्वपूर्ण जातीय प्रश्नो पर आंदोलन हो रहा था, इसलिये उनका वहाँ से जाना और भी कठिन था, पर मित्रो के बहुत अनुरोध करने पर अंत मे उन्हें अपनी यात्रा के लिये १० मई का दिन निश्चित करना पड़ा। उनके मित्र मि० गैरिसन ने उनकी यात्रा के संबंध में सब आवश्यक प्रबंध कर दिए और उनके दूसरे मित्रो ने उन्हे इँगलैंड और फ्रांस के अनेक संभ्रात पुरुषों के नाम परिचय-पत्र भी दे दिए। टस्केजी से चलकर दूसरे दिन जहाज पर सवार होने के लिये ६ मई को वे न्यूयार्क पहुँचे। वहीं उनकी कन्या, जो उस समय दक्षिण फरमिंघम में पढ़ती थी, उनसे मिलने के लिये आई। वे चलने के समय अपने सब कार्य्य समाप्त कर देना चाहते थे, इसलिये उनके सेक्रेटरी भी वहाँ तक उनके साथ आए। जहाज पर सवार होते ही उन्हे प्रसन्नता का एक समाचार मिला। दो महिलाओं ने टस्केजी की कन्या-पाठशाला के लिये एक भवन बन-

वाने के निमित्त यथेष्ट धन दान करने की सूचना उन्हे पत्र द्वारा दी थी।

१० मई की दोपहर को वे सपत्नीक फ्रीसलैंड नामक जहाज पर सवार हुए। जहाज के कप्तान तथा दूसरे अधिकारियों को उनके पद तथा आगमन की सूचना पहले ही मिल चुकी थी। उन लोगो ने उनका स्वागत किया। इसके अतिरिक्त अन्य यात्रियों ने भी उनका अच्छा आदर सत्कार किया। पहले तो वे समझते थे कि जहाज़ पर लोग मेरे साथ सभ्यता का व्यवहार न करेंगे। पर वह बात नहीं हुई। जहाज पर सभी छोटे-बड़ों ने उनका यथेष्ट सम्मान किया।

जब जहाज का लंगर उठ गया तब वाशिंगटन महाशय को भी अपने ऊपर का भार कुछ कम होता हुआ जान पड़ा। कदाचित् उनके जीवन मे चिंता-रहित होने का वह पहला ही अवसर था। अब उन्हें कुछ प्रसन्नता मालूम होने लगी। मि० गैरिसन ने उनके लिये जहाज में एक बहुत अच्छे कमरे का प्रबंध कर दिया था। यात्रा आरंभ करने के दूसरे ही दिन से उन्हे खूब निद्रा आने लगी, यहाँ तक कि बाकी दस दिनों मे वे बराबर प्रति दिन १५ घंटे सोया करते थे। उसी समय उन्हे यह भी मालूम हुआ कि मैं वास्तव मे बहुत अधिक थक गया था। युरोप पहुँचने के एक मास बाद तक भी उन्हे खूब निद्रा आया करती थी। उन दिनो उन्हे रात को सोते समय इस बात की चिंता नहीं रहती थी कि प्रातःकाल

मुझे किसी से भेंट करना है, अमुक समय रेल पर जाना है अथवा अमुक समय कोई व्याख्यान देना है। अमेरिका में प्रवास करते समय उन्हे कई बार एक ही रात मे तीन भिन्न भिन्न स्थानों पर सोना पड़ता था! और उन अवसरों का ध्यान रखते हुए इस समय वे बहुत ही निश्चित थे। इसी लिये उन्होंने बहुत प्रसन्नतापूर्वक यथेष्ट विश्राम किया। रविवार के दिन जहाज के कप्तान ने उनसे धर्मोपदेश करने की प्रार्थना की; पर वे उपदेशक नहीं थे, इसलिये उसकी प्रार्थना स्वीकार न कर सके। तथापि कई यात्रियो के आग्रह करने पर उन्होंने उस दिन भोजनागर में एक व्याख्यान अवश्य दिया था। दस दिन बाद उनका जहाज किनारे लगा और वे बेलजियम देश के एंटवर्प नामक नगर मे उतरे।

नगर के मध्य मे एक अच्छे होटल मे वे जाकर ठहरे। कई दिनो तक वहाँ रहने के उपरांत उनके कई मित्रो ने उन्हे हालैंड में सैर करने के लिये निमंत्रित किया। उन्होने उस प्रांत के लोगों के वास्तविक जीवन का बहुत अच्छा ज्ञान प्राप्त किया। वहाँ से लौटकर वे हेग नगर मे गए जहाँ उस समय शांति महासभा (Peace Conference) का अधिवेशन हो रहा था। वहाँ अमेरिका के प्रतिनिधियों ने उनका बहुत अच्छा स्वागत किया था।

हालैंड की बढ़िया खेती और अच्छे अच्छे पार्क देखकर वे बहुत प्रसन्न हुए थे। वहाँ से ब्रुसेल्स मे वाटरलू का युद्ध-

चेत्र देखते हुए वे पेरिस गए। वहाँ पहुँचते ही युनिवर्सिटी क्लब की ओर से उन्हे एक दावत का निमंत्रण मिला। उस दावत मे बहुत बड़े बड़े लोग सम्मिलित हुए थे। सभापति का आसन अमेरिका के राजदूत जनरल होरेस पोरटर ने ग्रहण किया था। उस अवसर पर वाशिंगटन ने एक बहुत अच्छा व्याख्यान भी दिया था जिसे सुनकर सब लोग प्रसन्न और संतुष्ट हुए थे। जनरल ने उनकी योग्यता और कृतियों की बहुत अधिक प्रशंसा की थी। इसके उपरांत उन्हे और भी अनेक निमंत्रण मिले, पर उनसे अपने उद्देश्य मे बाधा पड़ते देख उन्होने वे निमंत्रण अस्वीकार कर दिए।

अंत मे एक दिन उन्हे अमेरिकन राजदूत जनरल पोरटर की ओर से निमंत्रण मिला। वहाँ अमेरिका के कई बहुत बड़े बड़े आदमियों से उनकी भेट हुई जिनमे वहाँ के सुप्रीम कोर्ट के दो जज भी थे। उस समय पेरिस मे प्रसिद्ध अमेरिकन हबशी चित्रकार मि० टैनर उपस्थित थे। वहाँ उनके बनाए हुए चित्र बहुत चाव और आदर से देखे जाते थे। वाशिंगटन का सदा से यह सिद्धांत था कि जो मनुष्य कोई अच्छा काम करना जानता है, उसका यथेष्ट आदर अवश्य होता है। मि० टैनर की प्रतिष्ठा देखकर उनकी यह धारणा और भी अधिक दृढ़ हो गई। बात यह है कि संसार में सर्वोत्तम कार्य्य की बहुत चाह होती है और उनके सामने लोग धर्म्म, जाति या वर्ण का विचार भूल जाते हैं। वाशिंगटन

महाशय का कथन है—"हमारी जाति का भविष्य केवल इसी प्रश्न पर निर्भर है कि वह अपने कार्य्यों को परम उपयुक्त और सबसे अधिक आवश्यक बना सकेगी या नहीं। क्योंकि जो मनुष्य अपने परिश्रम से अपने निवासस्थान और सहवर्त्तियों के कल्याण के लिये उनकी आर्थिक और नैतिक उन्नति करता है, वह पुरस्कार से वंचित नहीं रह सकता।" नैतिक विचारों मे उन्होंने फ्रांसीसियों को अपनी जाति के लोगों के समकक्ष ही पाया था। जीवन-निर्वाह की बढ़ती हुई कठिनाइयों के कारण वे लोग भली भाँति अपने को संपन्न करना सीख गए थे। वाशिंगटन का अनुमान था कि हमारी जाति भी शीघ्र ही उस स्थिति तक पहुँच जायगी। सत्यता और महानुभावता मे उन्होंने अपनी जाति के लोगों को फ्रांसीसियों के समकक्ष और पशुओं पर दया करने मे बढ़ा चढ़ा हुआ पाया था। फ्रांस से चलते समय उन्हे अपनी जाति की उन्नति का अधिक दृढ़ विश्वास हो गया था।

पेरिस से चलकर जूलाई के आरंभ मे वे लंडन पहुँचे। उस समय वहाँ पार्लिमेंट के अधिवेशन हो रहे थे और बाहर से अनेक प्रतिष्ठित लोग वहाँ आए हुए थे। वहाँ पहुँचते ही उन्हें अनेक प्रकार के निमंत्रण मिलने लगे पर उन्होंने अधिकाश निमंत्रण, केवल विश्राम करने की इच्छा से अस्वीकार कर दिए। उनके दो एक मित्रो ने वहाँ के एसेक्स हाल मे उनके व्याख्यान का प्रबंध कर दिया था। अमेरिकन राजदूत माननीय

शोटे ने सभापति का आसन ग्रहण किया था। सभा मे पार्लिमेंट के अनेक सभासद तथा बहुत से अन्य प्रतिष्ठित लोग सम्मिलित हुए थे। वाशिंगटन के उस व्याख्यान की प्रशंसा इँगलैंड तथा अमेरिका के बहुत बड़े बड़े पत्रों मे हुई थी। वही पर वे पहले पहल मार्क ट्वेन से भी मिले थे। अनेक बड़े बडे लोगो ने उन्हे दावतें भी दी थीं। लंडन से चलकर वे बरमिंघम पहुँचे। वहाँ उन्हे दासत्व-प्रथा के विरोधी स्वर्गीय गैरिसन और माननीय डगलस के अनेक पक्षपाती और भक्त मिले।

इँगलैंड के ब्रिस्टल नगर मे वाशिंगटन और उनकी पत्नी ने स्त्रियो के लिबरल क्लब मे व्याख्यान दिए थे। इसके अतिरिक्त अंधों के रायल कालेज के पदवीदान के अवसर पर भी वाशिंगटन महाशय का मुख्य भाषण हुआ था। यह उत्सव सीस महल (Crystal Palace) मे हुआ था और वेस्टमिनिस्टर के स्वर्गीय ड्यूक ने सभापति का आसन ग्रहण किया था। ड्यूक महाशय इँगलैंड के सबसे बड़े धनी थे। लेडी एबरडीन की कृपा से इन्हे और उनकी स्त्री को विंडसर कैसल मे स्वर्गीया महारानी विक्टोरिया से भेंट करने का सौभाग्य भी प्राप्त हुआ था। उसी अवसर पर उन्हे महारानी की ओर से चाय पीने के लिये निमंत्रण भी मिला था।

हमारे चरित-नायक हाउस-आफ-कामंस मे भी कई बार गए थे और वहाँ सर स्टैनली से मिले थे। उन्होने अफ्रिका

और अमेरिका के हवशियों के संबंध मे उनसे अनेक बातें की थीं जिनसे उन्हे निश्चय हो गया था कि अमेरिकन हवशियों की दशा का अफ्रिका जाने से कुछ भी सुधार नहीं हो सकता।

इँगलैंड मे वाशिंगटन बहुत बड़े बड़े ऍंगरेजों के मेहमान हुए थे और वहाँ उन्हे उनकी सर्वोत्तम रहन सहन देखने का अवसर मिला था। उनका विश्वास था कि अमेरिकनों की अपेक्षा ऍंगरेज लोग अधिक सुख से जीवन व्यतीत करना जानते हैं। उनके कथनानुसार ऍंगरेजों का गार्हस्थ्य जीवन सर्वांगपूर्ण है। वहाँ नौकर चाकर अपने स्वामियों का बहुत अधिक आदर करते हैं। ऍंगरेज नौकर सदा नौकर ही रहना चाहते हैं और अपना कार्य्य अमेरिकन नौकर की अपेक्षा बहुत अधिक उत्तमता से करते हैं। पर अमेरिका के नौकर शीघ्र ही स्वयं मालिक बन जाने की आशा रखते हैं। दूसरी बात यह है कि इँगलैंड मे सब लोग राजनियमो का खूब ध्यान रखते हैं और वहाँ सब कार्य्य बहुत भली भाँति और सरलता-पूर्वक होते हैं। ऍंगरेज लोग भोजन करने में बहुत अधिक समय लगाते हैं।

इँगलैंड के अमीरों के संबंध मे उनके विचार पहले की अपेक्षा अधिक अच्छे हो गए थे। इससे पूर्व उन्हे यह बात नहीं मालूम थी कि सर्वसाधारण मे अमीरों का बहुत मान है और वे लोग बहुत दत्तचित्त होकर परोपकार में बहुत अधिक समय और धन व्यय करते हैं। ऍंगरेजो के सामने

वक्तृता देने का अभ्यास करने मे उन्हे बहुत कठिनता हुई थी। वाशिंगटन के मुँह से जिस किस्से को सुनकर अमेरिकन खूब हँसते थे उस किस्से को सुनकर गंभीर अँगरेजों के चेहरे पर मुस्कराहट भी न आती थी। अँगरेज लोग जिनसे मित्रता करते हैं उन्हे वे मानो लोहे के तारों से बाँध लेते हैं। अपने इस कथन के उदाहरण में उन्होंने एक घटना का उल्लेख किया है। सदरलैंड के ड्यूक और डचेज ने वाशिंगटन और उनकी स्त्री को अपने स्टैफोर्ड हाउस नामक मकान में निमंत्रित किया था। यह मकान इँगलैंड भर में सबसे बढ़िया समझा जाता है और डचेज इँगलैंड की स्त्रियों मे परम सुन्दरी कही जाती हैं। निमंत्रण के समय वहाँ लगभग तीन सौ मनुष्य उपस्थित थे। उस संध्या को डचेज महाशय ने उतने बड़े समूह में वाशिंगटन को दो बार ढूँढकर उनसे बातें की थी और टस्केजी जाने पर वहाँ का पूरा पूरा हाल लिख भेजने के लिये कहा था। वाशिंगटन ने भी उनकी इस आज्ञा का भली भाँति पालन किया था। डचेज ने बड़े दिनों पर उन्हे अपने हस्ताक्षर करके अपना एक चित्र भेजा था। पीछे उन लोगों मे बराबर पत्र-व्यवहार होता था।

तीन मास तक युरोप मे भ्रमण करके वाशिंगटन महाशय सेंट लुई नामक जहाज पर सवार होकर साउथैंपटन से रवाना हुए। उस जहाज पर एक बहुत अच्छा पुस्तकालय था जिसमे फ्रेडरिक डगलस का एक जीवन-चरित था। वाशिंगटन ने उसे ध्यानपूर्वक पढ़ा था। उसे देखने से उन्हे मालूम हुआ कि जब

डगलस महाशय पहली या दूसरी बार इँगलैंड गए थे तब लोगों ने उन्हे जहाज के कमरो मे न जाने दिया था और डेक पर ही रहने के लिये कहा था। जिस समय वाशिंगटन यह वर्णन पढ़ रहे थे, उसी समय कई स्त्रियों और पुरुषो ने आकर उनसे दूसरे दिन संध्या समय कंसर्ट के अवसर पर एक वक्तृता देने की प्रार्थना की। इससे मालूम होता है कि अमेरिका में दिन पर दिन जाति या वर्ण-भेद का विचार उठता जाता है। कंसर्ट मे न्यूयार्क के गवर्नर सभापति हुए थे। सब लोगों ने वहुत ध्यान से उनका व्याख्यान सुना था। उसी अवसर पर सब श्रोताओं ने, जिनमे से अधिकाश दक्षिणी अमेरिकन थे, टस्केजी-विद्यालय के कई विद्यार्थियों को छात्रवृत्तियाँ देने के लिये चदा इकट्ठा किया था।

पाठकों को स्मरण होगा कि वाशिंगटन महाशय ने अपनी बाल्यावस्था का अधिकांश पश्चिम वर्जीनिया में व्यतीत किया था। जब वे पेरिस मे थे तब उन्हें पश्चिम वर्जीनिया के निवासियों की ओर से निम्नलिखित आशय का निमंत्रण मिला था।

चार्लस्टन १३ मई १८९९

प्रोफेसर बुकर टी० वाशिंगटन, पेरिस (फ्रांस)

प्रिय महाशय,

पश्चिम वर्जीनिया के अनेक सुयोग्य निवासियों ने आपके कार्य और योग्यता की वहुत प्रशंसा की है और उनकी इच्छा है कि युरोप से लौटने पर आप यहाँ पधारकर उन्हें

उत्साह दिलाने के लिये एक व्याख्यान देने की कृपा करें। हम लोग इस विचार को बहुत पसंद करते हैं और आपने अपने कार्य्यों से हम लोगों की जो प्रतिष्ठा बढ़ाई है, उसके बदले मे आपका सम्मान करने के लिये हम लोग चार्लस्टन-निवासियों की ओर से आपको यहाँ आने का निमंत्रण देते हैं।

भवदीय

चार्लस्टन नगर की कामन कौंसिल की ओर से,

डबल्यू० हरसन स्मिथ

मेयर

इस निमत्रण के साथ एक और निमंत्रण-पत्र था, जिस पर चार्लस्टन के डेलो गजट, डेली मेल, ट्रिब्यून, जी० डब्ल्यू० एटकिसन गवर्नर, डब्ल्यू० ए० मैक-कारकल भूतपूर्व गवर्नर, तथा कई बंकों के सभापतियों तथा राज्य के बहुत बड़े बड़े अधिकारियों के हस्ताक्षर थे। वाशिंगटन महाशय ने ये दोनों निमंत्रण स्वीकार कर लिए। निश्चित तिथि पर वे चार्लस्टन पहुँचे। रेलवे स्टेशन पर भूतपूर्व गवर्नर मि० मैक-कारकल तथा अन्य कई बड़े बड़े लोगों ने उनका स्वागत किया। इसके अतिरिक्त नगर के आपेरा हाउस मे उनका सार्वजनिक स्वागत किया गया। गवर्नर माननीय मिस्टर एटकिंसन ने सभापति का आसन ग्रहण किया। मि० मैक-कारकल ने वाशिंगटन महाशय को एक अभिनंदन-पत्र दिया। दूसरे दिन फिर उसी प्रकार स्टेट-हाउस मे श्रीयुत और श्रीमती एटकिंसन की ओर

से उनका स्वागत हुआ। इसके बाद ही एटलांटा के हबशियों ने भी निमंत्रण देकर उनका स्वागत किया जिसमें राज्य के गवर्नर सभापति हुए थे। न्यू-ओरलियंस के निवासियों ने भी उनका स्वागत किया था जिसमें नगर के मेयर महाशय सभापति हुए थे। इसके अतिरिक्त और भी अनेक स्थानों से उन्हें अनेक निमंत्रण आए थे, पर कई कारणों से उन्होंने कोई निमंत्रण स्वीकार नहीं किया था।

१७—सफलता का मधुर फल

युरोप जाने से पूर्व वाशिंगटन महाशय के जीवन मे आश्चर्यपूर्ण घटनाएँ हुई थीं। यदि सच पूछिए तो उनका सारा जीवन ही आश्चर्यपूर्ण घटनाओं से पूर्ण है। उनका दृढ़ विश्वास था कि यदि मनुष्य नित्य अपने जीवन को निर्मल, स्वार्थरहित और उपयुक्त बनाने की चेष्टा में लगा रहे तो उसे सदा अपने जीवन में इसी प्रकार की अकल्पित और उत्साह वढ़ानेवाली बातें मिला करेगी। जो मनुष्य दूसरों को उपकृत या सुखी करके प्रसन्न और संतुष्ट नहीं होता उसकी स्थिति वहुत ही शोचनीय होती है।

पक्षाघात से एक वर्ष तक पीड़ित रहने के बाद और अपनी मृत्यु से छः मास पहले जनरल आर्मस्ट्रांग ने एक वार पुनः टस्केजी-विद्यालय देखने की इच्छा प्रकट की। यद्यपि

उस समय वे चलने फिरने में बिलकुल असमर्थ थे तो भी वे किसी प्रकार टस्केजी लाए गए। वहाँ के रेलवे के गोरे मालिकों ने बिना कुछ लिए ही पाँच मील की दूरी से एक स्पेशल गाड़ी पर उन्हें ले जाने का प्रबंध कर दिया था। जनरल महाशय रात के नौ बजे विद्यालय मे पहुँचे थे। विद्यालय के फाटक से उनके ठहरने के स्थान तक दोनों ओर एक हजार विद्यार्थी और शिक्षक हाथों में रोशनी लिए खड़े थे। वह दृश्य देखकर जनरल महाशय बहुत प्रसन्न हुए थे। कोई दो मास तक वे अपने शिष्य और हमारे चरित-नायक के घर मेहमान रहे थे। इस बीच मे वे बोलने-चालने और उठने-बैठने मे नितांत असमर्थ होने पर भी सदा विद्यालय की उन्नति के उपाय बतलाया करते थे। वे सदा यही कहा करते थे कि समस्त देश का कर्त्तव्य यही होना चाहिए कि वह हबशियो और दरिद्र गोरों की उन्नति के लिये समान रूप से उद्योग करे। वाशिंगटन ने उस समय उनके विचार पूर्ण करने का और भी अधिक दृढ़ निश्चय कर लिया था। उन्होंने सोचा कि जब कार्य्य करने मे सब प्रकार से असमर्थ होने पर भी जनरल महाशय ऐसी बातों की चिंता करते हैं तो मुझ ऐसे समर्थ को उसमे सहायता देना परम आवश्यक है।

इसके थोड़े ही दिनों पीछे जनरल आर्मस्ट्रांग का देहांत हो गया। उनके स्थान पर पादरी डाक्टर फ्रिसेल हैंपटन-विद्यालय के प्रिंसिपल बनाए गए। ये महाशय भी साधुता

ओर परोपकार आदि मे जनरल महाशय के प्राय: समकक्ष ही हैं। जनरल महाशय के इच्छानुसार उन्होंने विद्यालय को परमोन्नत बनाने में कोई बात उठा नही रखी। यही नहीं बल्कि इस काम मे वे अपनी जरा भी प्रसिद्धि नहीं चाहते और सारा यश जनरल महाशय को ही देते हैं।

ऊपर कहा जा चुका है कि युरोप जाने से पूर्व वाशिंगटन के जीवन मे अनेक अद्भुत घटनाएँ हुई थीं। २४ जून सन् १८९६ को उन्हें हरवर्ड विश्वविद्यालय से आनरेरी एम० ए० की डिगरी मिली थी। हरवर्ड विश्व-विद्यालय अमेरिका में सबसे अधिक प्राचीन और प्रतिष्ठित है। विद्यालय का तत्-संबंधी निमंत्रण-पत्र पाकर उनके नेत्रो मे जल भर आया था। सारी प्रारंभिक दीन-स्थिति उनकी आँखों के सामने फिर गई। उन्हें ध्यान आ गया कि किसी समय हम दास थे, कोयले की खान मे काम करते थे, हमारे खाने पहनने और रहने का कोई ठिकाना नहीं था, विद्या पढ़ने के लिये हमे घोर परिश्रम करना पड़ा था और टस्केजी-विद्यालय का कार्य्य, पास मे एक डालर न होने पर भी, आरंभ करना पड़ा था।

वाशिंगटन प्रतिष्ठा या प्रसिद्धि के भूखे नही थे और न उन्होंने कभी इन बातों की परवा की थी। प्रसिद्धि को वे केवल अच्छे कामों के पूरा करने मे साधारण सहायक मात्र मानते थे और ये ही बातें वह सदा अपने मित्रों से भी कहा करते थे। केवल उतनी ही प्रसिद्धि से संतुष्ट रहना चाहते थे

जिससे उनके परोपकारी कार्यों मे कुछ सहायता मिल सके। किसी अच्छे कार्य्य मे वे प्रसिद्धि को उतना ही सहायक और आवश्यक समझते थे जितना धन को। बड़े बड़े योग्य धनवानों से मिलकर उन्होंने यही निश्चय किया कि वे धनवान् लोग धन को परोपकार के कार्य्यों के लिये ईश्वर-प्रदत्त साधन मात्र समझते हैं। यद्यपि वे सुप्रसिद्ध दानवीर और धनी राकफेलर के पास कभी नहीं गए थे तो भी उन्होंने बिना माँगे अनेक बार टस्केजी-विद्यालय को सहायता दी थी। जिस पकार किसी व्यवसाय मे धन लगाने के समय वे इस बात का ध्यान रखते हैं कि उनके प्रत्येक डालर का ठीक ठीक उपयोग हो उसी प्रकार दान देने के समय भी वे इस बात का उतना ही अधिक ध्यान रखते हैं, और वास्तव मे इस प्रकार के विचार बहुत ही उपयुक्त और उत्साहवर्धक हैं।

२४ जून को सवेरे नौ बजे वाशिंगटन हरवर्ड विश्वविद्यालय के बोर्ड आफ ओवरसियर के सभापति ईलियट महाशय के पास पहुँचे। उस समय वहाँ और भी अनेक निमंत्रित सज्जन उपस्थित थे। पदवी-दान का समारंभ सैंडर्स थिएटर मे होने को था और ईलियट महाशय के स्थान से उक्त थिएटर तक निमंत्रित लोगो का एक जुलूस निकलनेवाला था। उस दिन पदवी पानेवाले अनेक विद्वानों में बेल टेलीफोन (Bell Telephone) का आविष्कार करनेवाले डाक्टर बेल भी थे। प्रेसिडेंट और ओवरसियरों के पीछे पदवी पानेवाले लोग खड़े

किए गए। इतने मे बहुत से भाले-बरदारों के साथ मैसेच्यु-एट्स के गवर्नर वहाँ आए। वहाँ से जुलूस थिएटर की ओर रवाना हुआ। उस जुलूस में अनेक बड़े बड़े अफसर और प्रोफेसर भी सम्मिलित थे। थिएटर में साधारण कार्रवाइयों के उपरांत पदवी-दान का कार्य आरंभ हुआ। विद्यालय का यह समारंभ सदा ही बहुत मनोहर हुआ करता है। पदवी पानेवालों के नाम पहले गुप्त रखे जाते हैं और जिन लोगों को पदवियाँ मिलती हैं उनके नाम पर विद्यार्थी और दूसरे लोग उनकी सर्वप्रियता के अनुसार उनका अभिनंदन करते हुए प्रसन्नता प्रकट करते हैं। उस समय लोगो का उत्साह और आनंद परम सीमा तक पहुँचा हुआ होता है।

जिस समय वाशिंगटन महाशय का नाम लिया गया, उस समय वे उठकर खड़े हो गए। सभापति ईलियट महाशय ने सुंदर और पुष्ट अँगरेजी मे उनकी प्रशंसा करके उन्हे एम० ए० (Master of Arts) की पदवी दी। इसके उपरांत और लोगों को भी पदवियाँ दी गई और तदनंतर जिन लोगों को पदवियाँ मिली थीं उन्हें सभापति महाशय के साथ जलपान करने के लिये निमंत्रण दिया गया। जलपान के उपरांत उन लोगों को चारों ओर घुमाया गया। स्थान स्थान पर लोग पदवी पानेवालो के नाम ले लेकर जय-घोष करते थे। चारों ओर घूम फिरकर वे मेमोरियल हाल में पहुँचे जहाँ विश्वविद्यालय मे शिक्षा पाए हुए लोगों के भोजन आदि का प्रबंध किया

गया था। उस समय एक हजार बड़े बड़े अफसरों, पादरियों, व्यापारियों और शिक्षितों की उपस्थिति से जो अपूर्व दृश्य उपस्थित हुआ था उसका वर्णन प्रायः असंभव है।

भोज के उपरांत सभापति ईलियट, गवर्नर वालकाट, माननीय माइल्स, डाक्टर सैवेज, माननीय लाज तथा वाशिंगटन महाशय के व्याख्यान हुए थे। वाशिंगटन महाशय ने अन्यान्य बातों के अतिरिक्त अपनी वक्तृता में कहा था—

"आप लोगों ने आज जो मेरी इतनी प्रतिष्ठा की है, यदि मैं अपने आपको किसी अंश में भी उसका पात्र समझूँगा तो मेरे मन का बोझ कुछ हलका हो जायगा। आप लोगों ने दक्षिण के गरीबों में से इस अवसर पर पदवी ग्रहण करने के लिये मुझे क्यों बुलाया है, यह मैं नहीं समझ सकता। पर तो भी मेरे लिये यह कहना अनुचित या अप्रासंगिक न होगा कि अमेरिकन लोगों के सामने आज मुख्य प्रश्न यह है कि विद्वानों, धनवानों और सशक्तों को मूर्खों, निर्धनों और दुर्बलों का किस प्रकार सहायक बनाया जाय और एक के द्वारा दूसरे के कार्यों की प्रशंसा किस प्रकार कराई जाय। प्रश्न यह है कि अत्यंत दरिद्रों की आवश्यकताएँ बड़े बड़े धनवानों पर किस प्रकार प्रकट की जायँ। हरवर्ड विश्वविद्यालय आज, अपने आपको नीचे गिराकर नहीं बल्कि सर्वसाधारण को उन्नत करके, इसी प्रश्न का निर्णय कर रहा है।

   

"यदि आज तक अपने गत जीवन में मैंने अपने जाति भाइयों को उन्नत करने और अपनी तथा आपकी जाति का संबंध दृढ़ करने के लिये कोई उद्योग किया हो तो मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि आज से मेरा वह उद्योग द्विगुण हो जायगा। ईश्वर के यहाँ प्रत्येक मनुष्य और प्रत्येक जाति की सफलता का एक ही परिमाण है। इस देश में प्रत्येक जाति को अमेरिकन परिमाण के अनुसार अपने आपको नापना चाहिए। प्रत्येक जाति की उन्नति और अवनति, सफलता और विफलता उसी परिमाण के अनुसार होगी। केवल इच्छा या उद्देश्य का कोई महत्त्वपूर्ण परिणाम नहीं होता। आगामी पचास वर्ष या उससे भी कुछ अधिक समय तक हमारी जाति भी इसी कठिन कसौटी पर कसी जायगी। यहीं हमारी सहिष्णुता, तितिक्षा, धैर्य, शक्ति और मितव्ययता की परीक्षा होगी। यही नहीं बल्कि यह भी देखा जायगा कि हम लोगों में बढ़ा ऊपरी या मुकाबला करने की शक्ति है या नहीं, व्यापार से हम लोग सफलता प्राप्त कर सकते हैं या नहीं, वास्तविक बातों के लिये कृत्रिम बातों को छोड़ सकते हैं या नहीं, उन्नत होकर भी नम्र रह सकते हैं या नहीं, विद्वान होकर भी सरल रह सकते हैं या नहीं और उच्च होने पर भी सबके सेवक बने रह सकते हैं या नहीं।"

अमेरिकन युनिवर्सिटी की ओर से एक हबशी को इतनी बड़ी आनरेरी पदवी मिलने का यह पहला ही अवसर था,

इसलिये वहाँ के समाचारपत्रों मे इस बात की बहुत चर्चा हुई। न्यूयार्क के एक पत्र के संवाददाता ने लिखा था—

"बु० टी० वाशिंगटन के नाम पुकारे जाने और उठने पर जितनी अधिक तालियाँ बजी थीं, उतनी देशभक्त जनरल माइल्स के अतिरिक्त और किसी के नाम पर नहीं बजीं। ये तालियाँ आनंद, आश्चर्य और उत्साह की उत्तेजना से ही बजी थीं.........। यह इस बात का प्रमाण है कि लोगों ने एक भूत-पूर्व दास के कार्य्यों और उद्योगों की उपयोगिता स्वीकार की है।"

बोस्टन के एक पत्र के संपादक ने लिखा था—

"हरवर्ड विश्वविद्यालय ने टस्केजी-विद्यालय के प्रिंसिपल को एम० ए० की आनरेरी डिग्री देकर, अपनी और उनकी, दोनों की प्रतिष्ठा बढ़ाई है। वाशिंगटन ने दक्षिण के मजदूरों को शिक्षित, सुयोग्य और विज्ञ बनाने में जो परिश्रम किया है उसके कारण वे हमारे राष्ट्र के बड़े बड़े अधिकारियों मे गिने जाने योग्य हुए हैं। जिस विश्वविद्यालय के सुपुत्रों मे ऐसे ऐसे सुयोग्य मनुष्यों के नाम हो, उसे इस बात का अभिमान होना चाहिए।.. .....वाशिंगटन महाशय को हबशी होने या दासत्व में जन्म लेने के कारण यह पदवी नहीं मिली है बल्कि उस योग्यता और दीन-वत्सलता के कारण मिली है जो उन्होंने दक्षिणी लोगों की उन्नति करने मे प्रदर्शित की है।"

बोस्टन के एक दूसरे पत्र ने लिखा था—

"एक हवशी को आनरेरी डिग्री देनेवाला हरवर्ड विश्व-विद्यालय सर्वप्रथम ही है। जो मनुष्य टस्केजी-विद्यालय के कार्य्य और इतिहास से परिचित है वह वाशिंगटन महाशय के धैर्य्य, उद्योग और व्यावहारिक ज्ञान की प्रशंसा किए बिना नहीं रह सकता। एक ऐसे भूतपूर्व दास को, जिसकी सेवा देश और जाति के लिये समान है, और जिसका मूल्य केवल भविष्य ही लगा सकता है, हरवर्ड विद्यालय ने इस प्रकार सम्मानित करके अच्छा ही किया है।"

न्यूयार्क टाइम्स के संवाददाता ने लिखा था—

"यों तो सभी के व्याख्यान लोगों ने बहुत पसंद किए थे, पर हवशी की वक्तृता का बहुत अधिक आदर हुआ था। उसका व्याख्यान समाप्त हो चुकने पर लगातार बहुत देर तक जोर से तालियाँ बजती रहीं।"

टस्केजी-विद्यालय स्थापित करने के समय वाशिंगटन ने मन ही मन दृढ़ निश्चय कर लिया था कि मैं इसे इतना अधिक उपयोगी बनाऊँगा कि जिसमे किसी न किसी दिन संयुक्त राज्य (United states) के सभापति भी उसे देखने आवें। इस निश्चय को उन्होने बहुत दिनों तक अपने हृदय मे ही गुप्त रखा था। और किसी पर उसे प्रकट नहीं किया था। नवंबर सन् १८९७ मे उन्होंने सुयोग पाकर इस संबंध में उद्योग आरंभ किया। उन्होंने सबसे पहले सभापति मैकिनले के मंत्रि-मंडल के सदस्य और कृषि-विभाग के मंत्री माननीय

जेम्स विलसन को अपने विद्यालय का निरीक्षण कराया। उन्होने कृषि आदि की शिक्षा के लिये स्लेटर-आर्मस्ट्रांग नामक एक विशाल भवन बनवाया था और उसके उद्घाटन के अवसर पर माननीय विलसन महाशय को एक व्याख्यान देने के लिये निमंत्रित किया था।

सन् १८९८ के अंत मे उन्होने सुना कि स्पेनिश अमेरिकन युद्ध की सफलता युक्त समाप्ति के उपलक्ष मे होनेवाले एक समारंभ मे सम्मिलित होने के लिये सभापति मैकिनले महाशय एटलांटा मे आनेवाले हैं। गत अठारह वर्षों से वे अपने सहयोगी अध्यापकों सहित अपने विद्यालय को जाति की यथेष्ट सेवा करने के योग्य बनाने के लिये कठिन परिश्रम कर रहे थे और उन्होने यह भी दृढ़ निश्चय कर लिया था कि जिस प्रकार होगा, मैं सभापति और उनके मंत्रि-मंडल से अपने विद्यालय का निरीक्षण कराऊँगा। सभापति के एटलांटा आने का समाचार सुनकर वे पहले वाशिंगटन नगर मे गए और वहाँ जाते ही सभापति महाशय के निवासस्थान "ह्वाइट हाउस" में पहुँचे। उस समय वहाँ बहुत से मनुष्यो की भीड़ लगी हुई थी, इसलिये उन्हे भय हुआ कि कदाचित् इस समय सभापति महाशय से भेंट न हो सके। तो भी वे किसी प्रकार उनके सेक्रेटरी मि० पोरटर से मिले और उन्होने अपना उद्देश्य कह सुनाया। मि० पोरटर ने कृपा कर उनका कार्ड सभापति महाशय के पास भेज दिया और शीघ्र ही सभापति

महाशय ने वाशिंगटन को भेट करने के लिये अपने पास बुलवा भेजा।

सभापति मैकिनले के पास नित्य बहुसंख्यक लोग, भिन्न भिन्न उद्देश्यों से, भेट करने के लिये आया करते थे। इसके अतिरिक्त उन्हे स्वयं भी बहुत अधिक कार्य्य रहता था। वाशिंगटन महाशय यह बात बिलकुल न समझ सके कि इतना सब कुछ होने पर भो प्रत्येक आगंतुक से भेंट करने के लिये वे सदा कितने शांत, धीर और प्रसन्न चित्त होकर प्रस्तुत रहते हैं। सबसे पहले सभापति महाशय ने टस्केजी के उपयोगी और देशहितकर कार्य्यों के लिये वाशिंगटन को धन्यवाद दिया। तदुपरांत वाशिंगटन ने इन्हे अपने आने का उद्देश्य कह सुनाया। उन्होंने यह बात भली भाँति समझा दी कि राष्ट्र के सर्वप्रधान अधिकारी के शुभागमन से विद्यालय के विद्यार्थी और अध्यापक मात्र ही उत्साहित न होगे बल्कि उससे समस्त जाति को विशेष लाभ पहुँचेगा। वे प्रसन्न तो अवश्य हो गए पर टस्केजी जाने के संबंध मे उन्हे कोई निश्चित वचन न दे सके। इसका मुख्य कारण यह था कि उस समय तक उनकी एटलांटा-यात्रा के संबंध मे सारी बाते निश्चिव नहो हो सकी थीं। इसलिये उन्होने वाशिंगटन से कह दिया कि आप कुछ सप्ताहो के उपरांत मुझे इस विषय का स्मरण दिलावे।

दूसरे मास के मध्य मे सभापति का एटलांटा आना दृढ़ रूप से निश्चित हो गया। इसलिये हमारे चरित-नायक

वाशिंगटन जाकर उनसे मिले। इस बार टस्केजी नगर के मि० हेयर नामक एक प्रधान गोरे अधिवासी स्वेच्छापूर्वक उनके उद्देश्य मे सहायता देने के लिये उनके साथ गए थे। उनकी इस दूसरी यात्रा से पूर्व ही दक्षिण के भिन्न भिन्न स्थानों मे कई भारी दंगे हो गए थे जिसके कारण देश में बहुत गड़बड़ी फैल गई थी और हबशी लोग बहुत दुःखी हो रहे थे। सभापति से मिलने पर वाशिंगटन को मालूम हुआ कि वे इन झगडों के कारण बहुत चिंतित हैं। यद्यपि उस समय बहुत से लोग सभापति महाशय से भेट करने के लिये आए हुए थे, तो भी उन्होंने वाशिंगटन को थोड़ी देर तक ठहरा लिया और उनके साथ देश और जाति के संबंध मे अनेक बातें की। इस बीच मे उन्होंने कई बार यह भी कहा कि मैं तुम्हारी जाति के प्रति केवल शब्दों द्वारा नहीं बल्कि कार्य्यों द्वारा अपनी सहानुभूति प्रकट करूँगा। उस अवसर पर वाशिंगटन ने कहा कि यदि आप अपने निश्चित मार्ग से लगभग डेढ़ सौ मील हटकर हबशियों के विद्यालय मे पदार्पण करें तो लोगों के हृदय में आशा और उत्साह का बहुत कुछ संचार हो सकता है। यह बात सभापति महाशय के मन में बैठ सी गई। उसी समय एटलांटा-निवासी एक गोरे सज्जन भी वहाँ पहुँच गए। सभापति ने उनसे भी टस्केजी जाने के विषय में सम्मति माँगी। उन्होंने तुरंत उत्तर दिया कि यह कार्य्य बहुत ही उपयुक्त होगा। इस पर वाशिंगटन के गोरे साथी ने भी जोर दिया।

अंत मे सभापति महाशय ने वाशिंगटन को वचन दे दिया कि मैं १६ दिसंबर के दिन विद्यालय मे आऊँगा।

जब लोगों को सभापति महाशय के विद्यालय में आने का समाचार मिला तब विद्यार्थी, अध्यापक और टस्केजी के समस्त निवासी बहुत प्रसन्न हुए। नगर के गोरे निवासी अपने अपने मकान सजाने लगे और सभापति की यथोचित अभ्यर्थना का प्रबंध करने के लिये विद्यालय के अधिकारी मिल-कर समितियाँ बनाने लगे। उसी समय वाशिंगटन को यह बात भी मालूम हो गई कि टस्केजी और उसके आस-पास के गोरे निवासियों का हमारे विद्यालय पर कितना अधिक प्रेम है। जिस समय सभापति के स्वागत की तैयारियाँ हो रही थीं उस समय उनके पास बहुत से लोग कार्य मे सहायता देने के लिये आया करते थे।

१६ दिसंबर को सबेरे टस्केजी मे जितनी अधिक भीड़ हुई उतनी पहले कभी नहीं हुई थी। सभापति महाशय के साथ उनकी पत्नी और समस्त मंत्रि-मंडल का आगमन हुआ था। अधिकांश मंत्री भी अपनी अपनी स्त्रियो या परिवार के लोगों को अपने साथ लाए थे। बड़े बड़े सैनिक जनरल भी उस अवसर पर वहाँ पधारे थे। समाचारपत्रों के संवाद-दाताओं का भी एक भारी दल वहाँ आया था। उन्हीं दिनों मांटगोमरी में अलबामा राज्य की लेजिस्लेटिव कौंसिल का अधिवेशन होनेवाला था, वह भी इसी कारण रुक गया और

कौंसिल के सब सदस्य टस्केजी आए। सभापति महाशय के दल के आने से पूर्व ही एटलांटा राज्य के गवर्नर, बड़े बड़े राजकर्म्मचारी और कौंसिल के सदस्य आ गए।

टस्केजी-निवासियों ने स्टेशन से विद्यालय तक का मार्ग बहुत भली भाँति सजाया था। समय कम लगने के विचार से यह प्रबंध किया गया था कि सभापति महाशय सरसरी तौर पर सब विद्यार्थियों को देख लें। प्रत्येक विद्यार्थी के हाथ में एक एक ऊख दिया गया था जिसके सिरे पर रुई की फूली हुई ढोढियाँ लगी थी। विद्यार्थियों के पीछे विद्यालय के भिन्न भिन्न भागो मे बने हुए पुराने और नए सामान घोड़ों, खच्चरो और बैलों पर लदे हुए थे। मक्खन आदि निकालने, जमीन जोतने और भोजन बनाने के नए और पुराने दोनों ढंग दिखलाए गए थे। विद्यार्थियो और इन सामानो को सभा-पति महाशय के सामने से होकर निकलने में डेढ़ घंटा लगा था।

विद्यार्थियो ने हाल ही मे एक नया विशाल गिरजा बनाया था। उसी मे सभापति महाशय की वक्तृता हुई थी। उन्होंने अन्यान्य बातो के साथ कहा था—

ऐसे आनंददायक अवसर पर आप लोगों से मिलना और आपके कार्यों को देखना बहुत ही समाधान-कारक है। टस्केजी-विद्यालय के उद्देश्य और विचार आदर्श हैं, और देश तथा विदेश में इसकी ख्याति बहुत अधिक है और बराबर

बढ़ती जाती है। विद्यार्थियों को प्रतिष्ठित और उपयुक्त जीवन बिताने की शिक्षा देने और जिस जाति के लिये यह विद्यालय स्थापित हुआ है उसे उन्नत करने के काम में सहायता देने-वालों को मैं बधाई देता हूँ।

बिना बुकर टी० वाशिंगटन की बुद्धिमत्ता और दृढ़ उद्योग की प्रशंसा किए टस्केजी-विद्यालय की चर्चा असंभव है। इस महत् कार्य्य का आरंभ उन्हीं ने किया है और इसके लिये वे धन्यवाद के पात्र हैं। उन्हीं के उत्साह और साहस से विद्यालय की इतनी उन्नति हुई है और वह पूर्णता की इस उच्च स्थिति को पहुँचा है। उन्होंने अपनी जाति के एक बड़े नेता होने की ख्याति प्राप्त की है और देश तथा विदेश में, उत्तम अध्यापक, भारी वक्ता और सच्चे परोपकारी होने के कारण उनकी बहुत अधिक प्रतिष्ठा है।

जल-सेना विभाग के मंत्री माननीय जान डी० लाग ने अपनी वक्तृता में कहा था—

मैं आज व्याख्यान नहीं दे सकता। दोनों जातियों के संबंध में आशा, प्रशंसा और अभिमान से मेरा हृदय परिपूर्ण हो रहा है। मैं कृतज्ञतापूर्वक आपके कामों की प्रशंसा करता हूँ और भविष्य में आपकी उन्नति और आपके सम्मुख उपस्थित प्रश्न के निराकरण के विषय में मुझे सदा दृढ़-विश्वास रहेगा।

मेरी समझ में आपके प्रश्न का निराकरण हो गया है। आज हम लोगों के सामने जो चित्र उपस्थित है वह वाशिंगटन

(जार्ज) और लिंकन के चित्रों के बराबर रखने और भावी पीढ़ी के मनन करने योग्य है। समाचारपत्रों को उचित है कि वे इस सुंदर चित्र को समस्त देश में फैलावें। उस चित्र में यह दृश्य है—संयुक्त राज्य के सभापति इस मंच पर खड़े हैं, उनके एक ओर अलबामा के गवर्नर और दूसरी ओर त्रिमूर्त्ति की पूर्त्ति करनेवाले, पुरानी दास-जाति के प्रतिनिधि और टस्केजी-विद्यालय के हवशी अध्यक्ष खड़े हैं।

ईश्वर उस सभापति का कल्याण करे जिसके आश्रय मे अमेरिकन लोगों के सामने यह दृश्य उपस्थित है। ईश्वर उस अलबामा राज्य का कल्याण करे जो यह बतला रहा है कि इस प्रश्न का निराकरण वह स्वयं कर लेगा। ईश्वर उस वक्ता, परोपकारी और जगत्पति के शिष्य बुकर टी० वाशिंगटन का कल्याण करे। यदि वह जगत्पति स्वयं इस संसार मे आता तो वह भी यही कार्य्य करता जो कि वाशिंगटन कर रहे हैं।

पोस्ट-मास्टर जनरल स्मिथ ने अपने व्याख्यान के अंत में कहा था—

इधर कई दिनों मे हम लोगों ने बहुत से दृश्य देखे हैं। हमने दक्षिण के बड़े और प्रधान नगरो का सौंदर्य्य और वैभव देखा, वीर सैनिकों का जुलूस देखा, और फूलों से सजी हुई फौजों की कवायद देखी। पर मुझे विश्वास है कि मेरे मित्र-गण मेरे इस कथन में सहमत होंगे कि आज प्रातः-काल हम लोगों ने यहाँ जो दृश्य देखा है उससे अधिक प्रभाव-

शाली, उत्साहवर्द्धक और भविष्य के संबंध मे अच्छी आशा दिलानेवाला और कोई दृश्य हम लोगों ने नहीं देखा।

सभापति महाशय के टस्केजी से चले जाने के कई दिनों बाद वाशिंगटन महाशय को सभापति के सेक्रेटरी मिस्टर पोरटर का एक पत्र मिला था, जिसमे अन्यान्य बातो के अतिरिक्त यह भी लिखा था—"आपका सारा कार्य्य-क्रम बहुत ही अच्छी तरह पूरा हुआ था और प्रत्येक दर्शक उससे पूरी तरह संतुष्ट और प्रसन्न हुआ था"। ❀ ❀ ❀ ❀ सभापति महाशय तथा मंत्रि-मंडल ने आपके कार्य्यों का जो आदर किया है वह बहुत ही उचित है और आपके विद्यालय की भावी उन्नति का सूचक है। अंत में मैं यह कहे बिना नहीं रह सकता कि सब कार्यों में आपने जो नम्रता दिखलाई थी उससे हमारी मंडली के सभी लोग बहुत ही प्रसन्न हुए थे।

❀ ❀ ❀ ❀ ❀ ❀ ❀

आज से प्राय: सत्ताईस वर्ष पहले वाशिगटन महाशय ने टस्केजी की एक टूटी झोपड़ी मे केवल एक शिक्षक और तीस विद्यार्थियों से जो विद्यालय खोला था, उसके अधिकार में इस समय तेईस सौ एकड़ भूमि है जिसमें से सात सौ एकड़ मे वहाँ के विद्यार्थी खेती करते हैं। इस समय विद्यालय मे छोटे बड़े सब मिलाकर चालीस भवन हैं जिनमे से चार भवनों को छोड़कर शेष सभी भवन विद्यार्थियों के ही बनाए हुए हैं।

वहाँ विद्यार्थियों को बिलकुल नए ढंग से इमारतें बनाना और खेती करना सिखाया जाता है।

विद्या और धर्म्म की शिक्षा के अतिरिक्त वहाँ अट्ठाईस विभाग ऐसे हैं जिनमें विद्यार्थियों को भिन्न भिन्न प्रकार के शिल्प आदि सिखाए जाते हैं। इसलिये विद्यालय से निकलते ही उन लोगों को तुरंत काम मिल जाता है। दक्षिण के अनेक गोरे और हबशी लोग पत्र लिखकर विद्यालय से उसके ग्रैजुएट माँगा करते हैं, पर विद्यालय उसमें से आधे से अधिक प्रार्थियों की इच्छा पूरी नहीं कर सकता। इसके अतिरिक्त विद्यालय में शिक्षा पाने के लिये जितने विद्यार्थियों के आवेदन-पत्र आते हैं, धन और स्थान के अभाव के कारण उनमें से केवल आधे लोगों की प्रार्थना ही स्वीकार की जा सकती है।

शिल्प संबंधी शिक्षा मे विद्यालय के अधिकारी तीन बातों का विशेष ध्यान रखते हैं। पहली बात तो यह कि उन्हे देश की स्थिति और आवश्यकता के अनुसार शिक्षा दी जाती है, अर्थात् जो बातें बहुत ही आवश्यक और उपयोगी होती हैं, विद्यार्थियों को उन्हीं की शिक्षा दी जाती है। दूसरे, प्रत्येक विद्यार्थी को कार्य्य-कुशल, चतुर और शुद्धाचरण बनाने का उद्योग किया जाता है जिसमें वह अपना और दूसरों का भली भाँति निर्वाह कर सके। तीसरे प्रत्येक विद्यार्थी को यह सिखलाया जाता है कि परिश्रम करना बहुत ही श्रेष्ठ है, किसी को परिश्रम से भागना न चाहिए बल्कि उससे प्रेम करना

चाहिए। बालिकाओं को गृहस्थी के कामो के अतिरिक्त कृषि आदि की शिक्षा भी दी जाती है। प्रत्येक बालिका बाग लगाना, फल उपजाना, दही, मक्खन आदि बनाना, शहद के लिये मक्खियाँ पालना और बढ़िया मुरगे और वत्तक आदि पैदा करना सीखती है।

यद्यपि टस्केजी विद्यालय किसी विशेष धर्म्म वा संप्रदाय का नहीं है तो भी वहाँ बाइबिल की शिक्षा के लिये एक अलग विभाग है जिसमें उपदेश आदि कार्यों के लिये विद्यार्थी तैयार किए जाते हैं। इन विद्यार्थियों को भी नित्य आधे दिन किसी न किसी शिल्प-विभाग मे अवश्य काम करना पड़ता है।

विद्यालय में इस समय तीन लाख डालर की संपत्ति है। इसके अतिरिक्त उसे दान मिली हुई संपत्तियों का मूल्य दो लाख पंद्रह हजार डालर है। नए भवन बनाने तथा दूसरे खर्चों के लिये अभी इतने ही धन की और भी आवश्यकता है। विद्यालय का वार्षिक व्यय लगभग अस्सी हजार डालर है। इसका अधिकांश वाशिंगटन महाशय को अपने जीवन-काल में घर घर घूमकर संग्रह करना पड़ता था। विद्यालय का कोई अंश रेहन नहीं है और उसके प्रबंध के लिये ट्रस्टियों का एक बोर्ड नियत है। इस समय वहाँ अमेरिका के सत्ताईस राज्यों, तथा अफ्रिका, क्यूबा और जमायका आदि विदेशों से आए हुए ग्यारह सौ विद्यार्थियों को शिक्षा दी जाती है। शिक्षकों और अधिकारियों की संख्या छियासी है। शिक्षकों

के साथ उनका परिवार भी विद्यालय मे ही रहता है। विद्यालय-स्थल मे सब मिलाकर कोई चौदह सौ आदमी रहते हैं।

एक साधारण प्रश्न उठता है कि इतने अधिक आदमी किस प्रकार साथ रहते हैं और किसी प्रकार का उपद्रव नहीं करते? बात यह है कि एक तो वहाँ के स्त्री-पुरुष बड़े श्रद्धालु होते हैं और दूसरे सदा कार्य्य में लीन रहते हैं। नीचे दिए हुए कार्य-क्रम से यह बात स्पष्ट हो जाती है—

सवेरे पाँच बजे सोकर उठने की घंटी बजती है। प्रातः-क्रिया से निवृत्त होकर लोग ६ बजे जलपान करने बैठते हैं और ६—२० पर जलपान समाप्त हो जाता है। आध घंटे मे सब कमरे साफ किए जाते हैं। उसके बाद ७। तक काम होता है। इसके उपरांत ८—२० तक सवेरे की पढ़ाई होती है। तदनंतर सब विद्यार्थियों को एक साथ खड़ा करके उनके वस्त्र आदि का निरीक्षण होता है। ८—४० पर गिरजा मे प्रार्थना होती है और ८—५५ से ९ बजे तक पाँच मिनट मे लोग दैनिक समाचार पढ़ते हैं। ९ से १२ बजे तक क्लास का काम होता है। १२-५५ बजे भोजन, १ बजे काम की घंटी, और १॥ बजे फिर क्लास का कार्य्य आरंभ होता है, जो २॥। बजे तक होता रहता है। ५॥ बजे सब कार्य समाप्त होने की घंटी होती है। ६ बजे संध्या का भोजन, ७। बजे ईश्वर-प्रार्थना, और ७॥ बजे से ८॥। तक रात की पढ़ाई होती है। इसके उपरांत साढे नौ बजे सब लोग सो जाते हैं।

अधिकारी सदा इस बात पर ध्यान रखते हैं कि विद्यालय का महत्त्व उसके ग्रैजुएटो से जाना जाता है। इस समय टस्केजी-विद्यालय मे शिक्षा पाए हुए तीन हजार से अधिक स्त्री-पुरुष दक्षिण के भिन्न भिन्न भागों मे काम करते हैं। वे लोग सर्व-साधारण के लिये आदर्श रूप होते हैं और उन्हे आर्थिक, नैतिक तथा धार्मिक उन्नति करने का मार्ग दिखलाते हैं। उन लोगों में व्यावहारिक ज्ञान और आत्म-संयम यथेष्ट होता है जिसके कारण गोरों और हबशियों का संबंध उत्तम और दृढ़ होता है और गोरे समझते हैं कि हबशियों को शिक्षा देना बहुत ही उपयुक्त है। इसके अतिरिक्त श्रीमती वाशिगटन की स्थापित की हुई मातृ-सभा तथा उनके अन्य कामों का भी बहुत अच्छा प्रभाव पड़ता है।

टस्केजी-विद्यालय के विद्यार्थी जहाँ जाते हैं वहीं भूमि के क्रय-विक्रय, मितव्यय, शिक्षा, नैतिक आचरण आदि मे विलक्षण परिवर्तन होने लगता है। उन स्त्रियों और पुरुषो के कारण सारे समाज मे बड़ी भारी क्रांति हो जाती है।

सत्रह वर्ष पूर्व हमारे चरित्र-नायक ने टस्केजी मे नीगरो कानफरेंस की नीव डाली थी। यह कानफरेंस अब तक वहाँ प्रतिवर्ष होती है जिसमे प्रायः आठ नौ सौ प्रतिनिधि आते हैं। इस कानफरेंस में सब प्रकार की उन्नति के उपायों पर विचार होता है। इससे अनेक प्रांतीय कानफरेंसों की उत्पत्ति हुई है जो सबकी सब इसी प्रकार के कार्य करती हैं। एक बार

एक प्रतिनिधि ने सूचना दी थी कि इन सम्मेलनों का प्रभाव इतना अधिक पड़ा है कि दस परिवारों ने धन-संग्रह करके नए मकान मोल लिये। नीगरो कानफरेंस के दूसरे दिन "कामकाजियों की सभा" (Workers, conference) होती है। इसमे दक्षिण के बड़े बड़े विद्यालयों के शिक्षक और शिक्षा-विभाग के अधिकारी सम्मिलित होते हैं। नीगरो कानफरेस मे उन लोगों को हबशियों की वास्तविक स्थिति जानने का बहुत अच्छा अवसर मिलता है।

सन् १९०० की ग्रीष्म ऋतु में मि० फारच्यून आदि अनेक सज्जनो की सहायता से वाशिंगटन ने 'नेशनल नीगरो बिजनेस लीग' स्थापित की थी जिसका पहला अधिवेशन बोस्टन नगर मे हुआ था। इस लीग मे भिन्न भिन्न राज्यो के बड़े बड़े व्यापारी योग देते हैं। इससे और भी कई प्रांतीय लीगों की उत्पत्ति हुई है।

विद्यालय का प्रबंध करने तथा उसके निर्वाह के लिये घर घर घूमकर चंदा संग्रह करने के अतिरिक्त वाशिंगटन महाशय को निमंत्रित होकर दक्षिण के गोरो और हबशियों के समक्ष वक्तृता देने के लिये भी जाना पड़ता था। एक बार वे वफेलो नामक नगर में संध्या समय पहुँचे। वहाँ पहुँचते ही उन्हे एक भोज में जाना पड़ा था। इसके उपरांत वे एक दरबार मे गए जहाँ भिन्न भिन्न दक्षिणी राज्यों के दो सौ शिक्षकों और अध्यापकों ने उनका स्वागत किया था। इसके उपरांत वे गाड़ी

पर सवार होकर म्यूजिक हाल में गए जहाँ उन्होंने डेढ़ घंटे में पाँच हजार श्रोताओं के सामने दो व्याख्यान दिए थे। तद-नतर कई प्रतिष्ठित हबशी उनका आदर सत्कार करने के लिये उन्हें अपने यहाँ ले गए थे।

सन् १९११ में वे एक बार हबशियों द्वारा निमंत्रित हो-कर रिचमंड नामक नगर मे गए थे। यह रिचमंड वही नगर है, जहाँ पचास वर्ष पूर्व, उन्हें द्रव्य और स्थान के अभाव के कारण सड़क की पटरी पर सोना पड़ा था। उस अवसर पर उन्होंने वहाँ की एकेडमी आफ म्यूजिक में गोरों और हबशियों के समक्ष एक व्याख्यान दिया था। उस बार उक्त हाल हब-शियों को पहले पहल ही मिला था। सिटी कौंसिल और राज्य की लेजिस्लेचर ने एक प्रस्ताव पास करके निश्चय किया था कि उनके सब सभ्य वाशिंगटन महाशय का व्याख्यान सुनने जायँ।

इन वक्तृताओं के अतिरिक्त, वे दोनों जातियों के कल्याण से संबंध रखनेवाले विषयों पर समाचारपत्रों में लेख भी लिखते थे। उनके लेखों का बहुत अच्छा प्रभाव पड़ता था और लोग उनकी सम्मति का बहुत आदर करते थे।

यद्यपि ऊपरी या अस्थायी चिह्नों के कारण और लोग यह बात न स्वीकार करें, तथापि वाशिंगटन का दृढ़ विश्वास था कि हमारी जाति के लोग शीघ्र ही यथेष्ट उन्नति कर लेंगे। मानवी प्रकृति का यह एक सनातन और सार्वत्रिक नियम है कि

अंत में वह गुणों को अवश्य परख लेती है। उनका विश्वास था कि दक्षिण के गोरे और हवशी दोनों ही जाति-द्वेष को नष्ट करने का प्रयत्न कर रहे हैं, और उनके इस प्रयत्न में समस्त संसार की सहानुभूति और सहायता होनी चाहिए।

१८—मृत्यु

जिन महात्मा बुकर टी० वाशिंगटन ने अमेरिका के असभ्य हवशियों की एक अज्ञात जाति की इतनी उन्नति करके उसे एक महान् जाति मे परिणत कर दिया था, जिनके स्थापित टस्केजी-विद्यालय को लोगों ने आदर्श समझकर उसके ढंग पर वैसे ही और अनेक विद्यालय देश के भिन्न भिन्न भागों मे स्थापित किए थे, जिनकी कृपा से सैकड़ों हजारों हवशी डाक्टर, वकील, वैरिस्टर, शिक्षक और धर्माधिकारी वनकर अपनी जाति के हित-साधन मे लग गये थे, जिन्होने गोरों के अपमान से अपनी जाति की वहुत वडी रक्षा की थी और उसके मार्ग की रुकावटों को दूर किया था, जिन्होंने कोरी मानसिक शिक्षा की अपेक्षा शारीरिक, नैतिक और व्यावहारिक शिक्षा पर सवसे अधिक जोर दिया था उनकी मृत्यु १७ नवंवर सन् १९१५ को हो गई। उनकी मृत्यु से केवल हवशी जाति को ही भारी धक्का नहीं पहुँचा, वल्कि समस्त संसार के शिक्षित संसार ने अपना एक उज्ज्वल और वहुमूल्य रत्न खो दिया। यदि वाशिगटन महाशय का जन्म न हुआ होता

तो कदाचित् हवशी जाति अब तक बहुत ही हीन दशा में होती और सैकड़ों वर्षों तक इतनी उन्नति न कर सकती। वाशिंगटन महाशय ने अनेक बड़ी बड़ी कठिनाइयों और विघ्न बाधाओं को दूर करके अपनी जाति को आगे बढ़ाया था और उसे अनेक प्रकार के राजनैतिक तथा दूसरे अधिकार प्राप्त कराए थे। यद्यपि अब भी अमेरिका के हवशी अपने प्राप्त अधिकारों का भोग नहीं करने पाते, तथापि वे पहले की तरह हेय और घृणित नहीं समझे जाते। जो हो, पर इसमे संदेह नहीं कि वाशिंगटन एक ऐसे नर-रत्न थे, जिनके जन्म से प्रत्येक जाति अपने आपको कृतकृत्य और धन्य समझ सकती है। वाशिंगटन की मृत्यु के उपरांत टस्केजी विद्यालय में उनका स्थान मेजर रावर्ट रसल मोटर को मिला है जो अपना कार्य्य वहुत ही योग्यता तथा दक्षतापूर्वक कर रहे हैं।

काशी नागरीप्रचारिणी सभा की पुस्तकें

मनोरंजन पुस्तकमाला

इस पुस्तकमाला में निम्नलिखित पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं—

(१) आदर्श जीवन—लेखक रामचंद्र शुक्ल।

(२) आत्मोद्धार—लेखक रामचंद्र वर्म्मा।

(३) गुरु गोविंदसिंह—लेखक वेणीप्रसाद।

(४) आदर्श हिंदू १ भाग—लेखक मेहता लज्जाराम शर्म्मा।

(५) " २ " " " "

(६) " ३ " " " "

(७) राणा जंगबहादुर—लेखक जगन्मोहन वर्म्मा।

(८) भीष्म पितामह—लेखक चतुर्वेदी द्वारकाप्रसाद शर्म्मा।

(९) जीवन के आनंद—लेखक गणपति जानकीराम दूबे बी० ए०।

(१०) भौतिक-विज्ञान—लेखक संपूर्णानंद बी० एस-सी०, एल० टी०।

---

(११) लालचीन—लेखक व्रजनंदनसहाय ।

(१२) कबीरवचनावली—संग्रहकर्त्ता अयोध्यासिंह उपाध्याय।

(१३) महादेव गोविंद रानडे—लेखक रामनारायण मिश्र बी० ए० ।

(१४) बुद्धदेव—लेखक जगन्मोहन वर्म्मा ।

(१५) मितव्यय—लेखक रामचंद्र वर्म्मा ।

(१६) सिक्खों का उत्थान और पतन—लेखक नंदकुमार-देव शर्म्मा ।

(१७) वीरमणि—लेखक श्यामविहारी मिश्र एम० ए० और शुकदेवविहारी मिश्र बी० ए० ।

(१८) नेपोलियन वोनापार्ट—लेखक राधामोहन गोकुलजी ।

(१९) शासन-पद्धति—लेखक प्राणनाथ विद्यालंकार ।

(२०) हिन्दुस्तान भाग १—लेखक दयाचंद्र गोयलीय बी० ए० ।

(२१) हिन्दुस्तान भाग २—लेखक ,,

(२२) महर्षि सुकरात—लेखक वेणीप्रसाद ।

(२३) ज्योतिर्विनोद—लेखक संपूर्णानंद बी० एस-सी०, एल० टी० ।

---

(२४) आत्मशिक्षण—लेखक श्यामविहारी मिश्र एम० ए० और शुकदेवविहारी मिश्र बी० ए०।

(२५) सुंदरसार—संग्रहकर्ता पुरोहित हरिनारायण शर्म्मा बी० ए०।

(२६) जर्मनी का विकास भाग १—लेखक सूर्यकुमार वर्मा।

(२७) ,, भाग २—लेखक ,,

(२८) कृषि-कौमुदी—लेखक दुर्गाप्रसादसिंह।

(२९) कर्त्तव्यशास्त्र—लेखक गुलाबराय एम० ए०, एल-एल० बी०।

(३०) मुसलमानी राज्य का इतिहास भाग १—लेखक मन्नन द्विवेदी बी० ए०।

(३१) मुसलमानी राज्य का इतिहास भाग २— ,,

(३२) रणजीतसिंह—लेखक वेणीप्रसाद।

(३३) विश्व-प्रपंच १—लेखक रामचंद्र शुक्ल।

(३४) ,, २—लेखक ,,

(३५) अहिल्याबाई—लेखक गोविंदराम केशवराम जोशी।

(३६) रामचंद्रिका—संकलनकर्त्ता भगवानदीन।

---

(३७) ऐतिहासिक कहानियाँ—लेखक द्वारकाप्रसाद चतुर्वेदी।

(३८) हिंदी निबंधमाला भाग १ } संग्रहकर्त्ता श्यामसुंदर-

(३९) हिंदी निबंधमाला भाग २ } दास बी० ए०।

(४०) सूरसुधा—संपादक मिश्रबंधु।

(४१) कर्त्तव्य—लेखक रामचंद्र वर्म्मा।

(४२) संक्षिप्त राम-स्वयंवर—लेखक ब्रजरत्नदास।

(४३) शिशु-पालन—लेखक डाक्टर मुकुन्दस्वरूप वर्म्मा।

(४४) शाही दृश्य—लेखक मक्खनलाल गुप्त गर्ग।

(४५) पुरुषार्थ—लेखक जगन्मोहन वर्मा।

(४६) तर्कशास्त्र पहला भाग—लेखक गुलाबराय एम० ए०, एल-एल० बी०।

(४७) तर्कशास्त्र दूसरा भाग— ,, ,,

पुस्तकें मिलने का पता—

मैनेजर इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग